Московский союз литераторов
मस्को साहित्यकार संघ

ДВЕ СТОЛИЦЫ: МОСКВА — КАТМАНДУ

दुई राजधानीः मस्को – काठमाडौं

Московский союз литераторов
मस्को साहित्यकार संघ

Москва
2020 г. * 2077 ВС (Викрхам-самбат)
मस्को
ई.सं. २०२० * वि.सं. २०७७

ISBN 978-5-6043226-3-5

УДК 821.161.1=8
ББК 84(2=411.2)6
Д23

ДВЕ СТОЛИЦЫ: МОСКВА — КАТМАНДУ
/ сост. и ред. Валерий Галечьян, Кришна Пракаш Шрестха — М.: Московский союз литераторов, 2020. — 256 с.
ISBN 978-5-6043226-3-5

दुई राजधानी: मस्को – काठमाडौं
सङ्कलन र सम्पादन. भालेरी गालेच्यान, कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ,
मस्को साहित्यकार संघ, मस्को, वि.सं. २०७७ – पृ. २५६
ISBN 978-5-6043226-3-5

© авторы, тексты, переводы, 2020 г.
© В. Галечьян, К. П. Шрестха, составление, 2020 г.
© К. П. Шрестха, перевод, 2020 г.
© Т. Виноградова, дизайн, макет, верстка, фото, 2020 г.
© А. Алмов, К. Ведигер, А. Упадхьяя, фото, 2020 г.

© स्रष्टा, रचना, अनुवाद, वि.सं. २०७७
© भा. गालेच्यान, कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ, सङ्कलन, वि.सं. २०७७
© कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ, अनुवाद, वि.सं. २०७७
© ता. भिनोग्रादोभा, सज्जा, डिजाइन, विन्यास, वि.सं. २०७७
© अ.अल्मोभ, क.भेदितेर, अनन्त उपाध्याय, फोटो, वि.सं. २०७७

ЭКСПОЦЕНТР

ПРОЕКТ «ДВЕ СТОЛИЦЫ»

В города больших возможностей съезжаются самые активные и деятельные люди со всей страны и, сливаясь с коренными жителями, формируют новую, передовую для государства культурную среду. Ее особенности лучше всего передаются через художественное творчество жителей столиц, инструментом которого выступает родной язык. Острый взгляд художника подмечает мельчайшие черточки быта городов, жизни их обитателей. Расширение и объединение культурных пространств формирует интернациональность восприятия, сближая народы.

В настоящую книгу-билингву вошли произведения различных жанров. Тексты даны в параллельном переводе. Москвичи пишут о Москве, пластах ее жизни, а жители Катманду характеризуют свою столицу. Предусматриваются совместные выступления авторов сборника в этих двух городах. Возможность читать тексты и слушать писателей и поэтов как на русском, так и на «непали» позволяет глубже проникать в их творчество.

Катманду более чем в два раза древнее Москвы, но проживает в нем в 10 раз меньше людей. Города не сопоставимы и по топонимике, архитектуре, обычаям. А применительно к нашему сборнику можно говорить и о различии в составе авторов. Если российская сторона представлена большей частью писательницами и поэтессами, то в непальском разделе лишь Прахба Ачарья и Банира Гири сияют в мужском окружении.

Главная общая тема, волнующая авторов, — изменение облика городов и человеческих отношений в стремительно меняющемся мире. И те, и другие озабочены сохранением исторического облика своих столиц и традиционных человеческих

परियोजना “दुई राजधानी”

प्रशस्त सम्भावनाहरू भएका सहरहरूमा देशभरिकै सबैभन्दा क्रियाशील र सकृय मानिसहरू पुग्दछन् र रैथाने वासिन्दाहरूसित घुलमिल भई राज्यकै निम्ति नयाँ र अग्रगामी सांस्कृतिक परिवेशको सिर्जना गर्दछन्। त्यसको विशेषता राजधानीवासीहरूको साहित्यिक सिर्जनामार्फत् नै राम्रोसित सम्प्रेषित हुन्छ र यसको संवाहकको रूपमा मातृभाषाले प्रमुख साधनको भूमिका निर्वाह गर्दछ। स्रष्टाको तीक्ष्ण दृष्टिले सहरहरूको जीवनपद्धति र त्यहाँका वासिन्दाहरूको रहनसहनको मसिनोभन्दा मसिनो रूपरेखा पनि ठम्याइहाल्दछ। सांस्कृतिक परिवेशको विस्तार र सम्मिश्रणबाट जनताहरूबिच सन्निकटता र अन्तर्राष्ट्रियताको पनि निरूपण हुन्छ।

यस द्विभाषिक पुस्तकमा विभिन्न विधाका साहित्यक कृतिहरू समाविष्ट छन्। समानान्तर अनुवादमा ती कृतिहरू प्रस्तुत गरिएका छन्। मस्कोवासीहरूले मस्कोकै विषयवस्तुमा त्यसका वासिन्दाहरूको जीवनका तरेलीहरू चित्रित गरेका छन् भने काठमाडौंवासीहरूले आफ्नो राजधानीको चित्र उतारेका छन्। सङ्कलनमा समेटिएका स्रष्टाहरूबाट यी दुवै राजधानीहरूमा संयुक्त रूपले विचार प्रवाहित गर्ने जमर्को भएको छ। यस प्रकारले रूसी भाषाका साथै नेपाली भाषामा पनि लेखक र कविहरूको कृति पढ्ने र स्रष्टाहरूका कृतित्वको गहिरिएर मनन गर्ने सम्भावना प्राप्त भएको छ।

मस्कोभन्दा काठमाडौं झण्डै दुईगुनाभन्दा बढी प्राचीन सहर हो, तर त्यसमा दशगुना कम मानिसहरूको बसोवास छ। यी दुवै राजधानीहरूको भौगोलिक संरचना, वास्तुकला, रहनसहन समान छैन। प्रस्तुत सङ्कलनको सन्दर्भमा भन्ने हो भने स्रष्टाहरूको समावेशितामा विभिन्नताको बारेमा चर्चा गर्न सकिन्छ। रूसी पक्षबाट अधिकांश लेखिका र कवयित्रीहरूको प्रतिनिधित्व छ भने नेपाली पक्षबाट पुरुष साहित्यकारहरूको माझमा दुई नारी प्रतिभा बानिरा गिरी र प्रभा आचार्यको मात्र चहक देखिन्छ।

द्रुत गतिले परिवर्तित विश्वमा सहरहरूको रूप र मानव सम्बन्धमा परिवर्तन नै स्रष्टाहरूलाई चिन्तित तुल्याउने प्रमुख साझा विषय हो। दुवै राजधानीवासी

ценностей. Но если москвички: Татьяна Виноградова, Татьяна Михайловская, Лариса Черкашина ностальгируют по ушедшему, не представляя возможным возврат потерянного, то непальские авторы, как Тедж Пракаш Шрестха, до сих пор не могут пережить потрясения, связанного с землетрясением 2015 года и мечтают о скорейшем завершении реконструкции и возврате исторического облика города. Конечно, непальские писатели переживают не только о своей столице, само это трагическое событие не изглаживается из их памяти, что видно в их произведениях. Вместе с тем, Бал Гопал Шрестха, Динеш Адхикари, как и многие московские авторы, не концентрируются на событиях сегодняшнего дня, поднимая проблемы, связанные с общественными изменениями.

Внимательное прочтение представленных в книге текстов позволяет увидеть не только различия, но и общую гуманитарную направленность культур. Это имеет особое значение в условиях стремления отдельных стран и сообществ к самоизоляции. Расширение проекта, вовлечение в него поэтов и писателей столиц других стран послужит делу культурного роста и развития человечества, понимания нашей общности и единства на планете — несмотря на все противоречия, раздирающие современный мир. Невозможно переоценить значение культур городов-столиц в этом процессе, ведь не случайно их имена в политическом лексиконе зачастую используют для обозначения целых стран.

В завершение хотелось бы поблагодарить моего друга Кришну Пракаша Штрестху за огромную работу по отбору и переводу произведений национальных авторов, позволившую не только показать жизнь Катманду, но и дать картину современной непальской литературы.

Валерий Галечьян,
председатель Московского союза литераторов

स्रष्टाहरू आफ्नो सहरको ऐतिहासिक आकृति र परम्परागत मानव मूल्यमान्यताको संरक्षणप्रति चिन्तित छन् । मस्कोवासी स्रष्टा ताच्याना भिनोग्रादोभा, ताच्याना मिखाइलोभ्स्काया, लारिसा चेर्काशिनालाई फर्काउनै नसकिने गरी विलुप्त भएको अतीतको पिरलो छ भने तेजप्रकाश श्रेष्ठझैं नेपाली स्रष्टाहरूले अद्यापि सन् २०१५ को महाभूकम्पको विभीषिका बिर्सन सकेका छैनन् र छिटोभन्दा छिटो पुनर्निर्माण कार्य सम्पन्न भई सहरको ऐतिहासिक रूप देख्न लालायित छन् । निसन्देह नेपाली स्रष्टाहरू आफ्नो राजधानीप्रति मात्र चिन्तित छैनन्, तर यस दैवी प्रकोपको वीभत्सता उनीहरूको स्मृतिपटलमा अमिट रहन गएको छ । उनीहरूको कृतिबाट यसको बोध हुन्छ । यसका साथै मस्कोवासी स्रष्टाहरूझैं बालगोपाल श्रेष्ठ, दिनेश अधिकारीले वर्तमान घटनाहरूमा मात्र संकेन्द्रित नरही सामाजिक परिवर्तनसित सम्बन्धित समस्याहरूको पनि चर्चा गरेका छन् ।

प्रस्तुत सङ्कलनमा सङ्ग्रहित कृतिहरू ध्यानपूर्वक पढ्दा केवल विभिन्नता मात्र होइन कि मानवतावादी संस्कारको साझा प्रवृत्ति पनि छर्लङ्गै देख्न सकिन्छ । कतिपय देशहरू र समुदायहरूको पृथकतावादी प्रयासको परिप्रेक्ष्यमा यसको विशेष महत्त्व हुन्छ । यस परियोजनाको विस्तार र यसमा अन्य देशका राजधानीहरूका लेखक-कविहरूको सहभागिताबाट मानवजातिकै सांस्कृतिक अभिवृद्धि तथा विकास कार्यमा टेवा पुग्नेछ र आधुनिक संसारलाई थिल्थिलो पार्ने समग्र विरोधाभास कायम हुँदाहुँदै पनि पृथ्वीमा हाम्रो साझापन तथा एकत्वको अनुबोध गर्नमा समेत यसबाट सहयोग हुनेछ । यस प्रक्रियामा राजधानी-नगरहरूको संस्कृतिको कति महत्त्व हुन्छ भन्ने मूल्याङ्कन गर्नु असम्भव छ । यसै कारण त राजनीतिक शब्दकोशमा राजधानीको नाम नै प्रायशः सम्पूर्ण देशकै पर्यायवाची बन्न पुगेको हुन्छ ।

अन्त्यमा राष्ट्रीय स्रष्टाहरूको चयन र तिनका कृतिहरूको अनुवादका लागि मेरा मित्र कृष्णप्रकाश श्रेष्ठप्रति धन्यवाद व्यक्त गर्न चाहन्छु । नेपाली स्रष्टाहरूको कृतिबाट काठमाडौंको जनजीवनको झलक मात्र

दृष्टिगोचर हुने नभई आधुनिक नेपाली साहित्यकै चित्रात्मक परिचय प्राप्त गर्ने सम्भावना पाइएको छ ।

भालेरी गालेच्यान
अध्यक्ष
मस्को साहित्यकार संघ

एउटै बट्टामा दुई राजधानी

मेरा रूसी मित्र भालेरी गालेच्यानले 'दुई राजधानी' परियोजनालाई साकार तुल्याउन काम थाल्ने प्रस्ताव ल्याउँदा मैले सहर्ष स्वीकार गरिहालें। रूस र नेपाल दुवै देशका राजकीय भाषाहरूमा हाम्रा दुवै देशका राजधानीहरूबारे आधुनिक साहित्यिक कृतिहरूको पुस्तक प्रकाशन परियोजनाको मूल तात्पर्य थियो। काठमाडौंबारे नेपाली स्रष्टाहरूका कृतिहरूको सङ्कलन र रूसी भाषामा तिनको अनुवादका साथै मस्कोबारे रसियाली स्रष्टाहरूका कृतिहरूको नेपालीमा अनुवाद तयार पार्नु मेरो कार्यभार थियो। भावी पुस्तकको आकारप्रकार तथा प्रकाशनसम्बन्धी मुख्य बुँदाहरू स्पष्ट भएपछि मैले काम थालिहालें। रूसी भाषा जान्ने आफ्ना नेपाली मित्रहरूलाई मैले सहभागिताको लागि आह्वान गरें।

तत्कालै मैले 'काव्यमय नेपाल' (सन् २०१५) कवितासङ्ग्रह दराजबाट झिकें। रूसका लागि नेपाली राजदूत रविमोहन सापकोटा कोपिला संरक्षक र म स्वयं अध्यक्ष रहेको आदिकवि भानुभक्त आचार्य द्विशतवार्षिक समारोह समिति रूस महासंघबाट त्यो पुस्तक केही वर्षअघि मात्र प्रकाशमा ल्याइएको थियो। यस समारोह समितिले आफ्नो अस्तित्वकालमा नेपाली, रूसी र द्विभाषिक समेत गरी नौओटा पुस्तक प्रकाशित गरेको थियो। अहिले नयाँ र रोचक काम गर्ने अवसर मलाई प्राप्त भएको थियो। सौभाग्यवश अनुवादको निम्ति चयन गरिएका कविताका स्रष्टाहरूमध्ये कतिपय लेखक-कविहरूसित मेरो व्यक्तिगत चिनापर्ची छ। तर काठमाडौंबारे गद्यकृतिहरूको पनि आवश्यकता थियो। मैले आफ्ना सुपरिचित लेखक-कविहरूसित काठमाडौंबारे कुनै कृति लेखेर पठाउने अनुरोध गरें। नेपाल-रूस साहित्य समाजका उपाध्यक्ष चन्द्रकान्त आचार्यबाट तुरुन्तै प्रतिक्रिया आयो। उनले आफ्नो एउटा कथा पठाइदिए। नेपालमा मात्र नभई नेपालबाहिर बसोवास गरिरहेका केही नेपाली साहित्यकारहरूले पनि मेरो अनुरोधको जवाफ दिए। यसरी बिस्तारै एक-दुई गर्दै प्रस्तुत पुस्तकमा प्रकाशन गरिएका भन्दा बढी नै कृतिहरू जम्मा हुन गए।

अनुवादको क्रममा मैले स्रष्टाको शैली सुरक्षित राख्ने प्रयास गरेको छु। हाम्रा नेपाली र रूसी पाठकहरूको निम्ति अबोधगम्य शब्दहरूको संक्षेपमा

ДВЕ СТОЛИЦЫ В ОДНОЙ ШКАТУЛКЕ

Когда мой российский друг Валерий Галечьян предложил мне приступить к осуществлению проекта «Две столицы», я с радостью принял его предложение. Суть идеи заключалась в том, чтобы на государственных языках двух стран, России и Непала, издать книгу современных литературных произведений о двух наших столицах. Мне предстояло собрать и перевести на русский язык произведения современных непальских авторов о Катманду, а также сделать перевод на непали. текстов русских авторов о Москве. Когда ключевые моменты, касающиеся издания и объема будущей книги были определены, я проступил к работе. Я пригласил к участию своих непальских друзей, знающих русский язык.

Я начал с того, что достал с полки составленный ранее мной сборник «Поэтический Непал» (2015 г.), который был издан Комитетом по празднованию 200-летнего юбилея непальского поэта-пионера Бханубхакты Ачарьи. Полномочный и Чрезвычайный посол Непала в РФ Рави Мохан Сапкота Копила стал патроном, а я председателем этого юбилейного Комитета. За время своего существования Комитет выпустил девять книг на языках непали и русском, включая и двуязычные издания. И вот теперь мне предстояла новая большая и увлекательная работа. Мне посчастливилось быть знакомым со многими литераторами, стихи которых я выбрал для перевода. Но кроме поэтических нужны были и прозаические произведения про Катманду. Я обратился к моим знакомым литераторам в Непале с

व्याख्यासहित भावार्थ पादटिप्पणीमा दिएको छ । यसबाट एक पन्थ दुई काज भएको छः एकातिर यस्तो पादटिप्पणीबाट वाक्यको भावार्थ बोध हुन्छ भने अर्कोतिर पाठकहरूले हाम्रा दुवै देशका जनताहरूको इतिहास, संस्कृति, रीतिरिवाज र परम्पराबारे पनि थप सूचना प्राप्त गर्ने सम्भावना पाउँछन् । पुस्तकको पुछारमा स्रष्टा-परिचय पनि समावेश गरिएको छ । प्रस्तुत पुस्तकबाट नेपाली र रसियाली पाठकहरूले हाम्रा दुवै देशको संस्कृति, इतिहास र वर्तमान जनजीवनबारे पहिलेभन्दा केही बढी जानकारी हासिल गर्नेछन् भन्ने आशा छ ।

कुनै समयमा स्वयं मलाई पनि रूस, वस्तुतः सोभियत संघको विषयमा केही पनि ज्ञान थिएन । तर म अध्ययनार्थ मास्को आइपुगेको सालदेखि निकै हेरफेर आएको छ । एउटा रोचक परिघटना यस्तो थियो । मस्कोमा लेनिनको नामले विभूषित पहाडहरू छन् भनेर मलाई बताइयो । त्यतिखेर म सोकोल भन्ने ठाउँमा छात्रावासमा बस्तथें र नजिकै रहेको मस्को सडक निर्माण शिक्षण संस्थान (छोटकरीमा मादी) मा तैयारी वर्षअन्तर्गत रूसी भाषा सिक्तै थिएँ । नेपाल पहाडी मुलुक भएकोले मस्कोका पहाडहरू आफ्नै आँखाले हेर्ने चाहना हुनु स्वाभाविकै थियो । म जमिनमुनि गुड्ने रेल अर्थात् मेट्रो चढेर एक घण्टामै मस्कोको अर्को छेउमा रहेको ‘उनिभेर्सितेत’ भनिने अन्तिम मेट्रो-बिसौनीबाट बाहिर निस्किएँ । नजिकै त्यतिखेर रूसको राजधानीको सबभन्दा अग्लो मस्को राजकीय विश्वविद्यालयको आकाशचुम्बी भव्य भवन देखें (पछि ‘सानो सहर’ नै भन्न सकिने त्यस भवनमा रहेको छात्रावासमा मैले पनि बस्ने सम्भावना पाएको थिएँ) । ‘यहाँ पहाडहरू कता होलान् ?’ – मैले सोधें । मलाई विश्वविद्यालयको भवन पार गरेर अगाडि जान भनियो । म सरासर जाँदै अन्त्यमा अग्लो ढिस्कोको छेवैसम्म पुगें । त्यहाँबाट पूरै मस्कोको सुन्दर दृश्य देख्न पाइयो... विशाल मस्को नगर हातको हत्केलामा जस्तै छर्लङ्ग थियो ! निकै वेरसम्म मैले सोभियत संघको राजधानीको अनुपम दृश्यावलोकन गरें । यस भव्य राजधानीलाई नाम दिने नागवेली परेको मस्को-नदीले सलल बग्दै सहरलाई दुई भागमा विभाजित गरेको प्रतीत हुन्थ्यो । त्यसैको किनारामा निकै टाढा सुनौला गजुरहरू र भव्य दरवारहरूसहितको क्रेमलिन र विभिन्न ठाउँमा रहेका ‘सात बहिनी’ भनिनेगगनचुम्बी भवनहरू समेत टडकारै देख्न सकिन्थ्यो । म उभिएको ठाउँवरिपरि हरिया रुख र बोटबुट्यानहरू प्रशस्तै थिए । भिरालोको छेवैमा एउटा सानो चर्च पनि थियो । जीवनमा पहिलोपल्ट म त्यसै दिन अर्थाडक्स चर्चभित्र पसेको थिएँ । जुत्ता लगाएरै पनि मन्दिरभित्र जान हुँदो रहेछ, तर पुरुषहरूले टोपी

просьбой написать что-нибудь о Катманду и прислать мне. Первым откликнулся Чандра Кант Ачарья, вице-президент Общества непало-российской литературы в Катманду. Он прислал мне свой рассказ. Некоторые непальские литераторы, живущие не только в Непале, но и за рубежом, также откликнулись на мою просьбу. Вот так, по крупинкам, были собраны публикуемые в данной книге литературные произведения.

Занимаясь переводом, я стремился сохранить стиль авторов. Все, что могло быть не понятным для наших непальских и российских читателей, я кратко расшифровал и дал в сносках. Это играет двоякую роль: с одной стороны, поясняет смысл текста, а с другой – дает дополнительную информацию об истории, культуре, обычаях и традициях наших народов. Краткие сведения об авторах также помещены в конце книги. Надеюсь, что после чтения сборника непальские и русские читатели узнают больше о культуре, истории и современности двух стран. Когда-то я сам совсем мало знал о России, точнее об СССР... Но все изменилось в тот год, когда я приехал учиться в Москву. Вот одна забавная история. Мне сказали, что в Москве есть горы, которые носят имя Ленина. Тогда я жил в общежитии на Соколе, изучал русский язык в МАДИ. Непал – горная страна, и конечно мне очень хотелось увидеть своими глазами московские горы... Подземный поезд (надо сказать, что до этого я не ездил на метро) доставил меня до конечной станции «Университет». Выйдя, я увидел самое высокое в то время здание в Москве – МГУ (позднее я жил здесь, в этом настоящем мини-городе). «Где же горы?» – подумал я. Мне подсказали пройти дальше, мимо высотного здания МГУ, так я дошел до края обрыва, откуда открылся прекрасный вид на Москву...

चाहिं उतार्नु अनिवार्य थियो। 'नेपालमा त यसको उल्टो पो हुन्छ !' – मनमनै सोचें। चर्चमा त्यति धेरै मानिसहरू थिएनन्। मतर्फ न कसैले ध्यान दियो, न त भित्र पस्न नै कसैले रोक्यो। काठमाडौंस्थित पशुपतिनाथको मन्दिरमा युरोपेलीहरूको निम्ति प्रवेश-निषेधको सम्झना भयो। तर पहाड भने कतै पनि देखिनँ...

'यहाँबाट लेनिन पहाड कति टाढा छ ?' – मेरो यस्तो प्रश्न सुनेर मानिसहरूले मुस्कुराउँदै मस्को-नदीको किनाराकै त्यही भिरालोतिर देखाए। तल वृत्ताकार भई बगेको नदीको पारिपट्टि 'लुज्निकी' रङ्गशालासहितको हराभरा क्रीडास्थल र नदीमाथि विशाल तीनतले पुल थियो। पुलमुनि नदीमा ग्रीष्मयाममा विश्राम लिइरहेका मास्कोवासीहरू जहाजमा सयर गरिरहेका देखिन्थे। ठुल्ठुला ऐना हालिएको पुलभित्र नै दुवैतिरबाट आवत-जावत गर्ने रेलहरू रोकिने मेट्रो-बिसौनी थियो भने त्यसको दुवै बगलमा मान्छे हिँड्ने पेटी-बाटो र पुलमाथि फराकिलो मोटर सडक देखिन्थ्यो। मैले यताउति निकै वेर चहार्दा समेत कतै पनि पहाड देखिनँ। केवल मानवनिर्मित पहाड भन्न सकिने विश्वविद्यालयको तेत्तिसतले गगनचुम्बी भवन मात्रै त्यहाँ खडा थियो !.. हाल यस ठाउँलाई पुरानै नाउँबाट 'भोरेभ्योभी गोरी' भन्दछन्। रूसी भाषाको 'भोरोभेइ' को अर्थ 'भँगेरो' हुनाले उच्चारणसाम्यको आधारमा मैले ठट्टाको लागि नेपालीमा 'भङ्गेरे डाँडा' भन्ने गरेको छु !.. मस्को सात थुम्कोमाथि अवस्थित छ भन्ने पनि मैले पछि थाहा पाएँ। त्यसैमध्ये एउटा थुम्कोमा मस्कोको केन्द्र 'लालमैदान' ('सुन्दर चोक') सहित 'क्रेमलिन' रहेको छ।

काठमाडौंको तुलनामा मस्को निकै विशाल छ। यस सहरको क्षेत्रफल सम्पूर्ण काठमाडौं उपत्यकाको जत्ति नै छ। म मस्को आइपुग्दा यस सहरको जनसंख्या सम्पूर्ण नेपालकै जनसंख्याको झन्डै बराबर थियो (तर हाल नेपालको जनसंख्या मस्कोको भन्दा अढाई गुणाले बढेको छ)। मस्को १०९ किलोमिटर लामो विशाल चक्रपथले घेरिएको छ। यो चक्रपथको लम्बाई पनि नेपालको राजधानीलाई मोटरमार्गद्वारा वाह्य संसारसित जोड्न त्यतिखेर निर्मित त्रिभुवन राजपथको लम्बाईकै बराबर छ। यो सडक नबनुञ्जेलसम्म मोटर चढ्न पूरै एक दिन पदलै हिँडेर पहाडी भञ्ज्याङहरू पार गर्दै समथरसम्म पुग्नुपर्दथ्यो। वाह्य चक्रपथले गर्दा मानचित्रमा मस्कोको आकृति पहाडहरूको बिचमा अवस्थित काठमाडौं उपत्यकाजस्तै वृत्ताकार देखिन्छ। रूसको यात्राभ्रमणमा आउने नेपालीहरूलाई मस्कोबारे बताउनुपर्दा म भन्ने गर्दछुः 'मस्को अष्टपद कमलजस्तो

Вся Москва была видна как на ладони. Я долго любовался восхитительным видом большого города, столицей огромной страны СССР! Серпантином Москва-река делила город как бы на две части, вдали видны были высотные здания, называемые «Семь сестер», а почти в центре, на берегу реки, – Кремль с золотыми куполами и дворцами.

Вокруг было очень зелено, меня окружали деревья и кустарники, а на краю крутого спуска виднелась маленькая церковь. Впервые в жизни я вошел в православную церковь, и узнал, что в такой храм можно заходить в обуви, но зато головной убор мужчинам надо обязательно снять. «А ведь в Непале все наоборот», – подумал я. В церкви людей было очень мало, на меня никто не обратил внимания, и не остановил, как например, в храме Пашупатинатха в Катманду, куда не пускают европейцев. И все же горы я так и не увидел...

«Далеко ли отсюда Ленинские горы?» Люди, улыбались, и указывали на спуск к набережной Москвы-реки, где внизу виден спортивный комплекс со стадионом «Лужники». Над рекой – красивый двухэтажный мост с застекленной станцией метро, по внешним сторонам которой проходят пешеходные террасы, а на втором его ярусе, на самом верху, – широкая автомобильная дорога. Под мостом деловито курсируют теплоходы с отдыхающими москвичами. Я долго искал, но так и не нашел те московские горы. Лишь тридцатитрехэтажное здание МГУ тянулось к небу, подобно рукотворному горному массиву... Сейчас это место называется «Воробьевы горы». Поскольку это название созвучно с словом «воробей», я шуточно перевожу его, как «Бхангере-данда»... Позднее я узнал, что Москва стоит на семи холмах, на одном из которых расположен Кремль с Красной площадью.

छ । त्यसको आठै दिशामा दिशाबोधक नाम राखिएका आठ क्षेत्रहरू र उद्यान-चक्रपथभित्र चाहिं कमलको गट्टाझैं नवौं केन्द्रीय क्षेत्र रहेका छन् । एउटा दशौं क्षेत्र विशाल चक्रपथबाहिर पर्दछ र हाल दक्षिण-पूर्व दिशातिर मस्कोको विस्तार गरिएको हुनाले नयाँ मस्को भनिने अरू दुई क्षेत्रहरू पनि थपिन गई रूसको राजधानी १२ क्षेत्रहरूमा विभाजित हुन पुगेको छ...' यस्तो प्रतीकात्मक व्याख्याद्वारा नेपालीहरूले मस्कोको अवस्थिति सहजै बुझ्छन्, किनभने नेपालको राजधानी काठमाडौं (प्राचीन खण्ड) पनि आठकुने खड्गाकार छ । खड्ग – दुर्गा-भवानीको शक्तिको प्रतीक हुनुका साथै अज्ञानरूपी तमनाशक मञ्जुश्रीको प्रतीक पनि हो । काठमाडौं उपत्यकाका अन्य दुई राजधानी-नगरीको उदाहरण पनि प्रस्तुत गर्न सकिन्छ । वाग्मतीपारि पर्ने ललितपुर बुद्धधर्मको प्रतीकस्वरूप चक्राकार छ भने पूर्वतिर रहेको भक्तपुर चाहिं अष्टमातृकाको प्रतीकस्वरूप अष्टकोणात्मक छ... ।

काठमाडौं र मस्को जस्ता भिन्दाभिन्दै स्वरूप र प्रकृतिका दुई राजधानीहरूलाई एउटै बट्टामा प्रस्तुत गर्न सकियो वा सकिएन भन्ने त पाठकवृन्दको निर्णयमा निर्भर रहने कुरा हो । हामीले त यस परियोजनाअन्तर्गत आ-आफ्नो देशको संस्कृतिबारे यथासम्भव बढी जानकारी पस्कने जमर्को मात्र गरेका छौं । यस कार्यमा हामीलाई नेपालीबाट अनूदित कृतिहरूका रूसी सम्पादिकात्रय ताच्याना भिनोग्रादोभा, ल्युद्मिला भ्याज्मितिनोभा र ताच्याना मिखाइलोभ्स्कायाका साथै रूसी भाषाबाट अनूदित कृतिहरूका नेपाली सम्पादक भाइ तेजप्रकाश श्रेष्ठबाट गहकिलो सहयोग पाइएको छ । संयुक्त रूपले काम गरेर यस्तो रोचक साहित्यिक परियोजनालाई साकार तुल्याउन प्रस्ताव ल्याउने भालेरी गालेच्यानप्रति विशेष कृतज्ञता ज्ञापन गर्दछु । साथै यस पुस्तकमा प्रकाशनार्थ आफ्ना साहित्यिक रचनाहरू प्रदान गर्ने स्रष्टाहरूप्रति हार्दिक आभार प्रकट गर्दछु । स्थानाभावको कारणले प्राप्त भएका सबै सामग्रीहरू यस संस्करणमा समावेश गर्न सकिएन । नेपाल र रूस जस्ता दुई मित्रराष्ट्रका राजधानीहरूको विषयवस्तुमा आधारित साहित्यिक कृतिहरू समाविष्ट यस द्विभाषिक संस्करणको प्रकाशनमा सहयोग गर्ने सबै मित्रहरूप्रति कृतज्ञता जनाउँछु । धन्यवाद !

कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ
१६ अप्रिल २०२०, मस्को, रूस महासंघ ।

Москва, по сравнению с Катманду, – огромный мегаполис. По площади она равна почти всей долине Катманду. Когда я приехал в Москву, население этого города было почти равно населению всего Непала (ныне в Непале население выросло по сравнению с Москвой в два раза). Москву окольцовывала МКАД длиной 109 км, удивительно точно совпадающая по длине со строившейся тогда же в Непале первой шоссейной дорогой, которая соединила столицу страны с внешним миром. Ранее, когда этой дороги еще не было, чтобы добраться до автотрассы, надо было целый день идти пешком, через несколько горных перевалов. Карту Москвы, окруженной большой кольцевой дорогой, я часто сравнивал с долиной Катманду, имевшей почти такую же округлую форму и занимавшей сопоставимую площадь. «Москва, – говорил я непальцам, посещавшим столицу Советского Союза, – напоминает восьмилепестковый лотос (священный символ для непальцев). По восьми сторонам света расположены восемь округов города с центральным девятым округом, сердцевина которого – внутри Садового кольца». Но ныне Москва расширилась в югозападном направлении, и выросла еще на два округа, названных Новой Москвой. Непальцам вполне понятно такое символическое объяснение местности, так как не только Катманду, но и другие города страны связаны с различными символами. К примеру, Катманду (в пределах старого города) имеет форму восьмиконечного меча – кхадга (символ богини Дурги, или символ света знания, рассекающего тьму незнания). Вот примеры еще двух соседних с Катманду столичных городов: Лалитпур, расположенный за рекой Багмати, имеет округлую форму («чакра» – колесо, символ буддизма), а Бхактапур, расположенный к востоку – имеет форму

восьмиугольника-аштакона, символа восьми богинь-матерей индуизма...

Удалось ли поместить в одной шкатулке два таких разных города, две столицы, судить не нам, а нашим читателям. Мы старались объединить наши культуры и, рассказать как можно больше в рамках этого проекта. В этом нам помогли Татьяна Виноградова, Людмила Вязмитинова и Татьяна Михайловская – редакторы перевода с языка непали, и Тедж Пракаш Шрестха, редактор перевода с русского языка. Выражаю огромную благодарность Валерию Галечьяну, предложившему мне совместный и такой интересный проект, а также авторам, которые откликнулись на просьбу и прислали мне свои литературные произведения. К сожалению, из-за установленных рамок издания не все материалы смогли войти в сборник, о чем я искренне сожалею. Благодарю всех, кто участвовал в выпуске этого двуязычного издания о наших столицах таких дружественных стран, как Непал и Россия.

Спасибо!

Кришна Пракаш Шрестха

16 апреля 2020
г. Москва

ЧАСТЬ ПЕРВАЯ

भाग एक

कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ

काठमाडौंको आत्मकथा

मेरो नाम काठमाडौं हो ! कहिलेदेखि म राजधानी बने त्यसको हेक्का मलाई रहेन। लाग्छ, म सदासर्वदा नै विशाल वा सानो कुनै न कुनै भूभागको राजधानी रहिआएको थिएँ। कुनै वेला त म वर्तमान नेपाल राज्यभन्दा पनि विशाल भूखण्डको समेत राजधानी बनेको थिएँ। अहिले मलाई 'संघीय लोकतान्त्रिक गणतन्त्र नेपालको राजधानी' भन्ने सम्मान समेत दिइएको छ। मैले यस्तो उपाधि पाएको धेरै भएको छैन। सन् २००८ देखि मात्र हो। त्यसभन्दा पहिले 'नेपाल अधिराज्यको राजधानी' भनेर मेरो परिचय दिइन्थ्यो। देशबाट राजा अपदस्थ गरिएपछि मलाई विशेष सम्मानको पगरी लगाइदिए। मेरो यस उपाधिमा एउटा मात्र होइन, 'संघीय' एवं 'लोकतान्त्रिक' जस्ता दु– दुईओटा विशेषण समेत लगाइएको छ ! सुन्नोस्, छोटकरीमा मेरो आत्मकथा !

हाल मेरै नामबाट काठमाडौं उपत्यका भनिने विशाल नेपाल उपत्यकाको मध्य भागमा म अवस्थित छु। यो उपत्यका झन्डै बाटुलो आकारको हुनाले उहिले 'नेपाल-मण्डल' भनिन्थ्यो। यस उपत्यकाभन्दा बाहिर बस्ने मानिसहरूले त यसैलाई 'नेपाल' भन्ने गरेका थिए, मानौं खास नेपाल यही नै होस् ! यस कथनमा सत्यता छैन भन्न मिल्दैन पनि। वास्तवमा यही उपत्यका नै नेपाली सभ्यता र संस्कृतिको झोलुङ्गो हो। म जहाँ छुँ त्यस उपत्यकाको प्रादुर्भावबारे पनि दुई शब्द भन्नै पर्नेहुन्छ। प्राचीन कालमा यस ठाउँमा विशाल सरोवर थियो रे। त्यसमा नागहरू बस्ने भएकाले नागह्रद भनिन्थ्यो। पवित्र सरोवर तीर्थस्थल मानिन्थ्यो र त्यस ताका विभिन्न देशबाट तीर्थयात्रीहरू सरोवरको दर्शन गर्न आउँथे। उदाहरणका लागि भन्ने हो भने विभिन्न युगमा विपस्वी, शिखी, विश्वभू र मञ्जुश्री जस्ता बौद्ध सन्तहरू सरोवरको चारैतिर डिलमा रहेका पर्वतहरूको शिखरमा पुगेका थिए। तिनै बौद्ध सन्तहरूको धार्मिक कृत्यको आधारमा नै यहाँका चारै शिखरहरूको नामकरण भएको थियो। जस्तै विपस्वीले उत्तर-पश्चिमको शिखरमा उभिएर सरोवरमा कमलको बिउ रोपिदिएको हुँदा पर्वतको नाम 'जातमात्रोच्च' रहन गयो। हाल त्यो पर्वत जामाचो (नागार्जुन) भनिन्छ। अनि शिखीले सरोवरमा उम्रिएको कमलको दर्शन गरेर ध्यानमग्न भएको शिखर हुनाले पश्चिमपट्टिको पर्वतको नाम ध्यानोच्च (हाल चन्द्रागिरि) भयो भने विश्वभूले जुन शिखरमा उभिएर त्यहाँ फुलेका

फूलहरूले कमलमा विराजमान ज्वाज्ज्वल्यमान स्वयम्भू देवतालाई चढाएका थिए त्यो पर्वत फूलोच्च (फूलचोकी) भनिन थाल्यो । त्यसै गरी महाचीनबाट आएका बोधिसत्त्व मञ्जुश्रीले उत्तरतर्फको शिखरमा उभिएर स्वयम्भूको दर्शन गरी सरोवरको पानी सुकाएर हराभरा उपत्यका निर्माण गर्ने योजना बनाएको हुनाले त्यो पर्वत महामण्डप (हाल नगरकोट) भनियो । यसरी यी चारै बौद्ध सन्तहरूले सरोवरको परिक्रमा सम्पन्न गरेका थिए ।

महाचीनबाट आएका बोधिसत्त्व मञ्जुश्रीले आफ्नो खड्गले काटेर सरोवरको दक्षिणतिरको होचो ठाउँमा निकास खोलेपछि पानी बाहिर बगेर गई उर्वर भूमियुक्त उपत्यका अस्तित्वमा आयो । अनि चारैतिरबाट मानिसहरू आएर उपत्यकामा बसोवास गर्न थाले । पूर्वतिरबाट धनुर्वाणधारी किरातहरू आए भने दक्षिणतिरबाट आफ्ना गाईवस्तुहरूका लागि चरन खोज्दै आभिरहरू आए । कालान्तरमा पश्चमतिरबाट खसहरू त दक्षिणतिरबाटै आर्यहरू पनि आएर यहाँका बासिन्दा बने । यस प्रकार यहाँ पहिलो राज्य अस्तित्वमा आयो र कम्तीमा पनि विगत अढाई हजार वर्षको अवधिमा एकपछि अर्को गर्दै विभिन्न राजवंशले यहाँ शासन गरे ।

उपत्यकावासीहरूलाई ज्ञानउपदेश दिई पालना गर्ने प्रसिद्ध नेमुनिको नामबाट नै हिमालयको काखमा अवस्थित यस भूखण्डको नाम 'नेपाल' रहन गएको थियो । उनैको समयमा यहाँ पहिलो अधिराज्यको प्रादुर्भाव भएसँगै मैले राजधानीको भूमिका निर्वाह गर्दै आएको छु । त्यतिखेर उपत्यकाको केन्द्रमा एक्कासि उत्पन्न भएको अग्निज्वालाको मुस्लोले गाई पाल्ने एक गोपाललाई खाक बनाइदिंदा नेमुनिले ज्योतिलिंङ्ग पशुपतिको उत्पत्ति भएको घोषणा गरे । आहिर जातिका गाई पाल्ने गोपाल र भैसी पाल्ने महिषपालको वसोवासको क्षेत्रमा उत्पन्न ज्योतिर्लिङ्गले पशुपतिको नाम पाउनु स्वाभाविकै थियो । ज्योतिर्लिङ्गको ज्वालाको लपेटामा परेको गोपालको पुत्रलाई नै नेमुनिले यस भूखण्डको पहिलो राजा बनाइदिए । यसरी नेपालमा गोपालवंशको शासन चल्न थाल्यो । नेमुनिको आश्रम यस उपत्यकामा बग्ने दुई प्रमुख नदी विष्णुमति र वाग्मतीको संगमस्थलनेरकै ढिस्कोमा थियो । त्यस ठाउँमा अहिले कुलेश्वरको स्थान रहेको छ । अनि उक्त संगमको उत्तरतिर रहेको सानो बस्ती नै गाईपालकहरूको राज्यको प्रथम राजधानी बन्यो । अहिले म पनि यसै ठाउँमा उभिएको छु । यो स्थल त्यस प्राचीन कालमा सम्भवतः इन्द्रभूमि अर्थात् येम्बु भनिन्यो । त्यतिखेर गाई र भैंसीका बथानहरूको चारादानाका लागि चाहिने हरिया घाँसपात र अन्नबालीका लागि वर्षाको आवश्यकता हुने नै भयो र वृष्टिका देवताको रूपमा निसन्देह नै स्वर्गका राजा इन्द्रको पूजा गरिन्थ्यो । अद्यापि राजधानीको केन्द्रीय चोकको नाम इन्द्रचोक नै रहनु पनि आकस्मिकता अवश्य होइन । स्थाननाम र किम्बदन्तीका अतिरिक्त त्यस सुदूर प्राचीन कालको अन्य ऐतिहासिक दसीप्रमाण केही पनि अहिले उपलब्ध छैन । यसैउसले प्रथम राजधानीको समय पनि अहिले यकिन बताउन सकिंदैन ।

ईश्बीको दोस्रो शताब्दीदेखि यताको मात्र सुनिश्चित ऐतिहासिक तिथिमिति केही हदसम्म उपलब्ध छ। त्यतिखेर यहाँ बर्मावंशको शासन थियो। अहिले म जुन ठाउँमा उभिएको छु त्यहीं सन् १८५ मा राजा जयबर्मा (द्वितीय शताब्दी) को प्रतिमा स्थापित गरिएको थियो। त्यसको पादपीठमा राजाको नाम र साल पनि कुँदिएको छ। हुन त त्यो प्राचीन प्रतिमा सन् १९९२ को मई महिनामा मात्र पाइएको हो र हाल जीर्णोद्धारपछि त्यसलाई राष्ट्रिय सङ्ग्रहालयमा राखिएको छ। यसै तिथिमितिलाई मेरो पनि न्वारानको दिन मान्न सकिन्छ। जयबर्मापछि शासन गर्ने राजाहरूमध्ये लिच्छविवंशका राजा मानदेव (पाँचौं शताब्दी) निकै प्रतापी थिए। उनले सन् ४६४ मा चाँगुनारायणमा प्रस्तरस्तम्भ खडा गरी आफ्नो र बर्मावंश हटाएर राजा बनेका आफ्ना पुर्खाहरूको वीरताको वर्णनसहित काव्य नै कुँदेर राखिदिएका थिए। यसै गरी महासामन्त अंशुबर्मा (सातौं शताब्दी) ले लिच्छविवंशकी राजकुमारी बिहे गरी अन्ततोगत्वा स्वयं राजा बनेर ठकुरी वंशको जग बसाले र नयाँ सम्बत् समेत चलाए। उनी एक सुयोग्य शासक हुनुका साथै कूटनीतिपटु र प्रवीण राजनीतिज्ञ पनि थिए र उनले भोटका प्रतापी राजासंग आफ्नी सुपुत्रीको विवाह गरिदिएर सम्बन्ध सुमधुर तुल्याएका थिए। उनको शासनकालमा र लिच्छवि राजाहरूको पालामा वास्तुकला, मूर्तिकला, संस्कृति र साहित्यको द्रुततर विकास हुनुका साथै राज्यशक्तिको सबलीकरण र राजधानीको वैभववृद्धिबाट मलाई निकै सन्तुष्टि प्राप्त भएको थियो। त्यसैले त त्यो उर्वर समयावधिलाई नेपालको इतिहासमा 'स्वर्णयुग' भनिन्छ।

यहाँ एउटा उदाहरण प्रस्तुत गर्न चाहन्छु। राजा जयदेव द्वितीय (आठौं शताब्दी) का दर्वारिया कवि बुद्धिकीर्तिले 'पशुपति-स्तुति' (सन् ७३३) को रूपमा रचना गरेको आफ्नो ३५ श्लोकको काव्यमा पहिलोपल्ट यस उपत्यकालाई अष्टपद रजत-पद्मसित तुलना गर्दै एउटा श्लोकमा अंशतः लेखेका छन् -

वेदी मेरुशिला छ काञ्चनमयी विश्रामभू देवको,
क्या राम्रो हिमशैल वेष्ठित धरा पाशुपत श्रेत्र यो।
फक्रेको कमलै सरी रजतको यो पद्म अत्युज्ज्वल,
राजाज्ञाअनुरूप नै शिवजीको पूजार्थ तैयार भो ॥२५॥

संस्कृत भाषामा रचिएको यो काव्य आज पनि वाग्मती तटवर्ती पशुपतिनाथको मन्दिर रहेको आँगनको दक्षिण-पश्चिम कुनामा राखिएको शिलापत्रमा पढ्न सकिन्छ।

यस महिमामयी राज्यको केन्द्रमा म नै थिएँ। प्राचीन कालमा यस नगरको माथिल्लो उत्तरी भागमा कोलीग्राम र तल्लो भागमा नगरनिर्माणशास्त्रअनुसार पछि स्थापना गरिएको दक्षिण-कोलीग्राम नामक बस्ती अस्तित्वमा थिए। पछिल्लो बस्तीको स्वरूप आजसम्म सुरक्षित विभिन्न देवस्थल र शिलापत्र आदि पुरात्वात्विक सामग्रीहरूका साथै ठाडो र तेर्सो सडक-प्रणालीबाट समेत अद्यापि पूर्ववत् रहेको पुष्टि हुन्छ। यी दुवै खण्डको

केन्द्रबिन्दुमा काष्ठमण्डप थियो । गुणकामदेव नाम गरेका राजाले कोलीग्राम र दक्षिण कोलीग्राम भनिने दुवै बस्तीलाई मिलाएर मध्य भागमा कान्तेश्वर र आठ कुनामा नगररक्षिकाको रूपमा अष्टमात्रिका देवीहरूको पीठ स्थापना गरी कलिगत सम्बत् ३८२४ (अहिलेको गणनाअनुसार सन् ७२३) मा खड्गाकार नयाँ नगर निर्माण गरे । । केन्द्रीय शिवालय कान्तेश्वरको नामबाट नै राजधानीको नाम पनि कान्तिपुर भयो । सनातन धर्माबलम्बीहरूको निम्ति खड्ग दैवी शक्तिको प्रतीक थियो भने बौद्धमार्गीहरूका लागि त्यो बोधिसत्त्व मञ्जुश्रीको तमनाशक आयुधको प्रतीक थियो । जे भए तापनि नगरको चारैतिर रहेका आठै शक्तिपीठहरूलाई काल्पनिक रेखाले जोडने हो भने तल दक्षिणतिर बींड त माथि उत्तरतिर टुप्पो भएको खड्गको आकार स्पष्ट देखिन्छ । यस राजधानीले ठकुरी वंशको राज्यकालमा निकै उन्नति गरेको थियो । तर मध्ययुगमा नै मल्लवशीय राजा यक्षमल्ल (तेह्रौं शताब्दी) को शेषपछि उनका तीनजना राजकुमारहरूले यस राज्यलाई तीन भागमा बाँडेर आपसमा अंशबण्डा गरी स्वतन्त्र तीन राज्य खडा गरे । त्यो सामन्तहरूबिच कलह र राज्यखण्डनको समय थियो । अठारौं शताब्दीको मध्यसम्म नै वर्तमान नेपालको भूभागमा त्यतिखेर आधा सयभन्दा बढी राज्यहरू अस्तित्वमा थिए । म रहेको राजधानीमै पनि त्यतिखेर थकुजुजु भनिने ठकुरी वंशका बाह्रजना राजाहरूको संयुक्त शासन थियो । अन्त्यमा नेपाल-मण्डलमा मल्लवंशी तीन राजाहरूको एकछत्र शासन कायम भयो । उनीहरू यदाकदा आपसी झैझगडा गरिरहन्थे तापनि अक्सर आपसमा होडबाजी गर्दै आफ्नो राजधानीको सिङ्गारपटारमा नै व्यस्त रहन्थे । त्यतिखेर उपत्यकाका तीनै राजधानी-नगरहरू एकभन्दा अर्को भव्य र सुन्दर बन्दै गए पनि मलाई कसैले उछिन्न सकेको थिएन ।

प्राचीन कालदेखि नै राजधानीको हैसियतले म चारैतिर पर्खालले घेरिएको एक जब्बर किल्लाको रूपमा रहेको थिएँ । पवित्र वाग्मती र विष्णुमति नदीहरू शत्रुका लागि प्राकृतिक तगारा थिए । यी नदीहरूको तटमा कैयौं देवीपीठ र मन्दिरहरू रहेका थिए । मलाई चारैतिरबाट हिन्दु र बौद्ध देवस्थलहरूले घेरिराखेका थिए भने नगरको बिचमा पनि कैयौं हिन्दु मठमन्दिर, बौद्धविहार, चैत्य र स्तुपहरू रहेका थिए । अझ पछि मल्लकालमा त इस्लाम धर्माबलम्बीहरूका मस्जिद पनि देखापरेका थिए । त्यसैले त विदेशी पाहुनाहरू भन्ने गर्दछन् – 'काठमाडौंमा घरभन्दा धेरै मन्दिरहरू छन्, मान्छेभन्दा बढी देवताहरू छन् !' सहरको माथिल्लो उत्तरी भाग नेवारी बोलीमा 'थःने' भनिन्छ भने तल्लो दक्षिणी हिस्सा 'क्वःने' भनिन्छ । यी दुवै खण्डको बिचमा राजदरवार रहेको छ । प्रसिद्ध राजा प्रतापमल्ल (शासनकाल सन् १६४१-१६७४) को पालामा दर्वारको मूलद्वारमा ढोकापालेको रूपमा हनुमानको मूर्ति स्थापना गरिएपछि यो राजदर्वार हनुमानढोका भनिन थालियो । मध्ययुगमा राजधानी बत्तिस टोलमा विभाजित थियो र हरेक टोलमा बेग्लाबेग्लै प्रवेश-द्वार र 'क्वथः' भनिने बुर्जा पनि रहेका थिए । केही यस्ता

ढोकाहरूको नामबाट स्थाननाम रहनुका साथै अहिले पनि केही भग्नावशेष देख्न सकिन्छ । नगरवरिपरिको पर्खालका ढोकाहरूका साथै यी ढोकाहरू पनि रातको समयमा बन्द गरिन्थे र मुसो पनि सहरमा छिर्न सक्तैनथ्यो । वर्तमान समयमा समेत सबै परम्परागत जात्रापर्वहरू पहिले पर्खालले घेरिएको प्राचीन नगरक्षेत्रभित्र नै सम्पन्न हुन्छन् । यहाँका वासिन्दाहरू वर्षको एकपटक पहिलेको पर्खाल वरिपरिको बाटोमा ठाउँठाउँमा बत्ती बालेर पूजा गर्दै नगर परिक्रमा गर्दछन् । यस परम्परालाई नेवारीमा 'उपागु' भनिन्छ ।

विभिन्न युगका कतिपय कवि र लेखकहरूले संस्कृत, नेवारी (नेपालभाषा), मैथिली र नेपाली भाषामा रचिएका आफ्ना कृतिहरूमा मेरो गुणगान गाउने गरेका छन् । उदाहरणस्वरूप, अन्तिम मल्ल राजा जयप्रकाश (शासनकाल सन् १७३२-१७६८) को पालामा रचिएको 'रत्नेश्वर प्रादुर्भाव' शीर्षकको नेवारी भाषाको नाटकमा देशवर्णनअन्तर्गत कान्तिपुरको नामले प्रसिद्ध मेरो गाथा गाइएको छ । त्यसमा भनिएको छ -

कान्तिपुर नगरको लक्षण छ राम्रो ।
के होला र इन्द्रपुरी पनि यति राम्रो ?
कुमारी र तलेजुको उपस्थिति यहाँ ।
पशुपति, गुह्येश्वरी संरक्षक जहाँ ।।
धर्ममा छ रस भन्ने बुझ्छन् नरनारी ।
महानदी बग्छ पुण्यभूमि वरिपरि ।।
यहाँ अधिपति जयप्रकाश सुधीर ।
कविको सुवचनले धर्म होस् सुस्थीर !!

(कंसाकार १९६२,१३९-१४०)

यसरी विभिन्न कविहरूबाट मेरो गौरवगाथा गाइएको पाइन्छ । ती सबै कविताहरू यहाँ प्रस्तुत गर्न सकिंदैन । मेरो तेस्रो नाम 'काठमाडौं' रहन गएको सन्दर्भमा एउटा किम्बदन्ती समेत प्रचलित छ । भनिन्छ, स्वर्गबाट कल्पवृक्ष मत्सेन्द्रनाथको रथजात्रा हेर्न मानिसको रूपमा यहाँ आउँदा बिसेत भन्ने कुनै चंख व्यक्तिले चिनेछ र पाखुरा अँठ्याउन पुगेछ । अन्त्यमा मन्दिर बनाउन एउटा सिङ्गो रूख नै दिने वाचा गरेपछि कल्पवृक्षले छुटकारा पाएछ । कल्पवृक्षको वाचाअनुसार प्राप्त भएको रूखको काठबाट राजधानीको मध्यभागमा नै जुन विशाल मन्दिर निर्माण भयो त्यसको नाम नै 'काष्ठमण्डप' ('काठको मन्दिर') राखियो । यसैको अपभ्रंशबाट मेरो वर्तमान नाम 'काठमाडौं' रहन गएको हो । कसरी यो नाम नै मेरो आधिकारिक नाम हुन पुग्यो ? सुन्नोस् यसको बयान पनि !

नेपाल-मण्डलको पश्चिमतिर पहाडमा रहेको सानो गोर्खा राज्यका राजा पृथ्वीनारायण शाह (अठारौं शताब्दी) ले हिमालयको काखमा रहेका स-साना राज्यहरूलाई गाभेर नेपाल एकीकरण अभियान चलाएको क्रममा त्यतिखेर ज्यादै समृद्ध

र वैभवशाली उपत्यकाका मल्ल राज्यहरूमा पनि आधिपत्य जमाउने जमर्को गरे । अन्ततोगत्वा राजा जयप्रकाश मल्लसहित सबै प्रजा मिली इन्द्रजात्राको उत्सव मनाउँदै कुमारी रथयात्रामा भाग लिइरहेको मौका छोपेर गोर्खाली फौजले राजधानीको दूर्गद्वार फोडेर तीन तिरबाट कान्तिपुरमा धावा गरी विजय प्राप्त गरेपछि मलाई शाहवंशी विजेता राजाबाट सन् १७६८ को २५ सेप्टेम्बरका दिन एकीकृत नेपालको राजधानी घोषित गरियो। त्यस समयमा विभिन्न राज्यमा विभाजित नेपालका कुनै पनि राजधानीसँग मेरो सौन्दर्य र वैभवको तुलना हुन सक्तैनथ्यो । मैले विशाल नेपालको आधिकारिक राजधानीको पदवी पाउनुको यो नै मुख्य कारण थियो।

मैले 'काठमाडौं' भन्ने औपचारिक नाम पाइसकेपश्चात् पनि नेपालका लेखक-कविहरूले आफ्ना कृतिहरूमा मेरो श्रुतिमधुर 'कान्तिपुर' नामको अद्यापि उल्लेख गर्दै आएका छन्। उदाहरणस्वरूप, आधुनिक नेपाली साहित्यिक भाषाका प्रवर्तक आदिकवि भानुभक्त आचार्यको नामोल्लेख गर्न सकिन्छ । उनको प्रसिद्ध 'कान्तिपुरी नगरी' कविताबाट आरम्भका दुई श्लोक उद्धृत नगरी रहन सकिनँ। उनले यसरी मेरो बखान गरेका छन् –

चपला अबलाहरू एक सुरमा।
गुनकेसरिको फुल ली सिरमा ॥
हिँडन्या सखि लीकन ओरिपरी।
अमरावति कान्तिपुरी नगरी ॥१॥
यति छन् भनि गन्नु कहाँ धनि याँ,
खुशि छन् मनमा बहुतै दुनियाँ ॥
जनकी यसरी सुखकी सगरी।
अलकापुरि कान्तिपुरी नगरी ॥२॥

नेपाली भाषाका आदिकविले मेरो आधिकारिक नाम 'काठमाडौं' भइसकेको समयमा पनि मलाई स्नेहपूर्वक 'कान्तिपुरी' भनेर सम्बोधन गर्नुका साथै अमरावतीसँग मेरो तुलना गरेको स्मरणीय छ।

मेरो अस्तित्वको साढे दुई सहस्राब्दीको इतिहासमा घटेका कैयौं उथलपुथलको म प्रत्यक्षदर्शी रहिआएको छु । हरेक युगले मेरो कलेवरमा अमिट छाप छोडेको छ र मेरो रूपरङ्ग पनि निकै फेरिएको छ। परन्तु पछिल्लो समयमा नगरीकरणको प्रक्रियाले मेरो कलेवरमा सौन्दर्यवृद्धि मात्र गरेको छैन कि कुरूपताको डोब पनि गाडेको छ । सन् २०१५ को भूकम्पको प्रकोपले पनि मलाई कुरूप बनाएको त छँदैछ। नगरीकरणको प्रकोपले गर्दा पुरातन कालका सांस्कृतिक निधिहरू मासिदै गएका छन्, सुन्दर ढुङ्गेधाराहरू सुकेका छन्। स्वच्छ जल लिएर पूर्वतिर बग्ने वाग्मती र पश्चिमतिर बग्ने विष्णुमतीजस्ता पवित्र नदीहरू दूषित भएका छन्। अब तिनको किनारमा सफा बालुवा

देख्न पाइँदैन । धर्मभीरुहरूको स्नानका लागि बनाइएका घाटका सिंढीहरू भत्केका छन् । नगरविस्तारको क्रममा श्मसानस्थल वरिपरि समेत घरहरू ठडिएका छन् । कुनै समयमा उखुको रसझैं मिठो जल लिएर मेरै वक्षस्थलबाट बग्ने हुनाले इक्षुमती (नेवा. टुकुचा) भनिने सानो खोलामा गन्हाउने पानी बग्न थालेको मात्र नभई त्यसमाथि घरहरू समेत ठडिएका छन् र नदीको अस्तित्व नै लोप भइसकेको छ भने फरक पर्दैन । पहाडमा सुरुङ खनेर उपत्यकामा पानी ल्याउने र नदीहरूलाई फेरि सफा पानीले भरेर किनारामा र सडकमा पनि वृक्षारोपण गरी नगरको सौन्दर्य बृद्धि गर्ने योजनाको कुरा चलेको छ । हाल मेरो विस्तार चारैतिर निकै परसम्म फैलिएको छ र अहिले म सामान्य नगर मात्र नरही महानगर बन्न पुगेको छु । यहाँका वासिन्दाहरूले मेरो युगौं पुरानो सौन्दर्यलाई सुरक्षा गर्दै नयाँ रूप दिनुपर्ने आवाज उठाइरहेका छन् । यो समयोचित र जायज छ ।

आशा छ, नगरवासीहरूले मेरो जन्मदिन पनि मनाउने चाँजोपाँजो मिलाउने छन् । यसका लागि युगौंदेखि प्रचलित र वर्तमान समयसम्म आइपुग्दा परिवर्धित तथा परिमार्जित समेत भई विभिन्न नाचगान र जीवित देवी कुमारीको साथमा जीवित देवद्वय गणेश र भैरवको समेत रथयात्रा सम्पन्न गरिने इन्द्रजात्राको पर्व निकै औचित्यपूर्ण हुने ठान्दछु, किनभने यसै पर्वको समयमा मैले एकीकृत विशाल नेपालको आधिकारिक राजधानी बन्ने समेत सौभाग्य पाएको हुँ । यसको साथै मलाई इन्द्रको नामसित जोडिएको आफ्नो प्राचीनतम नाम औधि मन पर्दछ र अद्यापि उपत्यकावासीले माया गरेर मलाई 'यैँ' वा 'यैँदे' ('इन्द्रको देश') भनेर सम्बोधन गर्दै आएका छन् । त्यसै कारण स्वर्गका राजा इन्द्रको सम्मानमा मनाइने सप्ताहव्यापी इन्द्रजात्राकै समयमा मेरो जन्मदिवस मनाइनु युक्तिसङ्गत हुनेछ ।

नेपालको राजधानीमा पुग्ने जो कोही पनि राष्ट्रकी संरक्षिका देवी तुलजा-भवानी (नेवा. तलेजु) को निकै अग्लो मण्डपमा बनेको सुन्दर तीनतले मन्दिरप्रति आकर्षित नभई रहन सक्तैन । राजधानीको केन्द्रमा अवस्थित हनुमानढोका राजदर्वारको परिसरमा नै यो मन्दिर रहेको छ । बिसौं शताब्दीको मध्यसम्म नै राजालगायत कसैले पनि यो मन्दिरभन्दा अग्लो भवन बनाउन पाउँदैनथ्यो । यसको नजिकै दर्वारचोकको अर्को छेउमा कान्तिपुरका अन्तिम मल्ल राजा जयप्रकाश मल्लले विहार शैलीमा निर्माण गर्न लगाएको जीवित देवी कुमारीको तीनतले अति सुन्दर मन्दिर-भवन छ । त्यो कुमारीघर भनिन्छ । यी दुई संरचनाबाहेक त्यस वरपरका मेरो नामकै मूलस्रोत बनेको काष्ठमण्डपसहित कैयौं मन्दिरहरू सन् २०१५ को भूकम्पद्वारा खण्डहरमा परिणत भए । हाल भूकम्पग्रस्त सबै मन्दिर र सांस्कृतिक निधिहरूको नवनिर्माण वा जीर्णोद्धार भइरहेको छ ।

नेपालको वास्तुकलाका अनुपम कृतिहरूको अवलोकन गर्न विदेशी पर्यटकहरू राजधानीको केन्द्रका दर्शनीय स्थलहरूमा पुग्दछन् । तर... उनीहरू मुख्यतः

कुमारीघरको तेस्रो तलामा रहेको कलात्मक पवित्र झ्यालमा यदाकदा झुलुक्क झुल्कने जीवित देवी कुमारीको दर्शन पाइहालिन्छ कि भन्ने आशाले त्यहाँ पुगेका हुन्छन्।

विभिन्न देशका मित्रहरूलाई म अनुकूल समयमा नेपालको प्राचीन राजधानीको यात्राका लागि हार्दिक निमन्त्रणा गर्दछु। तपाईंहरूसँग मेरो आँगनमा भेट्न पाइएमा मलाई सदैव नै अत्यन्त खुशी लाग्ने छ। नेपालमा पाहुनालाई देवता मान्ने चलन छ र परापूर्वकालदेखि नै भन्ने गरिएको छ – 'अतिथि देवो भवः !' – 'अतिथि नै देवता हुन् !'

मस्को, रूस महासङ्घ।

Кришна Пракаш ШРЕСТХА

МОНОЛОГ КАТМАНДУ

Меня зовут Катманду! Не помню, с какого времени я стал столичным городом. Мне кажется, что я всегда был столицей той или иной страны, порой маленькой, а порой огромной, даже и побольше, чем нынешнее государство Непал. Сейчас меня величают так: «Столица Федеративной Демократической Республики Непал». Этот статус мне присвоили лишь недавно, в 2008 году. До этого я был столицей Королевства Непал, но короля свергли, а мне дали такой почетный титул с двумя эпитетами: и «федеративной», и «демократической». Давайте, я расскажу о себе кратко и по порядку.

Я расположен в центре долины Катманду, которая раньше носила название Большой Непальской долины. Поскольку долина окружена со всех сторон высокими горами, а территория ее имела почти круглую форму, то она носила емкое название «Непалмандал»[1]. Люди, живущие за пределами долины, называли ее просто «Непал», якобы истинным Непалом является только долина Катманду. Доля правды в этом все-таки есть. Ведь именно эта долина считается колыбелью непальской цивилизации.

Считаю необходимым сказать несколько слов о возникновении самой долины. В древности здесь было огромное озеро Нагахрада, где, как гласит легенда, обитали змееподобные существа – наги. Озеро считалось священным, и сюда приходили

---

[1] Ма́ндала *(санскр.)* – “круг”.

паломники из разных стран. Например, известные в те далекие времена святые Випасви, Шикхи, Вишвабху и Манджушри посетили это озеро в разное время, останавливаясь на горных вершинах, глядящих на все четыре стороны озера. И вершины получили свое название по деяниям этих святых. К примеру, вершина Джамачо (ныне Нагарджун) на северо-западе озера стала называться Джатаматрочча (*санскр.* «Вершина посева семени»), так как Випасви отсюда перенес зерно лотоса в озеро, а вершина на западе, где Шикхи медитировал, воздавая почести выросшему в озере священному лотосу – Дхьяночча (*санскр.* «Вершина медитации», ныне Чандрагири); южная вершина, откуда Вишвабху, собрав цветы, преподнес их восседающему на лотосе сверкающему божеству Сваямбху – Пхулочча (*санскр.* «Вершина цветов», ныне Пхулчоки), и наконец, северная вершина, где останавливался Манджушри с намерением превратить озеро в плодородную долину, носит имя Махамандапа (*санскр.* «Великий купол», ныне Нагаркот).

Итак, четверо буддийских святых совершили обход священного озера с чистой прозрачной водой, которое потом осушил прибывший из Махачина Манджушри, разрубив невысокую гору, сдерживавшую воду с юга. Со временем здесь образовалась долина с плодородной землей, куда устремились люди со всех сторон: с востока – искусные охотники-кираты, с юга – абхиры в поисках пастбищ для стад коров и буйволов, с запада – представители племени кхасов, и с юга – арии. Именно здесь сформировалось в древности государство, и разные династии, сменяя друг друга, правили этими землями на протяжении двух с половиной тысяч лет.

Я стал столицей первоначального государства, возникшего здесь еще во времена легендарного

отшельника Немуни. Считается, что он назначил царем этой земли сына пастуха коров – Гопала, погибшего от внезапной вспышки пламени. Столицей первого царства стало маленькое селение, расположенное рядом с ашрамом святого Немуни, расположенным на высоком берегу у слияния двух священных рек – Багмати и Вишнумати, где ныне находится святыня Кулешвара. Внезапно вспыхнувшее пламя, поразившее Гопала, было названо божеством Пашупати («Владыка живых существ»), поскольку здесь жили племена, которые пасли коров, а позднее – буйволов. Так появилась в долине первая правящая династия царей из пастухов – Гопала-вамша. Со временем ее сменила династия Махишапала. Древнее селение, где жили племена пастухов, по-видимому, называлось Йен-бун – «земля царя богов Индры». Тогда люди почитали Индру, даровавшего им дождь, чтобы влага напоила траву на корм домашним животным. Недаром же до сих пор центральная площадь столицы носит имя в честь царя богов – Индрачок. Но, кроме старинных топонимов, никаких других исторических свидетельств того далекого времени не сохранилось, и невозможно определить точную дату моего возникновения как столицы.

Достоверная датировка начинается лишь со второго столетия нашей эры, когда здесь стала править династия Вармы. Имя царя Джай Вармы (II в.) высечено на постаменте каменного памятника, установленного в 185 году нашей эры. Эту дату можно считать также и днем моего рождения. Неизвестно, какое имя было у меня тогда, хотя в этих местах располагались два селения – Колиграм и Дакшина-Колиграм, но монумент царю Джай Варме был воздвигнут на той самой земле, где я стою и поныне. Это скульптурное изображение царя было обнару-

жено только в мае 1992 г. и теперь, после реставрации, находится в Национальном музее Непала.

Многие прославленные цари из династии Вармы и Личчхавов правили после Джай Вармы. Например, Манадева Первый (V в.), славный царь из династии Личчхавов, установил в 464 году каменный столб, на котором высечена целая поэма о подвигах как его самого, так и его предков, сменивших царей из династии Вармы. А вельможа Аншу Варма (VII в.), женившийся на принцессе из рода Личчхавов, сам впоследствии стал прославленным царем, проявив недюжинные административные и дипломатические способности. Аншу Варма породнился с влиятельным правителем Тибета, выдав за него свою прекрасную дочь Бхрикути. Основав династию Тхакури, Аншу Варма учредил новое летоисчисление и прославил свой род на века. Именно при нем и при царях из династии Личчхавов я испытывал радость за расцвет столицы. Недаром ученые мужи называли это время, когда бурно развивались литература, культура, зодчество, когда крепла государственность, «золотым веком».

Приведу лишь один пример. Буддхакирти, придворный поэт царя Джайдева Второго (VIII в.), впервые в своей поэме «Пашупати-стути» (733 г.), прославил эту долину, сравнив ее с восьмилепестковым лотосом:

Как прекрасна эта земля – Пашупата-
кшетра,
окруженная гималайскими вершинами!
Алтарем божеству служит сверкающая
обитель
из каменной глыбы Мерушилá,
Подобная распустившемуся серебряному
лотосу
с восемью изящными лепестками,

Изготовленному по указу царя
для поднесения Шиве при обряде пуджи.

Эту поэму, сочиненную на санскрите, и сегодня можно прочесть на каменной плите, установленной в юго-западном углу площади, где стоит храм Пашупатинатха на берегу священной реки Багмати.

На стыке двух эпох, в начале средневековья, правителем этих земель был Гунакамадева (VIII в.). В 3824 году по летоисчислению Калигата (723 г. н.э.) он, объединив в единый город два селения, Колиграм и Дакшина-Колиграм, существовавшие со II века нашей эры, основал город в форме меча, установив в центре храм Шиве – Кантешвара, а на восьми углах – святыни восьми богинь-матерей – Аштаматрика. Город получил название Кантипур по имени божества Кантешвара. Если привести воображаемую линию, соединяющую все восемь святынь богинь-матерей, то получится силуэт меча-кхадга, атрибута богини Дурги, символа силы в индуизме, а в буддизме – символа знания, атрибута бодхисаттвы Манджушри. Как бы то ни было, город имеет форму меча, рукоять которого находится на юге, а острие – на севере.

Столичный город бурно развивался при правлении раджей из династии Тхакури. Центром этого царства был именно я, несмотря на то, что в средние века в долине возникли три самостоятельных княжества, так как сыновья Якши Маллы (XIII в.) разделили единое царство. Это было время феодальной раздробленности и междоусобных войн, и вплоть до середины XVIII века на всей территории нынешнего Непала существовало более полусотни княжеств! Даже в столице (то есть во мне) в те времена коллективно правили двенадцать князей из династии Тхакури – тхакуджуджу. А когда вся тер-

ритория Непал-мандала находилась под властью трех самостоятельных княжеств с правителями, принадлежащими династии Малла, столичные города, расположенные в долине, процветали.

С древних времен я, как столичный город, был окружен стенами и представлял собой крепость. Естественными преградами служили священные реки Вишнумати и Багмати, на берегах которых находится множество святынь. Со всех сторон меня окружают святыни индуизма и буддизма. На территории самого города находится множество индуистских храмов, буддийских ступ (чаитья), и даже исламских мечетей. Не случайно ведь иноземные гости говорят, что в Катманду больше храмов, чем домов, и больше богов, чем людей! Северная часть города получила неварское название «тхане» («верхняя часть»), а южная – «кване» («нижняя часть»). Между ними расположен царский дворец, который позднее, во время правления раджи Пратапа Маллы (1641-1674 гг.) получил название Ханумандхока, поскольку у главного входа во дворец было установлено изваяние бога-обезьяны Ханумана.

В средние века город был разделен на тридцать два квартала и каждый из них имел отдельный вход и собственную крепостную башню-кватха. До сих пор можно увидеть остатки ворот, некоторые топонимы также указывают на их существование. Ночью ворота запирались, чтобы никто не смог проникнуть в город. И поныне все традиционные праздники и шествия колесниц божеств происходят внутри этой условной линии старого города. Раз в год жители столицы совершают обход города по внешней линии крепостных укреплений, зажигая лампады в разных точках пути. Этот обход на языке невари называется «упагу».

Многие непальские поэты и писатели разных эпох, пишущие на языках невари (непал-бхаша) и непали, прославили меня в стихах и прозе. К примеру, в пьесе «Появление Ратнешвара» («Ратнешвара прадурбхава»), написанной во время правления последнего раджи из династии Маллы Джая Пракаша, помещен гимн городу Кантипуру:

Благие приметы Ка́нтипура прекрасны
и достойны.
Разве сравнится с ним по красоте даже город
самого царя Рая – Индры?
Здесь обретается богиня Таледжу вместе
с живой богиней Кумари.
Здесь же обитают Пашупати и Гухьяшвари,
несущие благо людям.
Здесь люди понимают и суть религии,
и благость долга.
С двух сторон эту святую землю обтекают
священные реки.
Правит здесь мудрый царь Джай Прака́ш
Малла великий,
Пусть вечно царит здесь блаженство,
по благословлению поэта!

Так прославили меня разные поэты, писавшие на санскрите, невари (непал-бхаша), маитхили, а позднее – на непали. Не буду цитировать все стихи, посвященные мне. О возникновении моего современного официального имени бытует легенда, согласно которой райское Древо Желаний – Калпаврикша, прибывшее на землю в облике человека, было узнано, и по просьбе людей подарило им чудесное дерево, из древесины которого было возведено огромное здание, получившее название Каштхамандапа – «деревянный храм». По названию этого грандиозного деревянного храма я и получил новое имя – Катманду.

Вот как это было. Притхви Нараян Шах (XVIII в.), раджа из маленького горного княжества Горкхи, расположенного к западу от Большой непальской долины, начал поход ради объединения обширной гималайской страны. Он подчинил себе три могучих княжества этой процветающей долины, где правили раджи из династии Мала. Так возникло единое государство. Притхви Нараян Шах назвал меня Катманду (сокращение от Каштхамандапапури) и именно меня в 1768 году объявил столицей Непала. С тех пор я перестал официально называться Кантипуром.

Тем не менее, непальские поэты и писатели и ныне склонны называть меня этим именем. Например, известный непальский поэт-пионер Бхану Бхакта Ачарья (1814-1869 гг.) величал меня именем Кантипур, сравнивал с райским городом Амаравати, даже тогда, когда мне дали нынешнее имя – Катманду. Позвольте все-таки цитировать здесь два первых четверостишия-шлока непальского поэта-пионера, основателя современного литературного языка непали, Бханубхакты Ачарьи. Вот как описывает он меня в гимне «Город Кантипури»:

Здесь нарядные дамы, как павы, плывут,
Грациозно нарциссы в прическах несут.
Их подруги идут, ту красу повторив.
Как Амара́вати, славен Ка́нтипури!
Сосчитать невозможно богатых людей,
Ведь все очень довольны здесь жизнью своей.
В счастье море людей – как в сиянье зари!
Как Амара́вати, славен и Ка́нтипури!

За прошедние по крайной мере две тысячи лет многое изменилось в моей жизни. Цари из династии пастухов – Гопала-вамша и Махишапала-вамша (прибл. до VII в. до н.э.) были побеждены киратскими племенами, прибывшими сюда с

востока во главе с Яламварой, основателем династии Кирата-вамша (ок. VII в. до н.э. – I в. н.э.), а эту династию сменила династия Вармы (ок. I– III в. н.э.) и Личчхави (ок. III– IX в. н.э.). Каждая эпоха вносит что-то новое, изменяя и улучшая облик города. Однако в последнее время влияние урбанизации все же нельзя назвать положительным. Из-за строительства современных жилых домов и высоких зданий иссякли многие изящные фонтаны – дхунгедхара; облик города становится уродливым.

Я уже говорил, что к западу от меня течет река Вишнумати, к востоку – Багмати, а сам я расположен в северной части долины Катманду. Священные реки, окружающие меня с трех сторон, превратились в грязные потоки, стали узкими, вместо чистого песка берега заросли кустарником, разрушены каменные ступени спусков к воде для омовения паломников, город выплеснулся за пределы этих рек и даже бывшие места кремации теперь окружены домами. Когда-то у моих ног протекала речушка с таким сладким названием Икшумати (*нев.* Тукуча) – «река сахарного тростника». Ныне люди загадили ее и застроили берега своими жилищами. Созерцая такую плачевную судьбу прекрасной природы, некогда меня окружавшей, я порой хочу плакать. Горожане выступают за сохранение объектов культурного наследия, стоящих по берегам священных рек, требуют принятия мер по улучшению экологии. Власти обещают наполнить реки водой, проведенной по туннелю из других рек, текущих за горами, обещают насадить деревья вдоль дорог по берегам Вишнумати и Багмати. Конечно, нынче я вырос и превратился в мегаполис. За пределами моей старинной границы появилось множество современных жилых кварталов, общественных и частных зданий. В последнее время, особенно

после разрушительного землетрясения 2015 года, горожане стали бережнее обращаться с культурным наследием прошлого и требуют воссоздать изящный и неповторимый облик своего многовекового города.

Мои жители с незапамятных времен ежегодно отмечают восьмидневный красочный праздник в честь царя богов – Индра-джатра. Ведь именно во время этого праздника, когда раджа Кантипура Джай Пракаш Малла и его подданные веселились, участвуя в шествии колесницы живой богини Кумари по моим улицам, воины под предводительством Притхви Нараяна Шаха, раджи княжества Горкхи, захватили город, ворвавшись в него с трех сторон, и победитель объявил меня столицей единого Непала. Ни одна столица среди полусотни средневековых княжеств на раздробленной территории страны, не смогла превзойти меня в красоте и могуществе. Именно по этой причине я получил титул столицы нового гималайского государства – Непала.

Надеюсь, что жители в ближайшем будущем станут ежегодно отмечать мой день рождения. Для такого случая вполне подойдет праздник Индраджатра – с танцами и спектаклями уличных театров, с шествиями колесниц живой богини Кумари и сопровождающих ее живых божеств Ганеши и Бхайравы. Именно во время этого праздника я получил официальный статус столицы вновь появившегося на карте мира нового единого государства Непал. Тем более, что мне очень по душе мое старинное имя, которым пользуются и ныне коренные жители долины Катманду. Они до сих пор ласково зовут меня «Йен» или «Йен-деша» – «Город царя богов Индры».

Каждый, кто посещает столицу Непала, непременно обращает свой взор на высокий трехъярусный

храм богини-покровительницы гималайского государства Туладжи-Бхавани (*нев*. Таледжу), расположенный в самом центре города у старинного дворцового комплекса Ханумандхока. Еще в середине XX века никто, даже король, не имел права строить дом выше этого храма. Рядом находится трехэтажный дворец-храм, известный в народе как «Кумари-гхар» (букв. «дом Кумари»), который был возведен в стилистике непальских монастырей последним раджей Кантипура (Катманду) Джай Пракашем Маллой в честь живой богини Кумари, являющейся земным воплощением богини Таледжу. Эти два храма, расположенные недалеко друг от друга с двух сторон дворцовой площади, и на этот раз, в 2015 году, выдержали сильнейший удар землетрясения, в то время как стоявшие рядом несколько храмов, являвшиеся украшением моего центра, превратились в груду кирпичей. Но сейчас все культурные сооружения, пострадавшие от землетрясения, реставрируются и восстанавливаются.

Все иностранные туристы непременно посещают старинный квартал в моем центре не только чтобы любоваться красотой архитектурных памятников, но и… с надеждой, что им улыбнется судьба и они смогут увидеть, хотя бы издалека, сверкающий лик живой богини Кумари, появляющейся иногда возле украшенного изящной резьбой священного окна на третьем этаже дворца-храма Кумари.

Приглашаю всех друзей разных стран, а особенно россиян, посетить мою обитель! Я всегда рад встретиться с вами. Ведь в Непале гость считается божеством, и с незапамятных времен существует изречение: «Атитхи дево бхава» – «Гость – это бог»!

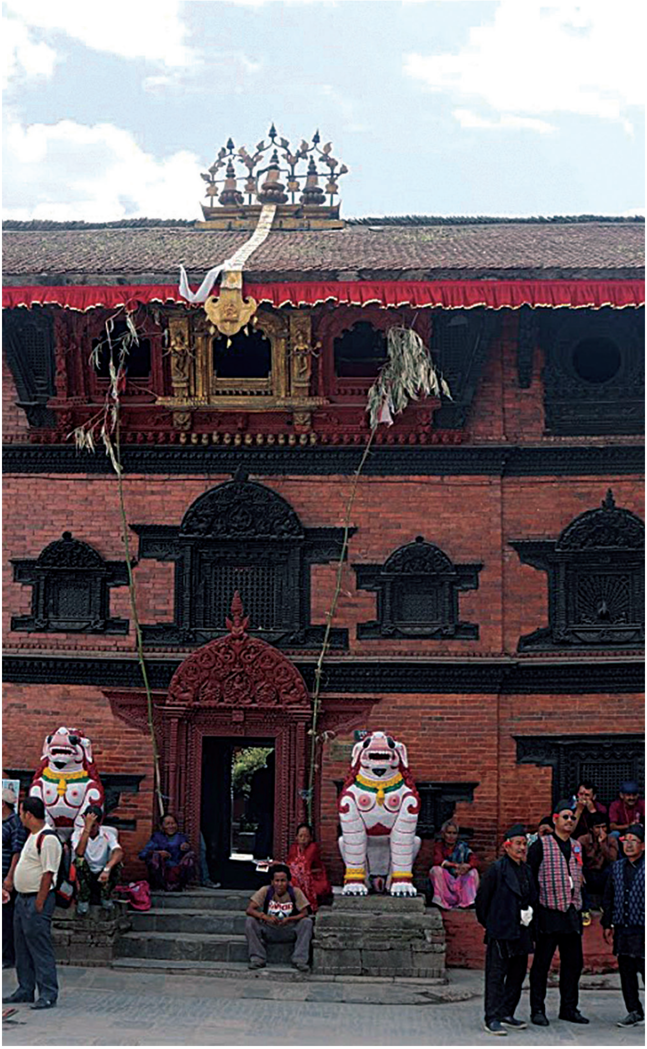

दिनेश अधिकारी

काठमाडौंः खामभित्रको प्रतिक्रिया

अलिकति दुर्घटनाका कथाहरू दोहोर्याएर
अलिकति व्यस्तताका छट्पटीहरू फोएर
अलिकति नीरवताका आँसुहरू छचल्काएर
कतै लामा-लामा जेब्रा-क्रसहरूले अल्मल्याएर
कतै – रातो, पहेंलो र हरियो –
सिग्नल-लाइटले तर्साएर
अघाउञ्जेल शहर नघुम्दै र रहर नमेट्दै
सडक -
जो बालाचतुर्दशीमा सदबीज छर्न आउने गाउँलेलाई
सडक -
जो वर्षौंवर्षौंको घर-सल्लाहपछि
'नेपाल' हेर्न आउने ठूल्ठूली र कान्छीलाई
सडक –
जो जागीरको धूनमा हाम्फाल्दै आउने
अशिक्षित देशका शिक्षित बेकारीलाई
शुरुमै दुर्घटनाको सङ्केत दिएर फर्कन प्रेरित गर्छ
यो सडक काठमाडौं हो।

Динеш АДХИКАРИ

КАТМАНДУ:
СОВЕТЫ ИЗ ПОЧТОВОГО КОНВЕРТА

Перебирая рассказы о разных катастрофах,
Чувствуя, как нарастают беспокойство
и напряжение,
Как слезы бессилия наворачиваются на глаза,
Путаясь порой в знаках пешеходных переходов,
Пугаясь порой красно-желто-зеленого света
светофоров,
Ненасытно блуждая по городу,
Не в силах удовлетворить свое любопытство...

Улица –
Жителям деревни,
Пришедшим посеять *сатабиджа*[*][1] в день
балачатурдаши[2],
Улица –
Сестрам, старшей – Тхули, младшей – Канчхи,
Прибывшим, по совету своих родичей,
посмотреть «Непал»,
Улица –
Всем, образованным и полуграмотным,
Спешно прибывшим в столицу
В поисках должности на государственной службе –
джагир,
Улица – всех их призывает вернуться обратно,
Предупреждает о грозящей каждому опасности,
Ведь это – улица Катманду!

---

* См. примечания на стр. 44-45

○ ○ ○

तिमी जो गुन्यूँ-चोलीको सभ्यतामा हुर्किएकी छ्यौ
तिमी जो ऐंचो-पैंचो र पर्ममा रमाएकी छ्यौ
भेटघाटको रहरले हर्हराएर जाँदा
माइतीले ढोका थुनेको हेर्न चाहन्न्यौ भने
बिन्ती ! यो शहरमा नआउनू
मेरो यहाँको आगमन
आफ्नै भाइले आफूमाथि बलात्कार गरेजस्तो लागेको छ
आफ्नै बाबुले आफूमाथि हातपात गरेजस्तो लागेको छ
म त बारम्बार भन्दै आइरहेछु
यो शहर -
छिमेकी जसले तिम्रो घर लुट्न पठायो – त्यही हो
बेलीबिस्तार लगाएर फेरि भन्छु, सुन !
यहाँ आएर तिमीले हेर्ने
लामा र फराकिला अलकत्रे सडक न हो
त्यो तिम्रै घरअगिल्तिरबाट गोरेटो खन्न छुट्याइनुपर्ने
तर नछुट्याएर हड्पेको राष्ट्रको बजेट हो
यहाँ आएर तिमीले हेर्ने
घण्टाघर, धरहरा, होटल र अग्ला ठूला महल न हो
त्यो तिम्रो गाउँमा
पँधेरो, फड्के र कुलो बनाउन दिनुपर्ने रकम नदिएर
तिम्रो विरुद्ध रचिएको षड्यन्त्रको प्रतिफल हो
षड्यन्त्रकारी, जो आफूमै सीमित रहन्छ
उसले छिमेकी र आफन्त पनि भन्दैन
काठमाडौं यस्तै छ ।

* * *

Если ты выросла, следуя заветам старины – *гунью-чоло*,
Если ты встроена в бартерную систему – *аинчо-паинчо*,
И в систему взаимной выручки – *парма*,
Если не боишься увидеть закрытой дверь
родительского дома,
Когда торопишься на встречу с родственниками,
Умоляю тебя, сложив ладони в жесте *бинти*[3]:
Никогда не посещай этот город!
Я, пребывая в нем, чувствую себя так,
Словно родной брат издевается надо мной!
Словно отец избивает меня кулаками!
И я повторяю вновь и вновь:
Этот город –
Место, где соседи наводят на твой дом грабителей!
Слушай! Я повторяю серьезно и внятно:
Здесь тебя ждут
Лишь широкие, длинные асфальтированные улицы!
Правда, в бюджете города есть средства,
Выделенные на благоустройство дома, в котором
ты будешь жить.
Однако кто-то присвоил себе эти деньги,
Не думая о необходимости улучшить твою жизнь!
Если приедешь сюда, будешь видеть только
Две часовые башни – *Гхантагхар*[4] и башню-минарет
Дхарахара[5],
Да еще небоскребы и дорогие гостиницы!
Их строительство обошлось в кучу денег,
Которые должны были отправить в твою деревню,
Чтобы создать там мост, водоем, канал!
И все то, что ты здесь увидишь,
Построено на средства, отнятые у твоей деревни!
Все – результат действий, направленных против тебя!
Ведь действующий всегда заботится только о себе,
Не думая о других, даже о ближних своих.
Вот каков город Катманду!

○ ○ ○

काठमाडौं !
जसले तिमीलाई पहिले र अझै बलात्कार गर्दैछ
विश्वास गर !
जेब्रा-क्रस र सिग्नल-लाइटले तर्साउनु बाहेक
यसले तिमीलाई केही पनि दिंदैन
काठमाडौं -
आफ्नो अगेना चिसियो भने
माग्न जाँदा छिमेकी अगेनाको आगो दिंदैन
तिमी, छिमेकी र आफन्त मर्दा
काठमाडौं -
तिम्रो लाश उठाउन मलामी दिंदैन
हुन सक्छ भने यहाँ नआउनु नै श्रेयस्कर छ ।।

---

[1] *Сатабиджа* (*неп.* «семена ста злаков») – смесь зерен разных злаков, которые разбрасывают паломники на территории Пашупатинатха в четырнадцатый день темной половины месяца *мангашира* (ноябрь). Считается, что такое действо способствует спасению души усопших родственников.

[2] *Бала-чатурдаши* – четырнадцатый день темной половины месяца *мангашира* (ноябрь), когда люди, особенно представители семьи, в которой умер в течение года кто-то из родственников бросают, т. е. символически сеют семена ста (по другой версии – семи) зерновых культур на территории священных мест, например, в районе храма Пашупатинатха, известного в древности, как Шлесмантак-бан и Мригастхали. Эти семена получили название *«шат-бидж»*, т.е. «сто семян». Ритуал сеяния *сатабидж*а способствует обретению душами умерших покоя в мире ином. Накануне этого дня люди, у которых умерли родители, посещают храм Шивы и бодрствуют всю ночь, вознося молитвы божествам или проводя песнопение – *бхаджан-киртан*. А в день *бала-чатурдаши*, совершив омовение в священных реках и водоемах, сеют шат-бидж вокруг святыни – *тиртха-дхам*. Затем, одарив брахманов, устраивают для них трапезу – *брахмана-бходжана*.

[3] *Бинти* (намаскара, намасте) – жест приветствия *(неп.)*

* * *

Катманду!
Он всегда лжет, уж поверь мне!
Ему нечего дать тебе,
Он только пугает –
Светофорами и «зебрами» на переходах!
Катманду!
Если огонь в твоем очаге угаснет,
Никто не поможет тебе разжечь его снова!
Запомни раз и навсегда:
Лучше тебе никогда сюда не приходить!

1983 г. (2040 ВС)

---

[4] *Гхантагхар* – башня, украшенная большими механическими часами с циферблатами по четырем сторонам, расположена у здания старинного «Три-Чандра колледжа». По-видимому, премьер-министр Бир Шамшер Рана, правивший в 1885-1901 гг., хотел иметь в столице подобие лондонского Биг-Бена. Раньше жители Катманду сверяли время по этим часам, а на близлежащей площади Тундикхел стояла пушка, из которой стреляли, извещая о наступлении полудня, и раскаты ее были слышны по всей долине Катманду.

[5] *Дхарахара* – башня высотой 200 футов (61 м), построенная в стиле минарета. В 1825 г. премьер-министр Бхимсен Тхапа приказал возвести рядом с плацдармом Тундикхела две высокие башни, чтобы звуком горна со смотровых площадок поднимать по тревоге солдат. Но одна из них была разрушена землетрясением 1833 г. Уцелевшая же, известная на языке непали как *Дхарахара*, была названа в память своего создателя *Бхимсен-стамбха* (колонна Бхимсена). На самой высокой точке внутри сооружения был установлен символ Шивы – *шивалингам,* крутые ступени вели к смотровой площадке. После установления в Непале демократии в 1960-х гг. башня была открыта для публики. Землетрясение 25 апреля 2015 г. полностью разрушило *Дхарахара*, являвшуюся визитной карточкой Катманду. Ныне башню решено восстановить, используя все современные технические достижения.

चन्द्रकान्त आचार्य

काठमाडौंमा एक दिन

२०३२ साल माघ महिनाको चिसो तर घाम लागेको आइतवारको दिन थियो। बिहानको नौ बजेतिर म सधैँ जस्तै अफिस जाने हिसाबले काठमाडौं लगनटोलको डेराबाट निस्कदै थिएँ। हामी दोश्रो तलामा बस्थ्यौँ भने पहिलो तलामा हाम्रै जिल्ला अर्घाखाँची घर हुने बैनी सरिता मल्ल र कुञ्जबहादुर मल्लको परिवार बस्थ्यो। म त्यसरी अफिस जाने बेलामा सरितासँग भेट हुँदा 'अफिसतिर हो दाइ !' भन्दै उनी मुस्कुराइन्। 'खै कता हुन्छ' भन्दै म ठटयाउलो जबाफ दिदै तल झरेँ।

अघिल्लो दिन शनिवार परेको थियो र भाइ कृष्ण र उनका साथी विजयविक्रम खड्काले मसहित सरिता र कुञ्जबहादुरको जोडीलाई पाटन ढोका सिनेमा हेर्न लगेका थिए। उनीहरू विदामा घर गएर आएका र अब पढाई सुरु हुने हुँदा सिनेमा हेर्ने कार्यक्रम बनाएका रहेछन्। 'कोरा कागज' भन्ने अमिताभ बच्चन र जया भादुडीको हिन्दी सिनेमा थियो। सिनेमा राम्रो थियो, सबै रमाए। घर फर्कदा सरिताले मलाई 'कोरा कागज दाइलाई कोरा नै लाग्यो कि ?' भनेर प्रश्न गरिन्। कस्तो मनोविज्ञान बुझेकी हुन् भन्ने सोच्तै म हाँसे मात्र, जबाफ फर्काइन।

विवाह गर्ने उमेर भैसकेको तर अनुकुल नपरेको परिप्रेक्षमा म चिन्तित रहेका कुरा उनलाई थाहा थियो। मन पर्ने कन्या आफै कतै भेटाउन नसकेको र प्रस्ताव गरिने कतैतिर पनि मन नबसेकाले अब जहाँ हुन्छ गर्नुपर्‍यो भन्ने विचारले एक ठाउँमा कुरा भैरहेको र आइतवार अफिस गएपछि निधो गर्ने भनी समय निर्धारित थियो। यता शुक्रवार वेलुकी भाइ कृष्ण घरबाट आए र दाइ ज्ञानहरि आचार्यले लेखेको चिठी मलाई दिए। चिठीमा उक्त प्रस्तावित विवाहको सन्दर्भ उठाइएको र गर्न उपयुक्त नहुने धारणा प्रष्ट थियो।

चिठीको कुराले म चिन्तित थिएँ, आइतवार के भन्ने, कसरी अस्वीकार गर्ने आदि कुराले मन विचलित थियो। त्यसै पनि जीवनको लामो यात्रामा मन पर्ने साथी नभेटाउँदा थकित तन र मन अहिलेको परिवन्दमा बल्झिएको अनुभव हुँदा आफ्नो जीवन पनि कोरा कागज नै हुने सम्झदै म चिन्तित रहेको कुरा सरिताले आकलन गरेकी थिइन्। यसै प्रसङ्गमा आइतवार बिहान म अफिस जाने समयमा उनले प्रश्न उठाएकी हुन्। हो, तन मेरो डिल्ली बजारको कार्यालयतिर हिडिरहेको थियो भने मन कतै अर्कै संसारमा केही सोच्न व्यस्त थियो। यसै उहापोहमा लगनटोलबाट साँगुरो

बाटो हुँदै ओमबहाल पुगेर इन्द्रचौकतिर लागी असनको बाटो म रत्नपार्क पुगेँ। रत्नपार्कबाट वाग्बजार हुँदै अलिकति उकालो चढेर डिल्लीबजार चारखाल अड्डा पुग्न धेरै छैन, तर त्यस बेला मलाई त्यो डिल्लीबजार पुग्न सगरमाथा चढ्नुजस्तै दुरूह भयो र म जमलतिर लागेँ।

जीवनका चौबाटाहरूमा म धेरै पटक उभिएको छु र कहिले उपयुक्त बाटो रोज्ने र कहिले हिडिरहेको सही बाटो छाडेर अर्कोतिर लाग्ने पनि गर्दै आएको छु। तर त्यस दिन म रत्नपार्कको चौबाटोमा उभिएर जीवनको मूलबाटो भेटाउँन कोसिस गर्दै थिएँ। त्यस्तो मूलबाटो भेटाउँन कता लाग्ने होला भनेर म धेरै बेर उभिइरहें। अन्तमा बुढानीलकण्ठ रमेश शर्माको निवासमा जाने विचार गरी त्यता लागेँ।

यसरी म बुढानीलकण्ठ आवासीय विद्यालयको शिक्षक निवासमा रमेश शर्माको निवासको ढोकामा घण्टी बजाउन पुगेको हुन्छु। ढोका खुल्दछ तर म हेरेको हेरै हुन्छु। म सात आठ वर्षपहिलेको कीभको आराम गृहमा पुग्दछु। मैले कल्पना गरेको स्वर्गको टुक्रामा कुनै अप्सरालाई देखेथेँ। तर मैले सोंचेथेँ – “अप्सराहरूलाई पृथ्वीतलमा ल्याउनु हुँदेन, शकुन्तलाहरूले दुःख पाउँछन्।” त्यस्तो सोंचाइमा रहेर नेपाल आएको धेरै समय हुँदा पनि आफ्नो मनले खोजेकी शकुन्तला भेटाउन सकेको थिइन र जीवन बिग्रिने जस्तो लागेको थियो। तर बुढानीलकण्ठमा त्यसरी ढोका खुल्दा त्यस निवासको मात्र ढोका खुलेको थिएन, मेरो जीवनको नै ढोका खुलेको थियो अर्थात् मेरो मन-मन्दिरमा धेरै लामो समयदेखि सजिएकी देवी त्यहाँ प्रकट भएकी थिइन्। तिनी शकुन्तलाको रूपमा निर्मला थिइन् भने तिनको मनमा केही वर्षपहिले प्रवेश गराइएको व्यक्तिको नाम तिनलाई कण्ठस्थ थियो, जो अहिले उनको जीवनको ढोका ढक्ढकाउन पुगेको थियो।

तत्काल म त्यस ढोकाभित्र पसिनँ, किनभने अब म त्यस निवासको ढोकामाभन्दा पहिले आफ्नो जीवनको ढोकामा प्रवेश गर्नु थियो। त्यही कार्यलाई समय दिन म कक्षा कोठामा प्रवेश गर्न लागेका रमेशजीलाई भेट्न दौडें, जसले मलाई दुई घण्टा कुर्न भन्नुभयो। अर्कै कन्याका बारेमा कुरा गर्न गएको म जीवनको दिशा निर्धारण गरी त्यस निवासबाट बेलुकीपख फर्किएँ।

बाहिर निस्कदा फर्केर मैले त्यस ढोकालाई हेरेँ र मलाइ त्यति खुशी प्रदान गर्ने त्यस क्षणलाइ सम्झें। आज म यहाँ नआएको भए के हुन सक्थ्यो र के हुने भयो ? मानिसको जीवन कस्ता दोसाँधहरू हुँदै बित्ने रहेछ – अलिकति राम्ररी सोचेर हो या भाग्य बलियो भएर हो या बुढानीलकण्ठ भगवान् नारायणको विशेष कृपाले हो, कसरी रत्नपार्कबाट डिल्लीबजार अफिसतिर जानुपर्नेमा मेरा गोडा अनायास जमलतिर लागे भन्नेमा पुनः म घोरिइरहेँ र अत्यन्त भारी मन लिएर त्यस विद्यालयको गेटबाट भित्रिएको मानिस धेरै हलुङ्गो मन गराएर त्यहाँबाट बाहिरिएँ।

अब म काठमाडौंतिर जाँदै थिएँ। मलाई बस स्टपसम्म जान हिँड्नु परेको थिएन, किनभने मेरा खुट्टा भुइँमा थिएनन्। मैले सोच्न थालेँ अब म त्यहीं रत्नपार्क पुग्दैछु। त्यहाँबाट पूर्वतिर डिल्लीबजार यथास्थानमा होला। त्यो मेरो डेरा जाने बाटोमा पर्ने असन, इन्द्रचोक, वसन्तपुर सबै उसै गरी स्थिर मुद्रामा होलान्। तर मलाई भने के भएको हो ? यी सबै किन यति ज्यादै मन पर्न लागे ? यो काठमाडौं जसलाई मैले कहिल्यै मन पराइन, आज के भएर हो यसको छातीमा दुख्छ कि भने जस्तो गरेर मलाई खुट्टा टेक्न पनि मन लाग्दैन, यस काठमाडौंलाई म यति सारो माया गर्न थालेँ।

मेरो मनले आफै जबाफ खोज्यो – यो त्यही काठमाडौं हो जसको कुनामा मेरो आफ्नो मनको विम्ब लुकेर बसेको थियो। त्यस विम्बलाई खोज्न संसारको कुन कुनामा पुग्ने भनेर भौँतारिइरहेको वेलामा यौटा घण्टी बजाउन पुगेको थिएँ। त्यही काठमाडौंको यौटा कुनामा ढोका खोलेर त्यो विम्ब प्रकट भयो र मात्र मैले यस संसारलाई चिनें। वर्षौं देश-विदेश डुलेर चिन्न नसकेको संसारलाई ह्वात्तै मेरो अगाडि ल्याइदिएर मलाइ यति खुशी पार्ने यही काठमाडौं हो र म अब यसलाई माया गर्छु। मैले यस काठमाडौंलाई कति अनादर गरेँ ? यसको मुटुस्थलमा भित्रिए पनि कहिले सात समुद्र पारीको रूस सम्झन पुग्थेँ त कहिले सात गण्डकीपारिको वाङ्ला सम्झन पुग्थेँ। तर आज मलाई यसै भित्रका गल्ली र चोकहरूको माया लागिरहेको छ र भन्न मन लागिरहेको छ – “काठमाडौं, अब तिमी मेरो वाङ्ला सरह आफ्नै भयौ, म तिमीलाई माया गर्छु !”

बुढानीलकण्ठबाट बस चढेर अगाडि बढ्दा मैले पछाडि फर्केर शिवपुरी डाँडालाई हेरेँ, हेर्दै जाँदा नागार्जुन देखिए, थानकोट माथि माथि चन्द्रागिरि देखिए, फुलचौकी र नगरकोट देखिए र सबैतिर कति रमाइलो देखिएको हो, म अचम्म परेँ। त्यो आकाश नै हेर्दा होस् या वारिपारिका बाटा, भवनहरू हेर्दा होस् मलाई ज्यादै रमाइलो लाग्न थाल्यो। मलाई गुडिरहेकै बसबाट हाम फालेर ती बाटाहरूमा दौड्न मन लाग्यो र मलाई चिच्याई-चिच्याई भन्न मन लाग्यो – “काठमाडौंवासी मित्रहरू, हामी कति भाग्यमानी छौँ ! तपाईहरू थाहा पाउनुहोला यो पशुपतिनाथको काठमाडौं, यो बुढानीलकण्ठ नारायणस्थानको काठमाडौं, तपाई-हामीलाई कति धेरै माया गर्छ। त्यसैले हामी सबै यस काठमाडौंलाई माया गरौं !”

मलाई बसका यात्रुहरू र बाटामा देखिने मानिसहरू पनि धेरै मायालु लाग्न थाले। जता हेर्‍यो त्यतै रमाइलो, के भएको हो ? मैले यस जीवनमा केही छैन भन्ने सोचेको थिएँ। तर यहाँ त धेरै कुरा रहेछ ! यो जीवन धेरै रमाइलो रहेछ भन्ने निस्कर्षमा पुग्दै अत्यन्त निराश अवस्थामा बिहान लगनटोलको डेराबाट निस्केको म बेलुकी अत्यन्त रमाइलो मनस्थितिमा कसैलाई मनमा लुकाएर डेरामा भित्रिएँ। मेरो मनमा थियो – ‘बैनी सरिता, तिमी झट्ट मेरो सामुन्ने आऊ र सोधिहाल ! के कुरा सोध्न मन लागेको छ ?’

ऐले बल्ल म बुझ्नसक्छु धरती यै काठमाडौं तिमी
माया मोह सबैतिरै छरिदियौ छौ है तिमी धन्यकी
यौटा त्यो जुन काम उत्तम भयो आयौं सबै यै जग
कामै जो गरियो यही सहजता वास्ना छ यै मग्मग ।

कैले सम्झिरहें म ता सरसरी मस्को र यस्तै अरु
वाङ्ला त्यो मनमा सधैँ बसिरह्यो माया त्यतै थ्यो बरु
यस्तो यो खुसियालिको दिन भने ऐले मिलाइदियौ
के भन्ने कसरी कृतज्ञ हुनु हो तिम्रै खटन्मा छु लौ !

हे माता धरती ! यसै जगतकी धन्यै तिमी भैदियौ
चुम्छू यै धरती म आज तिमीले जो काठमाडौं दियौ
के भन्ने तब ता तिमी पर रह्यौ अन्यत्र नै दौडिएँ
मेरो त्यो जुन भाग्य हो सब तिमी एकान्तमा राखिद्यौ !

Чандра Кант АЧАРЬЯ

ОДИН ДЕНЬ В КАТМАНДУ

Это случилось в холодный, но солнечный день месяца магха[1]. Ровно в девять утра я вышел из квартиры, которую снимал в Лагантоле, чтобы отправиться в офис. Тогда я жил на втором этаже дома, а на первом этаже жила молодая семья, прибывшая в столицу из района Аргха-ханчи. Я подружился с ними – с Кунджем Бахадуром Малла и его женой Саритой. Сарита была младше меня, и, как принято в Непале, считала меня старшим братом – *даи*[2]. Как раз ее я и встретил, когда спустился во двор.

– Даи, уже торопитесь в офис? – Сарита лукаво улыбнулась.

В ответ я пошутил:

– Может быть, в офис, а может быть, и не в офис.

Накануне вечером друг этой семьи Биджай Викрам Кхадка пригласил их и меня с моим братом Кришной сходить в кино в Патандхока. Это была суббота, нерабочий день. С воскресенья[3] у них начиналась учеба, поэтому решили развлечься вечером в выходной. Мы вместе посмотрели индийский фильм «Чистый лист», в котором снимались знаменитые актеры Амитабх Баччан и Джая Бхадуди. Фильм всем нам очень понравился. Но на обратном пути Сарита спросила:

---

[1] Магха *(неп.)* – январь-февраль

[2] Даи (*неп.* «старший брат») – вежливое обращение к старшим по возрасту мужчинам.

[3] Рабочая неделя в Непале начинается с воскресенья.

– Даи, похоже «Чистый лист» оказался чересчур «чист» для вас?

Я лишь улыбнулся в ответ, подивившись, как легко девушка угадывает мое настроение.

Сарита знала, что я все еще холост, хотя по возрасту мне уже давно пора было обзавестись семьей. Но с женитьбой как-то не получалось, и, конечно, я не мог не переживать из-за этого. Дело в том, что желанная невеста все не находилась, а ни одна из девушек, предложенных старшими родственниками, мне не понравилась. Я раздумывал о последнем предложенном ими варианте и окончательное решение должен был принять как раз в воскресенье, после работы. Мой брат Кришна прибыл в Катманду, чтобы вручить мне письмо от нашего старшего брата Гьянхари. В письме было упомянуто о моей свадьбе, однако Гьянхари советовал мне не соглашаться на уговоры сватов со стороны семьи невесты.

Это письмо огорчило меня. Я не знал, что ответить и как мне отказаться от этого брака. Сарита уловила мои мысли и своим вопросом попала в точку: мой разум в тот момент был и в самом деле, как «чистый лист». Вот и утром, когда я отправился в офис, она снова намекнула на мое настроение. Да, тело мое направлялось в сторону офиса, в Диллибаджар, но душа-то брела совсем в другую сторону.

В таком состоянии я шел по узкому переулку от Лагантола к Индрачоку, минуя Омбахала, затем через Асану к Ратна-парку. Оттуда я направился к Багбаджару, и поднявшись по склону, уже оказался в Диллибаджаре. Мой офис в Чаркхал-адда был не так далеко, но этот небольшой подъем показался мне столь же трудным, как восхождение на Сагаматху[1]. И я повернул в сторону Джамала.

[1] Сагарматха *(неп.)* – одно из названий горы Джомолунгмы.

Не раз приходилось мне стоять на перекрестке жизни. Порой я находил нужную дорогу, а порой сворачивал не туда и в результате шел неверным путем, оказываясь в тупике. Однако в тот день, у перекрестка Ратна-парка, я пытался найти не просто верную дорогу, но главную магистраль собственной жизни. Не зная, куда идти, где искать эту самую магистраль, я долго стоял у перекрестка в глубокой задумчивости. Наконец, решил отправиться к моему другу Рамешу Шарме в Будханилакантху. И я шагнул вперед.

Дойдя до служебного дома Рамеша Шармы (он преподавал в интернате), я постучал в дверь.

Дверь открылась – и я замер в изумлении. Мне показалось, будто я вновь стою перед дверью дома отдыха в Киеве, где побывал несколько лет тому назад, будучи студентом. Будто вновь передо мной возникла та нимфа, апсара, обитавшая в моем воображаемом раю. Я подумал: «Нимфам нельзя спускаться на землю, чтобы не пришлось страдать родившимся от них Шакунталам[1]».

Именно из-за этих мыслей я тогда не женился и, возвратившись в Непал после завершения учебы, долго не мог найти свою Шакунталу. Не было для меня подходящей невесты, и я уже начал думать: «Может быть, так навсегда и останусь холостяком». Но когда открылась дверь в Будханилакантхе, я почувствовал, что это открывается дверь моей жизни. На пороге, подобно богине, явилась та, которая уже

[1] Шакунтала (Сакунтала) – дочь апсары, небесной танцовщицы, посланной богами на землю, чтобы помешать великому отшельнику свершать его подвижничество. Отшельник, согласно легенде, влюбился в райскую красавицу, но она возвратилась в рай после рождения дочери. Лесные птицы вырастили новорожденную девочку, и она поэтому стала называться Шакунталой («Выращенная птицами»).

столько лет обитала в моем сердце. Ее звали не Шакунталой, а Нирмалой. И она давно знала имя того юноши, который теперь стоял на пороге ее дома, чтобы постучать в дверь ее жизни. Вот почему я и застыл как истукан, не в силах сделать ни шагу. Ведь прежде, чем войти внутрь этого дома, мне нужно было открыть дверь своей жизни!.. Поэтому я тотчас отправился в школу, где преподавал Рамеш Шарма, и там мне пришлось ждать его целых два часа. Я шел в Будханилакантху посоветоваться с другом о своей женитьбе, о том, какой ответ мне дать сегодня вечером. Но вот вечер наступил, и я возвращался из дома Рамеша Шармы в город, уже определив свою дальнейшую судьбу.

Выйдя на улицу, я оглянулся на ту дверь, которая изменила направление моего жизненного пути. Именно эта дверь подарила мне тот счастливый миг, забыть который невозможно. Я думал: «Что могло бы произойти в моей судьбе, если бы я не пришел сюда? Что было лишь возможностью, а что случилось бы в реальности? Какие же повороты случаются в жизни человека! Почему я в тот день не пошел от Ратна-парка прямо в свой офис в Дилибаджаре, а вместо этого, почти дойдя до него, вернулся снова в Ратна-парк и направился в Будханилакантха? Что происходит со мной? Быть может, это бог Вишну, покоящийся в пруду Будханилакантха, пожелал, чтобы я побывал сегодня именно здесь? А может быть, это игра судьбы? Почему ноги понесли меня не в сторону офиса, а в сторону Будханилакантха?» Так стоял я, погружённый в свои мысли, ища и не находя ответов на свои вопросы. Когда я шёл в Будханилакантху, на душе моей лежал огромный камень, но на обратном пути я чувствовал такую легкость, что, кажется, просто летел.

Я направился в сторону Катманду. Я даже не искал остановку автобуса – ноги сами несли меня по дороге. Незаметно я достиг Ратна-парка. Диллибаджар, расположенный от него к востоку, наверняка никуда не делся. И те кварталы Катманду, что находятся на пути к моему дому – Асан, Индрачок, Васантапур и другие, тоже были на месте. Так что же случилось со мной? Катманду вдруг стал для меня милейшим городом, каким вовсе не был до этого дня. Что же произошло сегодня, если я боюсь, как бы мои сандалии не затоптали столичные улицы? Почему Катманду оказался теперь самым прекрасным городом в мире?!

На этот вопрос моя душа искала ответ, которого сам я не находил. Ведь именно в Катманду, в его неприметном уголке скрывалось создание моей мечты. Моя душа, где она только не бродила, в скольких уголках мира искала она этот милый образ. А он явился в укромном уголке Катманду именно в тот миг, когда я неожиданно постучал в дверь одного дома. Дверь отворилась, и я увидел именно ту, которую искал и не мог найти нигде в мире, хотя путешествовал по многим странам. Но именно Катманду подарил мне огромную радость, открыв лик той, о которой я прежде только мечтал. Одним словом, я осознал мир именно здесь, в Катманду.

Порой я ненавидел Катманду, задыхаясь в его утробе. А порой вспоминал далекую Россию, раскинувшуюся, как говорится, «за семью морями», где я получил образование и профессию. Порой просто думал о своей родной деревне Бангала, расположенной за семиречьем Гандаки. Но сегодня мне были милы узкие переулочки и дворики этого города. Мне хотелось от души воскликнуть: «Катманду, ты теперь для меня, как моя родная Бангала! Я так тебя люблю!»

Теперь, когда я возвращался из Будханилакантха на автобусе, я с любовью смотрел на горы, окружающие Катманду: на Шивапури, у подножия которой лежит Будханилакантха, на Нагаркот и Нагарджун, на Чандрагири, у которой расположилось селение Тханкот, и на Пхулчоки. Все вокруг было исполнено очарования. Удивительно! Никогда не думал, что Катманду окружен такими прекрасными горами. Куда бы я не обратил свой взор, на окружающие дома, на убегающие к горизонту дороги, все казалось мне прелестным. Я так радовался, что готов был выпрыгнуть из мчавшегося автобуса и припустить по дороге. Мне хотелось громко декламировать: «Друзья, жители Катманду! Мы очень счастливы, что живем в такой прекрасной столице. Где вы еще найдете такой город, в котором сияет золотой храм Пашупатинатха, а кругом святыни богов и богинь, например, изваяние спящего на Шешанаге[1] Вишну в Будханилакантхе. Ведь Катманду любит всех своих жителей! Давайте же и мы проявим любовь к нашему прекрасному городу!»

Мне нравились люди, сидящие в автобусе, мне нравились люди, идущие по дороге! Что же случилось со мной? Куда ни кину взгляд, повсюду вижу красоту! Ведь только утром я считал, что в этой жизни нет ничего достойного. Но как же я оказался не прав! Вокруг столько прекрасного, что и не счесть! Жизнь здесь прекрасна! В конце концов, я пришел именно к такому заключению. Утром, покидая свою квартиру в Лагантоле, я пребывал в унынии и раздражении, но вечером возвращался домой воодушевленный, в чудесном настроении. Если бы Сарита встретилась мне сейчас, я бы так

[1] Шешанага – священный тысячеглавый змей в индуистской мифологии.

сказал ей: «Бахини[1] Сарита! Задай мне свой вопрос еще раз!» Но час был поздний, и она не вышла.

Я вихрем ворвался в свою квартиру и, охваченный радостью, стал бормотать строки, которые сами собой возникали в моей душе:

Только теперь я начал понимать: весь
земной шар помещается в Катманду.
О Катманду! Ты так щедр, что даришь всем
красоту и любовь!
Одно прекрасное дело совершил ты и для меня,
и весь мир воплотился в тебе.
Ты творишь чудеса, преображая всё вокруг,
и радость охватывает каждое сердце!..

Порой я думал о Москве, а порой – обо всем
остальном мире.
Бангала, где я родился, все время была
в моем сердце, и я любил ее.
Но только сегодня у меня такой чудесный
и радостный день.
Не знаю, что сказать, как мне тебя благодарить.
Мой низкий поклон тебе, Катманду!..

О родная земля! Щедрее тебя нет на свете!
Целую сегодня эту землю Катманду, что ты
подарила мне.
Родная земля, ты теперь далеко,
я оставил тебя,
Но сохрани мою судьбу, что ты подарила мне,
в тишине и покое!

[1] Бахини (*неп.* «младшая сестра») – вежливое обращение к младшим женщинам.

प्रभा आचार्य

पहिले सुनसानको फाइदा, अहिले भिडको आड

अट्ठाईस-तीस वर्षअघिको कुरा हो । त्यो समय म तीन छोरीकी आमा भए पनि त्यस्तो उमेर गएको देखिन्न थिएँ । भनौँ मलाई भरसक त विवाहित पनि भन्दैन थिए कतिले । त्यतिबेला गीत रेकर्ड गराउने उद्देश्यले केही समयको निम्ति म काठमाडौं गएकी थिएँ । एक दिनको कुरा हो, त्यो दिन शनिबार थियो । म लगनखेल दिदीकोमा बसेकी थिएँ । मलाई कमलादी रेकर्डिङ स्टुडियोबाट तुरुन्त फोटो खिचेर लिएर आउनु भन्ने फोन आयो । म हतारको साथ उक्त ठाउँमा गएँ । त्यहाँ पुगेपछि म फेरि फोटो खिच्न भनी कमलादीबाट फोटो स्टुडियो खोज्दै पुतलीसडकतिर लागेँ । यस्तै दिनको १–२ बजेको हुँदो हो । दिन धुम्म थियो । मान्छेको आवतजावत थिएन । छिटपुट ट्याक्सी र बाइकहरू एक–दुईवटा गुडिरहेका थिए ।

म आफ्नो धुनमा घोप्टिएर सडकको दाहिने किनाराबाट पुतलीसडकतिर गइरहेकी थिएँ । म नितान्त आफ्नो एकसुरमा हिँड्दै थिएँ । अचानक म झसङ्ग भएँ । कता–कता मेरो छेउमा एउटा बाइक बिस्तारै गुडिरहेको आभास मलाई भयो र यसो टाउको उठाएर त्यो बाइकतिर हेरेँ । दुईजना मानिस सवार थिए । ती दुवैले चस्मा र माक्स लगाएका थिए । मैले यसो हेर्नासाथ त्यो बाइक कुदाउनेले चाहिँ मलाई टाउकोको इसाराले कहाँ गएको ? भने जस्तो गर्‍यो, तर मैले वास्ता गरिनँ ।

म आफ्नो सुरमा हिँडिनै रहेकी थिएँ । फेरि उसरी नै बाइक मेरै छेउमा ल्याएर बिस्तारै गुडाउन थाल्यो । म छक्क परेँ । किन यो मान्छेले बाइक पनि मान्छे हिँडाए जसरी बिस्तारो चलाएको होला भनेर । यसो पुलुक्क हेरेको त पछाडि बस्ने मान्छे गायब । अनि त त्यो मान्छेले म सँगसँगै बाइक बिस्तारै गुडाउँदै कहाँ जाने हो ? म पुर्‍याइदिन्छु भन्न थाल्यो । मैले पनि भनिरहेकी छु – काहीँ टाढा होइन, यही पुतलीसडक हो भन्दा पनि त्यो मान्छे बाटो नै रोक्न खोजेर एकोहोरो म पुर्‍याइदिन्छु भन्छ । म पनि रिसाएर जवाफ दिइरहेकै छु कि म आफैँ जान सकिहाल्छु नि । तपाईंलाई केको साह्रो पर्‍यो हँ ?

अँ हँ … त्यो मान्छे टर्नेवाला छैन । त्यसपछि त त्यसले मलाई बाटो नै छेक्न खोजेर 'नाम के हो ?' भन्दै एकोहोरो सोध्न थाल्यो । मैले निकै रिसाएर जवाफ दिए पनि त्यो मान्छे टर्नेवाला छैन । मलाई हिँड्न पनि दिँदैन । एकछिनपछि त 'मलाई तिमी मन पर्‍यो' पनि भन्न थाल्यो । मैले बेस्सरी कराएर गाली गरेँ र पनि जाने नाम लिँदैन । मैले

आफ्नो सही कुरा भनेँ, म तीनजना बच्चाकी आमा हुँ। म बुढी भइसकेको मान्छे भन्छु। अँ हँ !.. पत्याउँदैन । कसै गर्दा पनि नछोड्ने भएपछि मैले फोन गरेर मेरो मान्छे बोलाउँछु भनेर डर देखाएँ। त्यसपछि चाहिँ त्यो मान्छे बल्ल अलिक स्पिडमा गयो कमलादी मोड काटेर।

म ढुक्क भएँ। बल्ल पिछा छाड्यो भनेर र म पुतलीसडकको दाहिनेतिर स्टुडियो खोज्दै लागेँ। अहिलेको जस्तो पुतलीसडक भिड थिएन। धन्न एबीसी या यस्तै नाम भएको स्टुडियो भेटेँ र फोटो खिचाएँ। मैले त त्यो मान्छेलाई बिर्सिसकेकी थिएँ। फोटो इमर्जेन्सी छ भनेर दुई घन्टा पर्खिने आग्रह गरे स्टुडियोवालाले। म बसिरहेकी थिएँ फोटो पर्खेर, त्यो दिन शनिबार परेकोले सबैतिर बन्द थियो। खै, किन हो त्यो स्टुडियोचाहिँ खुला भएर मैले मौका पाएँ।

केही समयपश्चात् मेरो आँखा बाटोपारितिर पुग्यो। यसो हेर्छु त त्यही मान्छे ठिक अगाडि बाटोमा बाइक रोकेर मलाई नै हेरिरहेको छ। अनि त मलाई डर लाग्यो। मैले त्यो स्टुडियोको केटालाई भनेँ। 'भाइ हेर्नु न ऊ परको त्यो मान्छेले मलाई अघि पनि निकै पिछा गरेर दिक्क लायो। बल्लबल्ल म यहाँसम्म आएँ। मैले रिसाएपछि त गएको थियो। ऊ परबाट हेरिरहेको छ भाइ। मलाई मद्दत गर्नु न। त्यसले मेरो पिछा छाड्दैन जस्तो छ। मलाई कमलादीसम्म पुऱ्याइदिनु न भनेँ। त्यो केटो त उल्टो डराएर 'होइन.. आज शनिबार हो पसल बन्द गर्नुपर्छ। बरु म फोटो दिन्छु तपाईं आफैँ जानुहोस्' पो भन्छ। त्यसपछि त मेरो हंशले ठाउँ छोड्यो।

मलाई निकै डर लाग्न थाल्यो। त्यो चण्डाल परबाट उसरी नै घुरिरहेको छ। त्यो लाछी केटोले त सहयोग गर्नुको सट्टा मलाई बाहिर निकालेर हतारहतार पसल बन्द गरेर बाटो लाग्यो। म दोधारमा परेँ। अब के गरूँ ? भयो। यसो हेरेको अलिक पल्लोपट्टि टेलिफोन भएको एउटा किराना पसल खोल्दै गरेको देखेँ र हतारहतार त्यतातिर लागेँ, त्यो मान्छेले अझै मलाई निगरानी गरिरहेकै थियो। मैले ब्यागबाट डायरी निकालेर घरमा फोन गरेँ। घरमा पनि दिदीकी छोरी मात्र थिई, फोन उठाई। मैले वृत्तान्त कुरा उसलाई भनेँ। उसले म साथीहरूलाई फोन गरेर त्यो ठाउँमा जाउ, भन्छु। त्यहाँबाट तपाईं कतै नजानु भनी। म त्यहीँ उभिइरहेँ।

केही समयपछि उसका दुईजना साथीहरू आए। ती दुई केटा आएर मेरोछेउमा बाइक रोक्नासाथ त्यो मान्छे टाप ठोक्यो। ती केटाहरूले देख्दै देखेनन्। मैले उल्लु बनाएजस्तो भयो। केही समय तिनीहरूले पर्खिए, त्यो मान्छे गायब भयो। अनि ती केटाहरूले भने आन्टी हामी जान्छौँ, अब त्यो नआउला, नडराउनुहोस् भनेर बिदा मागे। मैले पनि नाइँ भन्न सकिनँ उनीहरू बाटो लागे। केही समयपछि त त्यो मान्छे फेरि प्रकट भयो। अब भने झन् मेरो हंशले ठाउँ छाड्यो। म निकै त्रसित भइसकेकी थिएँ।

त्यो मान्छे त्यहीँ टहलिरहेको थियो फेरि मैले अर्को ठाउँमा फोन गरेँ जुन व्यक्तिसँग मेरो भेटघाट थिएन। ऊ मेरो रचनाको शुभचिन्तक थियो। हाम्रो निकै समय अघिदेखि पत्राचार हुन्थ्यो। त्यो समय उसको फोन नम्बर मसँग थियो र मैले उसलाई प्रत्यक्ष नदेखे पनि उसको विचार र भावना मलाई राम्रै लाग्थ्यो। मैले उसलाई फोन गरेर आफ्नो अवस्थाबारे बताएँ, ऊ पनि आधा घन्टापश्चात् आयो। त्यो मान्छे उसरी नै पारिबाट मलाई वाच गरिरहेको थियो, जब मेरो मित्र पनि उसरी नै हेल्मेट कालो चस्मा र माक्समा आयो। पहिला त उससँग नै म त्रसित बनेँ उसरी नै। तर जब उसले माक्स र चस्मा खोलेर मलाई छेउमा आएर भन्यो म नै हुँ फलाना भनेर। त्यो देख्नासाथ त्यो अघि टाप ठोकिसकेको रहेछ। हाम्रो पनि नयाँ भेट थियो हामी एकछिन त्यहीँ उभिएर कुरा गर्दै थियौँ। केही समयपछि त एउटी युवती पछाडि राखेर फेरि त्यो व्यक्ति त हाम्रै छेउबाट हुइयँ बत्तिएर गयो। सोचेँ यसले फेरि कुन युवतीलाई मुर्गा बनायो भनेर। त्यसपछि म कमलादीतर्फ नगई सिधै लगनखेलतिर लागेँ। ती मित्रले एउटा ट्याम्पो खोजेर ल्याए। अनि म टेम्पोमा बसेँ। उनले लगनखेलसम्म स्कर्टिंग गर्दै पुर्‍याइदिए मेरो सुरक्षाका लागि।

अहिले सम्झिन्छु काठमाडौंको यो भिड, कोलाहल र ट्याक्सी–गाडीको ठेलमठेल भिडमा त्यो निष्पट सुनसान काठमाडौं कति निरीह थियो। जाडो मौसमको कारणले त्यो दिन त मैले एउटै पैदलयात्री देखिनँ। कमसेकम कोही–कोही हिँडिरहेको देखिएको भए, ट्याक्सी, गाडीको चहलपहल भएको भए पनि त त्यस्ता आपराधिक मनस्थितिहरूले दिउँसै नारीहरूलाई पापी आँखाले हेर्ने हिम्मत गर्न सक्दैनथे होला।

म विगतको शून्य काठमाडौं र अहिलेको कोलाहलमय काठमाडौंलाई दाँजेर सम्झिन्छु। त्यो समय सुनसानको फाइदा उठाउने पापिष्ट आँखाहरू पनि उत्तिकै सल्बलाएका थिए भने अहिले भिडको फाइदा उठाएर पनि उसरी नै कोलाहलबिच नारी आवाजलाई चुप गराएर बलात्कार र मृत्युको सजाय दिने दुष्टहरूको कमी छैन। अनि त कसरी आफ्नो अस्मिता र जिउको संरक्षण गर्न सक्ने ? गाउँबाट आफ्नो जीविकोपार्जन गर्न आउने ती अञ्जान र निर्बल नारीहरूले।

म त केही हदसम्म चलाख नै थिएँ र शिक्षित पनि। म आफ्नो चलाखीपनले नै त्यो दिन आफूलाई सुरक्षित गर्न समर्थ बनेँ। नत्र म पनि अञ्जान र सोझी भएकी भए यतिबेला कुन अवस्थामा कहाँ पुर्‍याइएकी हुन्थेँ हुँला ? कहिलेकाहीँ २८–३० वर्षअघिको त्यो पल सम्झिँदा जिउमा काँढा उम्रिन्छ। त्यसैले काठमाडौं देशको राजधानी जसरी भएको छ उसरी नै अपराधीहरूको पनि मनोमानी गर्ने स्थल भएको थियो उसबेला पनि र अहिले पनि।

हरेक नारीले आफूलाई सचेत बनाएर नहिँड्ने हो भने दिनमा सयौँ अबला नारीहरू यस्ता नरपिशाचहरूको पञ्जामा पर्न सक्छन्। तर, समयले कोल्टे फेरेको छ। हरेक

प्राविधिक कुराहरूको सहजताले गर्दा अब त्यो समयजस्तो नारीहरूले त्रसित पक्कै हुनुपर्दैन। आफूलाई सजग बनाएर हिँड्नु हो भने ती पापिष्टका आँखाहरूले गिद्धे नजर लाउन हिम्मत गरिनहाल्लान् भन्छु म।

त्यो घटना घटेको लगभग २–४ वर्षपछि म र मेरो श्रीमान् बागबजार (खसीबजारछेउमा) केही मित्रहरूसँग उभिएर गफ गरिरहेका थियौँ। त्यही मान्छेलाई मैले त्यही ट्र्याकसुट र त्यही अवस्थामा बाइकमा जाँदै गरेको देखेँ। मैले पनि यसो हेरेँ, त्यसले त झन् मलाई प्रस्टै चिन्यो कि क्या हो हेर्दै–हेर्दै हुरुरु बाइकमा गयो। अनि सम्झिएँ– त्यसले त्यसबेला मलाई आफूतिर आकर्षित गर्न भनेका वाक्यहरू। मैले 'म त तीनवटा बच्चाकी आमा' भन्दा पनि त्यो लम्पटले नपत्याएर मलाई एकोहोरो ढुकेर पर्खिएको त्यो पल। जिन्दगीमा कस्ता–कस्ता मान्छेहरूसँग भेट हुँदोरहेछ ? सम्झेर आफैँ आश्चर्यचकित हुन्छु।

Прабха АЧАРЬЯ

ТОГДА ОНИ ИСПОЛЬЗОВАЛИ ТИШИНУ, А СЕЙЧАС – ШУМ И ГАМ

Это случилось лет тридцать назад. Я уже была матерью троих детей, но на мою внешность это никак не повлияло. Меня даже иногда принимали за незамужнюю девушку. На то время пришелся мой визит в Катманду – надо было записать диск с моими песнями. И вот однажды, в субботний день, когда все офисы были закрыты, а я гостила в доме своей старшей сестры, в районе Лаганкхел, мне позвонили из студии звукозаписи, расположенной в Камалади:

– Приходите и не забудьте принести свою фотографию!

Я спешно отправилась в студию. Но фотография, которую я принесла, не годилась для печати на грампластинках. И я пошла от Камалади в сторону улицы Путали-садака – там находилась приличная фотостудия. Дело было после полудня. День был пасмурный, и улицы были практически пусты. Лишь время от времени по мостовой в обе стороны проезжали случайные такси и мотоциклы.

Я шла по правой стороне улицы, думая о своем и ни на что не обращая внимания – ни на шуршанье машин, ни на грохот мотоциклов. Но внезапно я ощутила, что ко мне кто-то приближается, и остановилась. Вровень со мной медленно ехал мотоцикл. Я подняла голову, всмотрелась. На мотоцикли сидели двое, оба в масках и в очках. Когда я посмотрела на них, тот, кто сидел на водительском

месте, кивнул и жестом спросил: «Куда вам?» Я не ответила и молча продолжала путь.

Однако мотоцикл медленно двигался рядом со мной. Я недоуменно подумала: «Что это он ползет еле-еле?» И снова посмотрела в сторону мотоцикла – теперь там остался только водитель. И, заговорив со мной, он повторил свое предложение:

– Садитесь, я довезу вас, куда вам надо! Вы куда путь держите?

– Спасибо. Тут недалеко. Дойду пешком.– ответила я.

Но он остановил свой мотоцикл и, преградив мне путь, опять повторил свое предложение:

– Зачем пешком ходить? Я быстро довезу вас до нужного места! Скажите только, куда!

Он повторял это снова и снова, и я, наконец, резко ответила ему:

– Я дойду сама! Мне не нужна ваша помощь!

Однако моя резкость на него не подействовала. А затем, всё также преграждая мне путь, мотоциклист стал задавать вопросы:

– Как вас зовут? Откуда вы?

Я рассердилась и ответила грубо:

– Уходите! Не приставайте ко мне!

Но он не уходил и через некоторое время, перейдя на «ты», признался:

– Ты мне очень понравилась!..

Я разозлилась:

– Убирайтесь прочь! Оставьте меня в покое!

Но он не уходил и продолжал загораживать мне дорогу.

Тогда я решилась сказать о своем возрасте:

– Я вам не девушка! Я мать троих детей! Пропустите меня!

Но и эти слова не возымели никакого действия. Он, похоже, просто мне не поверил. Я уговаривала

его и так, и этак, но он не двигался с места. Тогда я решила напугать его:

– Если вы немедленно не уедете прочь, я позову на помощь, у меня есть человек, который может за меня заступиться!

Не знаю, то ли эти слова подействовали на него, то ли ему просто надоело со мной препираться, но он врубил мотор мотоцикла на полную мощность и помчался куда-то за пределы района Камалади.

Я с облегчением вздохнула и направилась в сторону улицы Путали-садака – искать фотостудию, расположенную на ее правой стороне. В тот день Путали-садака была не очень многолюдной, и я быстро нашла нужную мне фотостудию, под названием «ABC». Фотосессия не заняла много времени, но меня попросили подождать два часа – время, необходимое для проявки пленки и печати фотографий. Пришлось ждать. О мотоциклисте, который недавно преграждал мне дорогу, я уже успела забыть. Была суббота, и хотя фотостудия работала, окружающие ее офисы были закрыты – вокруг царила тишина, и мне оставалось только смотреть в окно на пустынный квартал.

Однако вскоре мой взгляд остановился на человеке, стоявшем на другой стороне улицы. Это был тот самый мотоциклист, только свой мотоцикл он где-то оставил и сейчас смотрел в мою сторону. Мне стало страшно. Я с надеждой обратилась к сотруднику фотостудии:

– Пожалуйста, посмотрите на человека, который стоит вон там, на той стороне улицы! Он приставал ко мне, когда я шла к вам, я с трудом от него избавилась. А сейчас он снова смотрит на меня своим хищным взглядом. Пожалуйста, помогите мне добраться до Камалади. Кажется, этот тип всерьез вознамерился преследовать меня.

Но, похоже, работник фотостудии тоже испугался. Он ответил:

– Простите меня, пожалуйста, но я ничем не могу вам помочь. Сегодня суббота, мне уже пора закрывать студию, я спешу, у меня важное дело. Я и так опаздываю, поскольку задержался тут с вашими фотографиями. Забирайте их и идите, куда вам надо!

После такого ответа работника фотостудии у меня душа ушла в пятки. Перспектива оказаться на пустынной улочке один на один с человеком, явно имевшим в отношении меня самые дурные намерения, страшила меня всё больше. А мотоциклист тем временем продолжал стоять на другой стороне улицы, наблюдая за мной. Сотрудник фотостудии оказался трусом и не осмелился проводить меня до Камалади. Он вручил мне мои фото, быстро запер студию и ушел. Я осталась на улице одна – под пугающим меня взглядом этого хищника, не зная, что предпринять.

Затравленно оглядевшись по сторонам, я вдруг увидела слева маленькую лавку, в которой был телефонный аппарат. За деньги оттуда можно было позвонить, и я быстро пошла к этой лавке. Мотоциклист внимательно следил за каждым моим шагом. Я достала из сумочки записную книжку и позвонила сестре. Но ее не оказалось дома, и трубку взяла моя племянница. Я сказала ей, что нахожусь почти в самом центре столицы – в совершенно беспомощном положении. Она велела мне оставаться на месте и ждать ее друзей – она сейчас позвонит им и попросит помочь. Мне оставалось только стоять в ожидании приезда друзей племянницы.

Спустя некоторое время они появились. Два молодых человека, приехавшие тоже на мотоцикле. Когда они остановились рядом со мной, мотохищ-

ник, изводивший меня своим жутким взглядом, тут же исчез. Молодые люди его даже не заметили и, наверное, подумали, что я их зря потревожила. Тем не менее, они проводили меня до угла улицы.

– Тетя, теперь, наверное, тот человек не осмелиться приставать к вам! Не бойтесь! А мы поедем, нам пора.

Молодые люди попрощались со мной, я не стала их останавливать. Все равно они не могли взять меня с собой – нельзя же втроем ехать на одном мотоцикле!

Но как только они уехали, снова, словно из ниоткуда, появлися тот хищник. Оказывается, он продолжал следить за мной. Ужас вновь охватил меня... К счастью, недалеко опять оказалась открытая лавка, из которой можно было позвонить. На сей раз я решила позвонить одному моему доброжелательному читателю, который писал хвалебные отзывы на мои произведения. Я не была с ним знакома лично, но номер его телефона был у меня в записной книжке – на всякий случай. Он жил не очень далеко от того места, где я сейчас была, и я рискнула воспользоваться его добрым ко мне отношением. Позвонила ему, рассказала, в каком отчаянном положении оказалась – хищный злоумышленник всё это время наблюдал за мной с другой стороны улицы. И спустя полчаса мой доброжелательный читатель прибыл – на скутере, в шлеме, в маске, в темных очках. Как только он подъехал ко мне, хищника как ветром сдуло. Я поначалу сильно испугалась, когда рядом со мной затормозил незнакомец в маске, но он быстро снял ее и дружески меня приветствовал. Это была наша первая встреча – наконец-то мы с моим читателем познакомились лично. И пока мы, стоя на улице, обменивались первыми словами, мимо нас быстро промчался

(уже вновь оседлав мотоцикл) преследовавший меня злоумышленник. На заднем сиденье его мотоцикла сидела молоденькая девушка. «Все-таки какая-то молодая девушка попала в лапы этого хищника», – подумала я.

Приближался вечер, и я решила не ходить в Камаладу, а сразу вернуться в Лаганкхел. Мы с моим новым знакомым сели на его скутер и вскоре оказались у дома моей сестры.

Я часто вспоминаю прежний Катманду, в котором не было так шумно, как сейчас, поскольку тогда по его улицам ездило не так много машин и такси, мотоциклов и скутеров, а маршрутных автобусов вообще не было. В тот зимний субботний день даже людей на улицах не было – все сидели дома из-за пасмурной погоды. Если бы тогда, тридцать лет назад, на улицах было бы столько народу и столько машин, как сейчас, мне не пришлось бы пережить в тот памятный день тревожные минуты. Никто не посмел бы средь бела дня преградить путь одинокой женщине.

Тогда Катманду был спокоен и тих, а сейчас он полон суеты. Все куда-то торопятся, на улицах толпы людей, даже в ненастье. Конечно, и сейчас в столице орудуют злоумышленники, подобные тому мотоциклисту, так меня напугавшему. Такие не исчезают никогда, они лишь приспосабливаются к новым условиям. Раньше они промышляли на тихих безлюдных улицах, а теперь с успехом пользуются грохотом и неразберихой большого города. Но они по-прежнему хищно смотрят на одинокую девушку и стремятся погубить ее, если представится удобный случай. Как тогда, так и сейчас женщинам не просто защититься от людей с дурными намерениями. Особенно если они слабовольны и простодушны, как это часто бывает с молодыми де-

вушками, приехавшими в столицу из отдаленных деревень в поисках работы. Именно они часто становятся жертвами злоумышленников.

Я сумела избежать беды, поскольку была отнюдь не наивна и достаточно грамотна. Я спаслась от хищника на мотоцикле только потому, что проявила ум и рассудительность. Если бы я была наивной и неграмотной, как большинство деревенских женщин, то в тот роковой день непременно стала бы легкой добычей. Даже сейчас, тридцать лет спустя, вспоминая это происшествие, я вздрагиваю от страха. Как тогда, так и сейчас, Катманду, наша столица, не гарантирует своим жителям полной безопасности. По городу и сейчас, скрываясь под всевозможными масками, бродят преступные элементы...

Сотни беспечных женщин, приехавших в Катманду по самым разным делам, могут попасться в сети, расставленные хищниками. Однако все-таки за эти годы многое изменилось, и сейчас большинство женщин Непала достаточно грамотны и не страдают наивностью. Да и технический прогресс им помогает. Теперь у каждой есть мобильный телефон, с которым можно смело ходить даже по самым безлюдным городским улицам. И при соблюдении элементарных норм осторожности современным женщинам не страшны никакие хищные взгляды, и никакие злоумышленники не причинят им вреда. Так что теперь гулять по улицам Катманду совсем не так опасно, как в прежние времена.

...Судьба столкнула меня с тем мотоциклистом еще один раз. Это случилось спустя три или четыре года после того злополучного зимнего дня. Мы с мужем стояли на улице Багбазара, рядом с рынком, и беседовали с нашими друзьями. И вдруг прямо

передо мной возник тот самый человек, и опять на мотоцикле, только на этот раз одет он был по-другому. Он явно узнал меня и окинул цепким, оценивающим взглядом. Но проехал мимо нас, не сбавляя скорости. Я тут вспомнила наш с ним разговор, когда он преграждал мне путь. Никогда не забуду этого ужаса! Как я уговаривала его, как рассказывала, что я мать троих детей, как буквально умоляла, чтобы он пропустил меня. А он не верил ни одному моему слову и стоял, глядя на меня хищным взглядом...

«Каких только людей не встретишь на своем жизненном пути!» – часто думаю я. И эта мысль вновь и вновь заставляет меня с удивлением вглядываться в наш мир...

वानीरा गिरी

धरहरा – बाक्लो कुहिरोको खास्टोभित्र

समय र हारको चोटले
अझ वलवान् बनाएको छ !
सबलाई जितेर
सबलाई पचाएर
उभिरहने विजेतालाई –
बुढो र कमजोर भन्न सकिन्छ ?

जूवा हारेर आएको जुवाडे
गरिसकेको तमसुक -
घर, स्वास्नी र छोराछोरी।
कतै कुना-कानीमा
बस्न पाइन्छ कि वास ?
बिच बजारमा -
एउटै सुकुल मात्र पनि पर्याप्त !
कसो एउटा खास्टो
बाँकी रहन गएको रहेछ
सारा देह ढाक्नलाई
नत्र कसरी ठिङ्ग उभिन सक्थें
पहाडै-पहाडका सामु ?

पहाड – अग्ला अग्ला पहाड !
पहाड – स्तब्ध, मौन पहाड !
पहाड – अविचल, स्थिर पहाड !
हरिया र नीला हुँदै गएका पहाड !
पहाड केवल पहाडै हुन्
विजेता होइनन् मेरा निम्ति।
हारिदिनु ज्यादै सजिलो छ -
कुनै मोह र अर्थबिना !

Банира ГИРИ

ДХАРАХАРА[1]: ОКУТАН ПЛОТНЫМ ПОКРЫВАЛОМ ТУМАНА

В его поражении – его победа. Битва со временем
Лишь крепче делает его и стойкость придает!
Одолевая всех и вся,
Он высится, как победитель.
Разве можно такого героя назвать
Бессильным и старым?

Игрок, проигравший все,
Поставивший на кон дом, жену и детей,
Ищет он угол для ночлега среди шумного базара.
Хотя бы просто циновку...
Осталось лишь покрывало тумана,
Чтобы стан его окутать хоть немного.
Без этого покрывала не смог бы он стоять,
одинокий,
В окружении высоких гор.

Горы – одна выше другой!
Горы – недвижимые и молчаливые!
Горы – стойкие и непоколебимые!
Зелень на синеву меняют горы!
Горы! Одни лишь горы!
Для меня они не герои.

---

[1] См. прим. на стр. 45.

ए, हारेर चित्ता परेका सडकहरू !
तिमीहरू पनि मजस्तै -
निस्फिक्री र निर्धक्क देख्छु !
आऊ, तिमी र म अनौठो माया लाऔं -
पछिसम्मलाई !

आऊ, सारा मानिस र सहरहरूबाट अलग्ग
आफ्नो भन्ने एक सम्बन्ध स्थापित गरौं
म नपुंसकतुल्य हेरिरहन्छु -
तिमी विधवा रातझैं कुरिरहनू !
म बिजुलीको लट्ठाझैं ठिङ्ग उभिन्छु -
तिमी बेवारिस कुकुरनीझैं रल्लिरहनू -
बाध्यता र विवशताको नाममा !

यसरी -
हामी एक अर्कालाई
पाइरहन सक्छौं !
चपाइरहन सक्छौं !
भुलाइरहन सक्छौं !
यति भए पुगेन तिमीलाई ?

हेर,
यो कुहिरोको खास्टो
तिमीलाई ओढाइदिनु त -
समागमको अर्को नाम हो !
जो एउटा सिरकको थुप्रो हो
एउटा पलङ्ग हो
एक छिनको चल्मलाइ हो !

बढी भए -
अतिकति रक्त-सञ्चालन हो !

Ведь так легко потерпеть поражение –
Когда нет иллюзий и смысла нет!

Эй вы, улицы, побежденные, падшие ниц!
Вы тоже похожи на меня –
Вижу, нет у вас волнения и нет страха!
Приходите! Давайте влюбляться друг в друга
Странной любовью, будущее которой незримо!

Приходи! Вдали от людей и от городов,
Нас особые свяжут нити!
Я, подобно евнуху, могу лишь смотреть на тебя
неустанно –
Я жду тебя всегда, как ждет в ночи вдова!
Столбом фонарным буду я стоять,
А ты броди вокруг, как пес бездомный –
Лишь потому, что так заведено от века!
Лишь так
Мы обрести друг друга можем!
Можем любить! Можем играть!
Разве этого тебе мало?

Смотри! Этим покрывалом тумана
Давай, укрою тебя всего –
Это – другое имя для целокупности!
Покрывало – всего-навсего простая циновка
Одна постель на двоих – лишь на миг!
А если дольше,
Тогда кровь быстрее струится в жилах!

ए, मलाई सधैं आमन्त्रण गरिरहने सडक !
समय र हारको चोटले मलाई -
अझ वलवान् बनाएको छ !
सब कुरालाई जितेर -
सब कुरालाई पचाएर -
यसरी खडा रहिरहने विजेतालाई -
के तिमी बुढो र कमजोर भन्न सक्छौ ?

Эй, улица, вечно меня зовущая!
В поражении – моя победа. Битва со временем
Лишь крепче делает меня, придает стойкость!
Одолевая всех и вся,
Высится он, как победитель.
Разве можно такого героя назвать
Бессильным и старым?

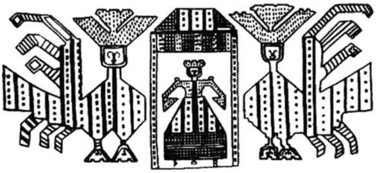

अशेष मल्ल

काठमाडौं

काठमाडौं
पौरुष देखाउँदै
नेपाललाई बलात्कार गर्न लागिरहेछ
काठमाडौं
आफै मात्र जान्ने, सुन्ने र बाठो हुँदै
नेपाललाई लाटो बनाउन खोजिरहेछ।
काठमाडौं
खाताखात लुगा ओढेर
नेपाललाई नङ्ग्याउन लागिरहेछ
दाउ लगाएर काठमाडौं
नेपाललाई ठुँग्न लागिरहेछ
काठमाडौं
सिङ्गै नेपाल भएर
नेपाललाई 'पाखे' र 'गामा' पारिरहेछ
काठमाडौं
जतिसुकै हल्ला, होहल्ला र आवाज भए पनि
नेपाल आखिर शून्य शून्य बाँचिरहेछ।

Ашеш МАЛЛА

КАТМАНДУ

Катманду,
Демонстрируя невероятную храбрость,
Насилует весь Непал.
Катманду,
Полагая себя всезнающим и умным,
Старается обхитрить весь Непал.
Катманду,
Нарядившись в пышные одежды,
Стремится раздеть весь Непал.
Катманду,
Ожидая удобного случая,
Готовится заклевать весь Непал.
Катманду,
Думая, что настоящий Непал – это он,
Считает остальных деревенщиной.
Катманду,
Какой бы шум ты не поднимал,
Настоящий Непал все-таки живет в тиши!

जीवा लामिछाने

त्यो काठमाडौं : यो काठमाडौं

सहरको पनि उमेर हुँदो रहेछ। सहर पनि बालक र जवान हुँदो रहेछ। अँ, सहर बृध्द हुन्छ र यसको पनि मृत्यु हुन्छ भन्ने कुरा चाहीँ अपवादमा आउने सत्य हो । सहरी सभ्यता नै नष्ट भएका इतिहास नभएका होइनन् तर एउटा सहर जसरी द्रूतगतिमा बालक हुँदै जवान हुन्छ, त्यही गतिमा बृध्द भएको र मृत्युवरण गरेको इतिहास भने निकै थोरै छन्। यस अर्थमा भन्न मन लाग्छ, अण्डाबाट चल्ला निस्किए झैँ सहरको प्रादुर्भाव सानो बस्तीबाट सुरु हुन्छ र यो फैलिदै द्रूतगतिमा जवान हुन्छ। यसको जवानी त्यो बेलासम्म भरपूर हुन्छ, जवसम्म यसभित्र आर्थिक गतिविधि उत्कर्षमा पुग्छन् र त्यसै गरी रहिरहन्छन। कुनै कारणले आर्थिक गडबडी हुन थाल्यो भने यसको स्वरूप बदलिन सुरु हुन्छ।

यतिखेर नेपालको राजधानी काठमाडौं द्रूत गतिमा किशोरबाट जवानीतिर लम्किरहेको आभास हुन्छ। यसका हरेक अवयवहरूमा जुँगाका रेखी बस्न सुरु भएको देख्न सकिन्छ। पर्याप्त पूर्वाधार र सहरी विकासको तयारी बिना नै नेपालको केन्द्रीय राजधानीको भार बोकेकाले होला, काठमाडौंका अनुहारमा उमेर नपुगी डण्डीफोर आउन थालेका छन्। जब म काठमाडौं उत्रदै गर्दा हवाइजहाजबाट तल हेर्छु, ६ सय वर्ग किलोमिटरभित्र एउटा सिङ्गो सहर देख्छु। बाहिरबाट हेर्दा यो सहर तीन जिल्ला, एक महानगर, ८ नगर र ९ गाउँपालिकाहमा बाँडिएको महसुस हुँदैन । जवकि केही वर्षअघिसम्म यी सबै स्थानीय निकाय माथिबाट हेर्दा छुट्याउन सकिन्थ्यो। द्रूत गतिमा उमेर बढ्दै गएको तर पर्याप्त रूपमा शारीरिक व्यायम गर्न अल्छी गरिरहेको कुनै किशोर जस्तो लाग्न थालेको छ मलाई आजकल राजधानी, काठमाडौं।

यो सहर पहाडको बिच कचौरा जस्तो भएर होला यसमा अनुपम सौन्दर्य महसुस गर्न सकिन्छ। यति सानो क्षेत्रफलमा विश्व सम्पदा सूचीमा सूचिकृत भएका ७ वटा सांस्कृतिक सम्पदाहरू छन्। विश्वभरिमा युनेस्कोले ६ सय ३० वटा विश्व सम्पदा सूची तोकेको छ। ती मध्ये १० वटा त नेपालमै छन्। तर संसारका ७ वटा सम्पदा बोकेर पनि यो सहर सानै देखिन्छ। मलाई कुनै विदेशी मित्रले तिम्रो देशको राजधानीको विशेषता के हो भनेर सोध्यो भने मैले गौरवका साथ भन्ने धेरै कुरा छन् तर मुख्य कुरा हो, पहाडभित्रको एउटा यस्तो सानो सहर, जसभित्र ७ वटा विश्व सम्पदाहरू सूचिकृत छन्।

०००

यो सहरसँग मेरा आफ्नै नोस्टाल्जिया छन् । म त्यो ठाउँमा जन्मिए, जहाँ एकसिङ्गे गैंडाको बासस्थान भएको विशाल जङ्गल छ । यही कारण यो जङ्गलबाट हाम्रो गाउँ सारियो र राष्ट्रिय निकुञ्ज घोषणा भयो । संयोगले यो स्थान पनि नेपालको एउटा प्राकृतिक सम्पदाका रूपमा युनेस्कोले सूचीकृत गरेको छ । तर जुन बेलाको कुरा यहाँ प्रस्तुत गर्दैछु, त्यो बेला यो जङ्गलभित्रको गाउँ अन्य ठाउँमा सारिएको थिएन र म त्यही जङ्गलको एउटा जीव थिएँ । हामी जङ्गलबाहिर झन्डै १० किलोमिटर टाढा रहेको रत्ननगर टाँडी नामको सानो सहरमा हाइस्कुल पढ्थ्यौं । यिनै हाइस्कुलका पाठ्यक्रमहरूमा राजधानी काठमाडौंका बारेमा अनेक कुरा लेखिएका हुन्थे । शिक्षकहरूले ती कुरा पढाउँदै गर्दा काठमाडौंको सपना देखाउनुहुन्थ्यो । उहाँहरूको सपना हुन्थ्यो, राम्रो लेखपढ गर्नेले राजधानी जान पाउँछ र राजधानी पुग्ने मानिस नै ठुलो मानिस बन्न सक्छ ।

म कक्षाको प्रथम विद्यार्थी भएकाले हुन सक्छ, मेरो सपनामा बारम्बार काठमाडौं आइरहन्थ्यो । लाग्थ्यो, कुनै दिन म मेरो सपनाको सहर काठमाडौं पुग्छु र ती सबै मनमोहक दृश्य देख्नेछु, जुन पुस्तकहरूमा वर्णन गरिएका छन् ।

२०३७ सालको चैत्र महिना । यो गर्मी मौसममा विद्यालयले १० कक्षामा अध्ययनरत विद्यार्थीलाई एक साताको शैक्षिक भ्रमणमा लैजाने भयो । यो हाम्रा लागि साँच्चै नै सपना देखे जस्तै अपत्यारिलो सत्य थियो । यो भ्रमण-तालिकाअन्तरगत बुद्धको जन्मस्थल लुम्बिनी, आकर्षक पहाडी जिल्ला पाल्पा र देशकै सुन्दर सहर पोखरा पोखरा हुँदै तीन दिन देशको राजधानी काठमांडौं घुमाउने योजना पनि थपिएको थियो ।

चितवनको गर्मीबाट हामी विभिन्न ठाउँ घुम्दै काठमाडौं छिर्दा हामीलाई निकै जाडो अनुभव भएको थियो । काठमाडौं उत्रिएर हामीले धाराको पानी खान खोज्दा तर्सिएका थियौं । मध्य दिउँसो धाराको पानी यति चिसो होला भन्ने हाम्रो कल्पनामा थिएन । यस्तो चीसो सहरका मानिसहरू पातला कपडा लगाएर निस्फिक्री हिँडिरहेको देख्दा हामी छक्क परेका थियौं । रातीको बसोबास एउटा विद्यालयको कक्षा कोठामा गरिएको थियो । रातीको चिसो भगाउन कक्षा कोठामा पराल र दरीको व्यवस्था भए पनि हामीलाई जाडो अनुभव भइरहेको थियो ।

भोलिपल्ट बिहान थाहा भयो, जुन कोठामा हामी सुतेका थियौं, त्यही कोठामा महाकवि लक्ष्मीप्रसाद देवकोटाले पढेका रहेछन् । अहिले सम्झदा के रमाइलो लाग्छ भने हामीले देशको पहिलो विद्यालयलाई आफ्नो होटेल बनाएका थियौं, जहाँ देशका सबैजसो लेखक–कविहरुले ज्ञान आर्जन गरेका थिए । त्यही विद्यालयमा पढेका विद्वानहरूको मेहेनतले यो देशको राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक र साहित्यिक अभियान अघि बढेको थियो । अहिले पनि दरवार हाईस्कुलका रूपमा परिचित उक्त

विद्यालयअघिल्तिर रहेको रानीपोखरी र त्यसको बिचमा रहेको मन्दिर हामीले अनुभव गरेको पहिलो ऐतिहासिक दृश्य थियो । हामीलाई त्यो पोखरीले यति लोभ्याएको थियो कि त्यहाँ बसुन्जेल हामी सडक काटेर दगुरी-दगुरी त्यहाँ पुग्दथ्यौं । धन्न, त्यो बेला आजको जस्तो गाडीको भिड थिएन ।

यो त्यही समय थियो, जब युनेस्कोले भर्खर पशुपतिक्षेत्र, स्वयम्भुनाथको मन्दिर, हनुमानढोका दरवारलगायतलाई विश्व सम्पदा सूचीमा राखेको थियो । तर हामीलाई यो कुरा त्यो बेला थाहा भएन । हामीले द्रूतगतिमा ती क्षेत्रहरूको भ्रमण गर्यौं । हाम्रो गाउँतिर फाट्टफुट्ट गोरा छाला भएका पर्यटक देखिन्थे । तर यी ठाउँहरूमा यति धेरै विदेशी पर्यटक हामीले देख्यौं कि यो ठाउँमा यस्तै गोरा छाला भएका मानिसहरू प्रशस्तै बस्छन् होला भन्ने अनुमान लगायौं ।

काठमाडौंमा पशुपतिनाथको मन्दिरका बारेमा पढेको थिएँ तर पशुपति मन्दिरवरपर सैयौं अन्य महत्त्वपूर्ण मन्दिर छन् भन्ने थाहा थिएन । ती मन्दिर देख्दा यति धेरै मन्दिर कसरी बने होलान् भन्ने कुरा मनमा खेलिरह्यो । अझ ती मन्दिरका टुँडालहरूमा नेपाली समाजले अश्लिल मानेका रतिरागका दृश्यहरू जताततै देख्दा हामी लाजले पानी पानी भयौं । युवतीले लगाएका कपडाको बाहिरी भागबाट देखिने सामान्य वक्षस्थलका चिन्ह आँखाअघि पर्दा पनि सातो जाने हामी किशोरहरूले त्यहाँ एकैपटक खुला यौन दृश्य कुँदिएको देखेका थियौं । यो दृश्यले हामीलाई यति धेरै प्रभावित पार्‍यो कि विद्यालयका अन्य साथीहरूसँग पनि ती कुरा गरेका थियौं ।

त्यो बेला सम्पूर्ण सहर मलाई प्राचीन सङ्ग्रहालयझैँ लागेको थियो । प्यागोडा शैलीका मन्दिर र गुम्बज शैलीका गुम्बा र चैत्यहरू एकै ठाउँ हुनु सम्भवतः विरलै देखिने दृश्य हुन् । काठमाडौंले एकैसाथ मन्दिर, गुम्बा र चैत्यलाई स्वागत गरेको थियो। यस्तो लाग्थ्यो, मानौं सम्पूर्ण सहर काठ र प्राचीन ईटाहरूले बनेको प्राकृतिक सहरकै एक अङ्ग हो । तर काठमाडौंको नयाँ सडक र पुतलीसडक क्षेत्रहरूमा धमाधम आधुनिक घरहरू पनि बन्दै थिए ।

०००

एक बर्षपछि प्रथम श्रेणीमा प्रवेशिका परिक्षा पास भएपछि ईन्जिनियर हुने महत्त्वाकांक्षासहित म काठमाडौं आएँ । यो दोस्रो भ्रमणले मलाई काठमाडौंको सौन्दर्य मात्र होइन, केही कुरूपताहरूको पनि परिचय गरायो । दोस्रो पटक राजधानी आउँदा पहिलो पटक जस्तो रमाइलो गर्न म आएको थिइन । बुबालाई आर्थिक बोझ बोकाएर ‘जीवनमा केही उद्देश्य हासिल गर्न आएको थिएँ । इन्जिनियरिङ्ग पढ्ने विद्यार्थीहरू प्रायः होस्टेलमा बस्थे । म भने कलेजभित्रको राजनीतिबाट बच्न पाटनको मंगलबजार नजिक न–टोलमा डेरा लिएर बस्न थालेँ । एक वर्षपछि मेरो भाइ खेम पनि कानुनी बिषय

पढ्ने उद्देश्यले काठमाडौं आयो । यसरी हामीले काठमाडौंमा पहिलो चरणको सङ्घर्ष सुरु गरेका थियौं। त्यो बेला गरिएका हरेक सङ्घर्ष यी कुरा लेख्न बस्दा आँखामा नाच्नु स्वाभाविक हो... ।

यति चाहिँ भन्नै पर्छ, कि त्यति बेलाको काठमाडौं अहिले झैँ अस्तव्यस्त थिएन। सडक-गल्लीहरूमा धुलो–धुवाँ कमै देखिन्थ्यो ! सडक सबै सफा–सुग्घर थिए । सार्वजनिक यातायात उपलब्ध भए पनि सहर घुम्न निस्कँदा धेरैजसो हामी पैदल नै हिड्ने गर्थ्यौं। इन्जिनियरिङ्गको विद्यार्थी भएका नाताले म हरेक घर त्यही रूपमा हेर्थे। तर आज बोध हुँदैछ, आधुनिक शैलीको इन्जिनियरिङ्ग पढेका हामीले त्यो बेला ऐतिहासिक र प्राकृतिक इन्जिनियरिङ्गको कुरा बुझ्ने प्रयास गरेनौं। सायद यही कारण हो, हामी जस्तै आधुनिक इन्जिनियरहरूका कारण यो सहर अहिले कन्क्रिटको जङ्गलमा परिणत भयो।

पहिलो पटक काठमाडौं आउँदा जाडो मानेको शरीर, पछि बिहान पाँचै बजे उठेर हरेक दिन नुहाउने बानीमा परिणत भयो। जनसङ्ख्या थोरै भएकाले त्यस बखत लोड-सेडिङ थिएन। सामान्य बत्ती बल्दा पनि हाम्रा लागि झिलिमिली महसुस हुन्थ्यो। यस्तो लाग्दथ्यो, काठमाडौं आधुनिकता र अध्यात्मको फ्युजन भएको सहर हो।

यस्तो सहरमा एउटा घर हुनु हामी जस्ता गाउँलेको असम्भव कल्पना थियो। तैपनि यो सहरमा एउटा घर भएको म कल्पना गर्दथे । नभन्दै विदेशमा व्यवसाय गरेपछि कमाएको पैसाले सबैभन्दा पहिले मैले यही सपना पूरा गरेँ। मैले काठमाडौंमा घर किन्न किन हतारो गरेँ हुँला ? आज सम्झदा लाग्छ, मेरो अचेतन मनमा काठमाडौंले यति मोहनी लगाएको थियो कि आफ्नो गाउँमा गर्नुपर्ने धेरै काम रोकेर काठमाडौंमा घर नभई मेरो मनले चैन मानेन।

अहिले यो सहरमा मेरा असङ्ख्य मित्रहरू छन्, आफन्त छन् । म संलग्न भएका कम्पनीहरूले आर्थिक गतिविधि गरिरहेका छन्। चार दशकअघि भावनात्मक रूपमा यो सहरसँग जोडिएको नाता अहिले व्यावसायिक रूपमा समेत झ्याँगिएको छ।

ooo

आज पनि म फुर्सद हुने वित्तिकै विश्व सम्पदा सूचीमा सूचिकृत भएका काठमाडौं उपत्यकाका ७ वटै क्षेत्रहरू घुम्छु। एकै पटक सम्भव नभए पनि फरक फरक सम्पदाहरूमा पुगेर पुराना नोस्टाल्जियाहरूलाई ताजा बनाउँछु । यी ठाउँहरू घुम्दै गर्दा मलाई कुनै बेलाको निश्चल किशोर आफ्नो संस्कार यथावत् राखेर जीवनको लय सिक्दैछ जस्तो लाग्छ । तर जसै यी क्षेत्रबाट काठमाडौंका अन्य ठाउँ पुग्छु, सहरले समय नछिप्पिदै अनुहारभरि डण्डिफोर आएर सौन्दर्य गुमाउन थालेको अनुभव गर्छु।

जुन बेला आँखा खुल्छ, त्यसैलाई विहानी मान्नुपर्छ । देशमा सबै किसिमको राजनीतिक परिवर्तन भइसके । अब कुनै पनि बहानामा राम्रा काम नगर्न र व्यवस्थित जीवनशैली नअपनाउने छुट यो काठमाडौंलाई छैन । संसारका ऐतिहासिक सहरका योजना हेरेर त्यसमध्ये कुन कुन योजनाको यो सहरलाई खाँचो छ, त्यस अनुसारको तयारी गर्न अब निक्कै अवेर भैसक्यो !..

Джиба ЛАМИЧХАНЕ

ДВА ЛИКА КАТМАНДУ

У города тоже есть возраст. Вначале он мальчик, потом становится юношей. Да, город тоже стареет и умирает, так повелось издревле. Но происходит это не быстро. Город появляется на свет из маленького селения, словно цыпленок из яйца. Селение растет, постепенно становясь городом. Юность его продолжается до тех пор, пока бурлит экономическая активность. Однако если развитие идет в неправильном русле, то черты города со временем становятся жестче...

Ныне столица Непала Катманду из детства переходит в юность. У города начинают пробиваться усики, но весь облик огрубляется. Быть может, это происходит от того, что Катманду, на плечи которого тяжким грузом давит титул столицы современного Непала, вынужден расти слишком быстро, не имея необходимой инфраструктуры и достаточного базиса в сфере урбанизации. Город еще не достиг расцвета юности, но прыщи созревания уже покрыли его лик, и выглядитэтот лик не столь уж прекрасным...

Когда я подлетаю к Катманду, то из иллюминатора вижу огромный город, раскинувшийся на пространстве в шестьсот квадратных километров. Эта территория разделена на три района, где расположены шесть больших селений, восемь городов и сам мегаполис. Еще несколько лет назад с воздуха были четко видны границы трех древних столиц. Но нынче урбанизация растет такими темпами, что вся до-

лина превратилась в один огромный город. Катманду, став мегаполисом, более не уделяет внимания своей красоте, подобно ленивому прыщавому юнцу, который не следит за своим лицом и фигурой.

Катманду расположен в долине, он словно чаша, окруженная вечнозелеными горами. С высоты птичьего полета все еще можно созерцать дивную красоту непальской столицы. На сравнительно небольшой площади разместились семь из десяти непальских историко-культурных объектов, внесенных в список всемирного культурного наследия ЮНЕСКО (всего в мире таких объектов 630).

* * *

У меня свои вспоминания об этом городе. Я родился в деревне, окруженной густыми джунглями, в которых обитали однорогие носороги. Позднее наша деревня была перенесена в другое место, так как весь район был объявлен заповедником. Ныне на месте моей деревни находится известный национальный парк Читаван. Отрадно, что этот парк, как природная достопримечательность Непала, был включен в список всемирного наследия ЮНЕСКО. Но во времена моего детства я тоже, так сказать, был одним из обитателей джунглей. Когда подрос, пошел в школу маленького городка Ратнанагара Танди, расположенного в десяти километрах от нашей деревни. Из школьных учебников я получил первые знания о нашей столице, Катманду. Рассказы учителя о достопримечательностях столицы заронили во мне мечту увидеть все своими глазами. Учитель сказал также, что прилежный ученик когда-нибудь обязательно попадет в столицу и станет там знаменитым человеком.

Я хорошо учился, в классе был отличником. И часто видел Катманду во сне. Мне верилось, что я

непременно окажусь в городе моих снов и наверняка увижу те чудесные места, которые так красочно описаны в учебниках.

В марте 1980 года наша школа отправила десятиклассников в экскурсионную поездку по стране. Нам казалось, что это все не может происходить наяву, что это лишь продолжение несбыточного сна. Мы никак не могли поверить в то, что услышали от учителей. Тем не менее, наша группа побывала и в Лумбини, где родился Будда, и в живописных горах Палпы, и в самом прекрасном городе Непала – в Покхаре. Из Покхара мы отправились в Катманду, где нам предстояло жить три дня.

Итак, мы покинули родной жаркий Читаван и, после путешествия по горным дорогам, вошли в город Катманду. Там было совсем не жарко. Даже днем вода там была такой холодной, что мы не осмеливались пить ее из-под крана. Мы даже не представляли, что вода может быть такой студеной. Но наше удивление еще возросло, когда мы увидели беспечных жителей Катманду, разгуливавших по прохладным улицам в легких одеждах. Ночевали мы в классной комнате одной из столичных школ, прямо на полу, где была постелены циновки из рисовой соломы, покрытые для тепла пледами. Но мы все равно никак не могли согреться.

На следующее утро мы узнали, что в той классной комнате, где мы провели ночь, когда-то учился великий непальский поэт Лакшми Прасад Девкота. Оказывается, местом нашего ночлега стало не просто рядовое образовательное учреждение, а Дарвархайскул, первая непальская средняя школа, где получили образование почти все непальские писатели и поэты. Выпускники этой школы стали видными литераторами, политиками, общественными и культурными деятелями, своей работой они спо-

собствовали развитию современного Непала. Перед зданием Дарвар-хайскул располагался небольшой квадратный пруд Рани-Покхари (Пруд Королевы), с прекрасным храмом бога Шивы. К храму вел мостик. Этот удивительный пруд, искусственно созданный в XVII веке, очень нам нравился, мы часто со всех ног устремлялись к нему, перебегая широкую городскую улицу. Слава Богу, в то время в Катманду не было такого количества машин, как сейчас.

То было время, когда ЮНЕСКО только что включила территорию старинного дворца Хануман-дхока, район храма Пашупатинатха, и другие историко-культурные достопримечательности долины Катманду в список объектов всемирного наследия. Конечно, тогда мы не знали об этом. Но нас возили в те места, которые обычно осматривали иностранные туристы. Мы видели там множество белокожих и белокурых людей и думали, что это тоже жители Катманду.

В учебнике я читал о храме Пашупатинатха, но не думал, что вокруг этой святыни находится так много других культовых сооружений. Когда я впервые увидел их все, то долго размышлял, как же получилось, что столько храмов собралось в одном месте. А когда на резных деревянных опорах храмовых крыш – *тундалах* – увидел фигуры мужчин и женщин, занятых любовью, то от стыда не мог глядеть на учителя, сопровождавшего нас. Мы были еще мальчишками, краснели, даже увидев полуобнаженные груди женщин. А здесь, на тундалах, почти на каждом шагу были вырезаны совсем откровенные эротические сцены. Вечером, оставшись одни, мы обменивались впечатлениями от увиденного во время экскурсии.

Во время прогулок по городским улицам нам казалось, что мы бродим по залам огромного

древнего музея под открытым небом. Там были и многоярусные храмы в стиле пагод, и буддийские монастыри с куполами, и разных размеров буддийские ступы – *чаитья*. Наверное, нигде в мире невозможно увидеть все это в одном месте! А Катманду, наоборот, приютил и индуистские храмы, и буддийские ступы и монастыри! И весь огромный город, возведенный из дерева и старинного кирпича, казался неотъемлемой частью окружающей его природы. Однако уже тогда в Катманду на улицах Наян-садака и Путали-садака бурными темпами строились современные дома.

* * *

Спустя год я с отличием сдал экзамены на аттестат зрелости и приехал в Катманду, мечтая учиться дальше, стать инженером. На этот раз я не только увидел красоту Катманду, но и почувствовал некоторые его изъяны. Мое второе посещение столицы отнюдь нельзя было назвать романтическим путешествием! Я прибыл в столицу с намерением чего-то добиться в жизни, хотя пока что отцу приходилось нести бремя расходов на мое образование. Будущие инженеры обычно жили в студенческом общежитии. Однако я, чтобы не оказаться вовлеченным в бурную политическую жизнь колледжа, снимал квартиру в квартале На-тола, рядом с Мангал-базаром в Патане. Спустя год мой брат Кхем тоже прибыл в Катманду, чтобы учиться на юриста. Таким образом, мы с ним вместе начали преодолевать трудности жизни в большом городе. И сейчас, когда я пишу эти строки, в моей памяти всплывают эпизоды из тех нелегких времен, когда мы жили вдали от родных мест...

Следует сказать, что тогда Катманду не был таким шумным и деловитым городом. Его улицы

и переулки еще не были такими пыльными, как сейчас, да и шума было гораздо меньше. Город был чище. Можно было пользоваться общественным транспортом, но мы обычно ходили пешком. Учась на инженерном факультете, я во время этих походов внимательно изучал архитектуру каждого дома. Но сегодня я осознаю, что мы, студенты, даже не пытались уяснить себе ни сущность исторической застройки города, ни особенности его взаимодействия с окружающей природой. Может быть, именно из-за неправильной подготовки современных инженеров, получивших однобокое образование, наша столица и превратилась в железобетонные джунгли...

За время жизни в Катманду я привык умываться рано утром прохладной водой, во время первого приезда показавшейся мне такой студеной... В то время население города еще не было столь велико и вопрос обеспечения электроэнергией не стоял так остро. Еще не приходилось прибегать к веерной системе подачи электричества. Тогда нам казалось, что маленькая электрическая лампочка заливала ярким светом все вокруг... Что ни говори, в Катманду и впрямь сливаются воедино современность и древняя духовность!

Деревенский парень вроде меня не мог даже во сне мечтать о собственном доме в столице. Тем не менее, я мечтал. Случилось так, что я заработал за границей кое-какие средства и решил осуществить свою давнюю мечту. Я спрашиваю себя: зачем же я так торопился приобрести дом в этом городе? И мне кажется, что Катманду настолько очаровал мое подсознание, что душа моя не могла ничему радоваться до тех пор, пока дом не будет куплен, хотя у меня и так была уйма неотложных дел в родной деревне.

Нынче в этом городе живет множество моих друзей и родственников. Фирмы, с которыми я связан, ведут активную экономическую деятельность. Прошло сорок лет с тех пор, как я влюбился в этот город. И за годы, проведенные мною здесь и отданные предпринимательству, это чувство стало еще крепче.

* * *

Сейчас, когда у меня есть хотя бы немного свободного времени, я обязательно стараюсь посетить какой-нибудь из семи объектов Катманду, включенных ЮНЕСКО в список всемирного историко-культурного наследия. Естественно, невозможно, да и не нужно быть во всех этих местах сразу. Я часто вспоминаю свой первый приезд в столицу. И теперь, когда я брожу по историческим районам города, мне кажется, что я, как в юности, пытаюсь согласовать свой ритм жизни со старинными традициями. Но когда я бываю в других частях Катманду, то чувствую, что город теряет свою прелесть и привлекательность, становясь подобным прыщавому юнцу-переростку. Утро наступает тогда, когда глаза открываются. Непал стал ареной различных политических перемен и социальных экспериментов. Теперь у Катманду нет иной альтернативы, кроме как приступить к активной деятельности по планомерному изменению своего стиля жизни. Иного не дано! Надо немедленно разрабатывать план развития Катманду, основываясь на сравнительном изучении и анализе подобных планов, реализованных в различных исторических городах мира!..

बिक्रम सुब्बा

दुई किनारा

उता, चिडियाखाना छ
सर्प छन्, गोही छन्
स्याल र भालु छन्
गिद्धहरू छन्।

यता, मन्त्रालय छन्, क्याबिनेट छ
प्रधानमन्त्री, मन्त्री
अध्यक्ष र सांसदहरू छन्।

बागमतीको पुलले
यी दुवै सहरलाई
चुपचाप जोडिदिएको छ॥

काठमाडौं साहाब

काठमाडौं साहाबको खुट्टामा
फूलहरू टेक्ने
हिङ्सक जनावरको छालाबाट निर्मित
काँटीदार कालो जुत्ता छ।

काठमाडौं साहाबको हत्केलामा
पुराना पाँच औंला छन्
र सबैभन्दा सक्रिय
चोर औंला छ॥

Бикрам СУББА

ДВА БЕРЕГА

Там – зоопарк!
В нем обитают змеи и крокодилы,
Шакалы и медведи,
Да, еще грифы!

Тут – дворец Сингха-дарвар[1]!
Парламент и кабинет министров,
Премьер-министр и министры,
Спикер и депутаты!

Мост на реке Багмати
Безмолвно и тихо
Соединяет два эти берега.

КАТМАНДУ-САХИБ

На ногах у Катманду-сахиба –
Сапоги с шипами острыми,
Сапоги из шкуры зверя хищного.
Грубо топчут эти сапоги
Цветы прекрасные, нежные.

На руке у Катманду-сахиба,
Как у всех, пять пальцев.
Но из них самый главный –
Указательный, «палец-вор»[2].

---

[1] *Сингха-дарвар* – огромный дворцовый комплекс, построен в начале XX в. как резиденция премьер-министра Рана. После провозглашения демократии в 1951 г. в нем разместились парламент и министерства Непала.

[2] Указательный палец на языке непали называется *«чораунла»* – «палец-вор».

बालगोपाल श्रेष्ठ

यो काठमाडौं

धुलो र धुँवामा निस्सासिएर
छटपटाइरहेको सहर – यो काठमाडौं
गाह्रो भैरहेको छ छ प्रत्येक पल यसलाई
बिस्तारै बिस्तारै निर्जीव भएर गैरहेको छ – काठमाडौं
सकी नसकी सास फेरिरहेको छ यसले
हराइसकेको छ यसले आफ्नो अस्तित्व
आफैलाई बिर्सेर
बेहोश भएर गइरहेको महानगर – यो काठमाडौं

ह्वासह्वास गन्हाउँछ – आयातित सभ्यता
बोइङ चढेर हङ्गकङ्ग, बैंककबाट सिधै आइरहेको छ
नयाँ सभ्यता, नयाँ मान्यता यहाँ
सभ्यताको नाममा सबै खाले पश्चिमेली दुर्गन्धी हावा
सजिलै भित्रिरहेको ठाउँ यो
स्टार पल्स, जिटिभि, सिएनएन, म्यूजिक टिभि
आदि अनेक टेलिभिजन सेण्डरबाट
कोठा कोठा, ओछ्यान ओछ्यानसम्म आएर
सभ्यताका नौला नौला पाठ पढाउन लागिरहेका छन्
सभ्यताका नौला नौला पाठ पढ्दा पढ्दै
होस-हवास हराइरहेका छन् – यो सहरका युवा पुस्ताले
यिनीहरूले आफ्ना आमा बुबालाई बिर्सिंदै गएका छन्
स्वयम् आफैलाई पनि बिर्सिंदै गएका छन्
अपनत्वको चेतना हराएर वेहोशमा बाँचिरहेका युवा पुस्ताले
लरखराउँदै काँधमा बोकेर हिँडिरहेको सहर – काठमाडौं
गाजा, चरेस, हासिसको सुरमा
बियर, ह्विस्की, ब्राण्डीको सुरमा
बेसुर बेतालमा ढलपल पाइला चालेर

Бал Гопал ШРЕСТХА

ЭТО КАТМАНДУ

Задыхаясь от пыли и дыма,
Корчится в судорогах тело – это Катманду.
Каждый миг становится невыносимым
И постепенно ведет к гибели – это Катманду.
Еле-еле, но город пока еще дышит,
Хотя сам на себя уже не похож.
Не помня себя, мегаполис
Медленно теряет сознание – это Катманду.

Дурно пахнет заимствованная цивилизация,
Она прилетает на боинге из Гонконга и Бангкока.
Новая культура, новые нормы,
Все гнилое несется с Запада.
Это город, где оседает всяческий хлам,
Star Pals, GTV, CNN, Music TV –
Сотни телевизионных программ
Доступны в каждой комнате, в каждой постели.
Провайдеры этих программ
Дают уроки чужой цивилизации.
Зазубрив уроки новой культуры,
Молодежь этого города теряет голову,
И начинает забывать не только своих родителей,
Но и свою истинную душу,
И все это должен нести на своих плечах
Шагающий в неизвестность город – это Катманду!

Опьянев от гашиша, *чареса* и иных наркотиков,
От хмельного пива, от коньяка, от виски,
Шагая куда попало, качаясь,
Словно танцуя брейк-данс без музыки,

ताल न सूरमा जथाभावी ब्रेक डान्स गरेर
कहिले पछाडि ढ्वाँग खसालेर

कहिले अगाडि ढ्वाँग बजारेर
पचली देवताको घ्याम्पोझैं कुच्च्याएर
कुचुक्किएर आफनो रूप नै हराइसकेको छ – यो काठमाडौं
त्यतिका देवीदेवता, त्यतिका मठ मन्दिरहरू
कसैको हेरचाह बिना त्यसै बिलाइसकेका छन् यहाँको माटोमा
वास्तुकलाको अनुपम नमूना
तर कतै गजूर समेत सुटुक्क चोरेर
कतै देवता सबै सुटुक्क उखेलेर विदेश पुर्याएर
कतै मन्दिरको छानामै काँक्रो, फर्सी फलाएर
त्यसै त्यसै खेर फालेको छ – कलाकारिता
धुँसी पारिएको छ – यहाँ कलाकारिता
कला संरक्षणको नाममा – अर्धङ्‌गी पाखे सभ्यता
दुष्ट बालकले राम्रो फूल टुक्रा टुक्रा पारी बिगारेझैं
बिगारिरहेको छ – यो काठमाडौं

काष्ठमण्डप – एउटा रुखको काठले बनेको रे
काष्ठकलाको अनुपम नमूना भनेर
प्रदर्शन गरी हिँड्छन यहाँका दुष्ट शासकहरू
विदेशीहरूको अगाडि निर्लज्ज नाक ठाडो पारेर
भानुभक्तको अमरावति कान्तिपुरी नगरी यो
पृथ्वीनारांको सपनाको देश यो – नेपाल
बाँदरको हातमा नरिवलझैं भएको छ
कक्षा कोठामा पढाउँदै एक प्राध्यापकको मन रोयो -
गोर्खे राजाको ठाउँमा
राज्यबिस्तार कान्तिपुरले गरेको भए ?
दुर्भाग्य, तर उल्टो भयो
त्यही उल्टोकै परिणाम
विश्वमा सबभन्दा गएगुज्रेको देश कहलाइयो
उल्टो उल्टो काम गरेर दुर्भाग्य भोगिरहेको – काठमाडौं

То роняя пустую банку, то швыряя ее,
Подобный разбитой посудине божества Пачали-Бхирава,
Потерявший свой дивный лик город – это Катманду.

Множество храмов, ступ и монастырей,
принадлежащих разным богам и богиням,
Непревзойденные образцы архитектуры,
Незаметно скрылись под землей.
Кто-то сумел украсть позолоченный шпиль,
А кто-то – и само изображение божества!
Теперь эти шедевры – в чужеземных музеях,
А здесь – на крышах храмов сажают тыквы и огурцы.
Былое изящество пропало невесть куда,
Шедевры искусства покрыты гнилью,
Во имя сохранения искусства – разрушение,
Так неразумное дитя обрывает лепестки
чудесного цветка!
Постепенно разрушается город – это Катманду!

Храм Каштамандапа, говорят, был построен
из ствола одного дерева!
Никчемные правители повторяют всюду:
«Вот уникальный образец деревянного зодчества!»
Перед иностранцами они гордо задирают нос.
Воспетый Бханубхактой как райский город –Амарвати!
Провозглашенный Притхви Нараяном Шахом
столицей единого Непала,
Ныне этот город становится кокосовым орехом
в руках обезьяны.
Некий учитель плакал во время урока истории:
«Что случилось бы, если б объединил Непал
Не раджа Горкхи, а раджа Катманду?» –
задавал он вопрос.
«Но, к сожалению, случилось обратное!
Из-за этого страна оказалась на обочине истории!»
Прекрасный некогда город ныне несчастен –
это Катманду!

अन्त्य भएको छैन यो आक्रमण
एकपछि अर्को प्रहार, एकपछि अर्को धावा
असन, इन्द्रचोक, थँहिति, मरु, क्वहिति, थायमरु
यो सहरका प्रत्येक टोल, प्रत्येक गल्ली
क्षत-विक्षत, कुरूप, कुरूप भैसकेका छन्
पूर्व मेचीदेखि पश्चिम महाकालीसम्मका
दक्षिण पारिबाट नाङ्गलो थाप्न आएकादेखि
दलाई लामाका पात्र बोकेर भित्रिएकासम्मले
फोहोर थुपार्न ओइरिरहेको ठाउँ – यो काठमाडौं
पाइलै पिच्छे नाक थुनेर हिँड्नुपर्ने गरी
फोहोर वर्षा भैरहेको सहर यो
सिंगापुर, स्वीट्जरल्याण्ड बनाउने सपना देखाउँदै
नगरपिताहरू आफै स्वाहा भएर गैरहेका छन्
नगर सफाइ-अभियान – तर
दोबाटो, चौबाटो, मूलबाटोमै ढल बगे पनि
कसैलाई पर्वाह नभएको – बेवारिसे सहर यो
फ्याट-फ्याट बाटोमा फ्याँकिएका छन् कुकुरका सिनोहरू
झ्याल-झ्यालबाट फ्याँकिएका छन् मरेका मुसाहरू
आँखा उघार्दा नउघार्दै, आँखा खोल्दा नखोल्दै
मृत्यु जम्काभेट हुने ठाउँ – यो काठमाडौं

पाइलै पिच्छे मृत्युले मुख वाइरहेको – सहर यो
तैपनि कसैलाई छैन यहाँ मृत्युको चेतना
अजम्मरी जिन्दगी ठानिरहेका छन् यिनीहरूले
कहिल्यै मर्नुपर्दैन झैं लाग्छ यिनीहरूलाई
घोप्टिएर, घिस्रेर, निहुरेर
खुम्चिखुम्ची बाँचेका छन् यिनीहरू
यति स्वार्थी, यति मतलवी भएर बाँचिरेहेका छन् यहाँका मानिसगरू
एक टुक्रा सुखको निम्ति
आफैलाई बेच्न पनि तयार, अरूलाई बेच्न पनि तयार
एक टुक्रा स्वार्थको निम्ति
जतिसुकै नीच कर्म गर्न पनि तयार यिनीहरू

Еще не пройдена черная полоса!
Атаки следует одна за другой.
Асан, Индрачок, Тханхити, Мару, Кохити, Тхаемару –
Каждый район, каждый переулок города
Разрушаются день ото дня, становятся безобразными.
Сюда устремляются не только жители междуречья
Мечи и Махакали,
Но и с юга приходят люди с корзинами,
А из-за Гималаев – нищие ламы с чашей для подаяний
Все идут и идут сюда толпами,
Город тонет в потоках людей и грязи – это Катманду!

Чтобы пройти по городским улицам, нужно
прикрыть нос платком,
После дождя здесь повсюду грязь.
Городские власти вынашивают мечту –
Превратить город в Сингапур или Швейцарию!
Тратят уйму денег на очистные службы города,
Но грязь течет по перекресткам и площадям.
Все давно к этому привыкли.
Город, точно круглая сирота – это Катманду!

Порой на центральных улицах можно увидеть
дохлую крысу,
А порой – труп собаки или кошки.
Хоть открой глаза, хоть закрой –
В любую минуту здесь столкнешься со смертью,
Подобно смерти, разинув пасть, поджидает
очередную жертву – это Катманду!

Но никто здесь не чует разверстой пасти смерти.
Все думают, что будут жить вечно!
Все живут здесь, согнув спину, склонив голову,
Или ползут в пыли, корчась и содрогаясь.
Люди здесь так корыстолюбивы, так мерзки,
Что за кусочек личного счастья

पलभरको सुखको निम्ति आफ्नो रगत मासु
आफ्नै सन्तानको टाउको निमोठन पनि तत्पर
परिवार नियोजन रे ! के भनेको यो ?
छुद्र स्वार्थको लागि
कति निदर्यी हुन सक्दो रहेछ यो सहरको सभ्यता
आफै मात्र खाऔं, आफै मात्र पिऔंको सभ्यता
आफै मात्र जिऔं, आफै मात्र मोज गरौंको सभ्यता
वरोवर यहाँ परिवर्तनको हल्ला पिटिएको छ
परिवर्तनको नाममा यहाँ एकथरी भरियाहरूले
पश्चिमा मालिकहरूको अलिकति बढता जुठो
छर्न ल्याइरहेका छन्
वातावरण नै विषाक्त हुने गरी
सडेर स्याउँस्याउँति किरा परेको जूठो खाएर
यहाँका डुकूलण्ठु नेताहरू कुकुर झैं रमाएर उफ्रिहिँडेका छन्
सडे-गलेका खाना खाएर वान्ता गरेर
अनेक महामारी रोग फैलाइरहेका छन् यिनीहरूले
हेर्दाहेर्दै यो काठमाडौं दुषित, दुर्गन्धित भैसकेको छ
पाइला टेक्ने ठाउँ नहुने गरी मोटर, मोटरकार, मोटरबायक
घ्वाँ घ्वाँ – धुँवा छाडेर
कानै चहराउने गरी प्वाँय् प्वाँय्, टुइँ-टुइँ
छिःछिः दुर्दुर् गरी हेपेको छ यो देशको गरिबीलाई
धुलो र धुँवा मात्र छरेर
दम, टिबी, क्यान्सर अनेक रोग बाँडिरहेका छन्
गरिवीले त्यसै पनि मुटु कलेजो खाइरहेको देशमा
धान, गहुँ फल्ने खेतभरि – कंक्रिट महलहरू ठड्याएर
खान पिउन अभाव यो देशमा – कार र बङ्गलाको सभ्यता
विकासको नारासंगै भित्रिरहेका अनेक विकृति
राजधानी सहर यो – महानगर काठमाडौं

राजा महाराजका ऐशको दरबार
प्रधानमन्त्री, मन्त्रीहरूका शानदार निवास
प्रशासन, प्रशासकहरूको केन्द्र
मल्टीनेशनल इण्डस्ट्री, दलालहरूको केन्द्र

Готовы продать любого и даже себя самого.
Ради удовлетворения своей корысти,
Они готовы на любую низость.
Ради быстротечного благополучия готовы
Свернуть шею собственным детям, собственной плоти!
Что означает «планирование семьи»?
Как цивилизация может стать такой жестокой?
Жить должен только я! Радость должна
принадлежать лишь мне!
Пусть все достанется лишь мне: и еда, и питье!
До какой же степени корысть обуяла горожан!
Чаще всего здесь звучат лозунги о переменах,
Но во имя перемен одни, угождая чужакам,
Готовы ловить объедки своих западных хозяев,
Привозят сюда всякую заразу, что подтачивает
все вокруг,
Распространяя вирусы и болезни.
Пустоголовые лидеры, наглотавшись объедков,
От радости прыгают, как псы от подачки хозяина.
Повсюду грязь, нечистоты,
Мертвый воздух города – это Катманду.

Где по улицам идти пешеходам?
Кругом машины, автобусы, мотоциклы,
Везде дым и выхлопные газы,
Постоянный шум, гомон, рев моторов, визг
сигналов, будто насмешка над нищей страной!
Где раньше собирали богатый урожай риса и пшеницы,
Теперь стоят высотные железобетонные здания.
Сюда, где люди не в состоянии свести концы с концами,
Проникла цивилизация собственной машины
и роскошного дома!
Под лозунгами развития здесь скрыт обман.
Столичный город, мегаполис – это Катманду!

Роскошные дворцы королей и вельмож,
Прекрасные дома премьер-министра и министров,

सुन ब्यापारी, हासिस ब्यापारी, मूर्ति ब्यापारीहरूदेखि
तस्कर, कालाबजारीहरूको केन्द्र
राजनीतिको केन्द्र, आइमाई बेच्नेहरूको केन्द्र
यताको सामान उता, उताको सामान यता
रातारात लखपति, करोडपति, अरवपति
सपना झैं अजीव जादुको नगरी – यो काठमाडौं

सपनै सपना देखेर हिँड्ने यहाँका मानिस
जादू, तिलस्मीले लठ्ठिएका यहाँका मानिस
निन्द्राको निन्द्रामै थिचिएर मुर्दा भैसकेका छन् यिनीहरू
धुजाधुजा पारिसकेको छ यिनीहरूलाई
चारै तर्फबाट निर्वाध भित्रिरहेको बाढीले
घर-घरबाट घोक्र्याएर निकाल्दै छ यिनीहरूलाई
आफ्ना सन्तानका मुखमा अर्काका भाषा कोचेर
हतारिएका छन् यिनीहरू अर्काका दास बन्न
सभ्यताको नाममा -
आफ्नै देशमा पराया भएर जान हतारिएका – यी काठमाडौंवासीहरू
सबैखाले विकृतिलाई अँगालेर बाँचिरहेको – काठमाडौं

मान्छेमाथि मान्छे, मान्छेमाथि मान्छे
खोला र नदीले भरिएको देशमा
पानी समेत धीत मर्ने गरी पिउन नपाएर
छटपटाइ रहेको – काठमाडौं
यता ठक्कर, उता हण्डर खाएर
अर्धमृत भई बाँचिरहेको सहर यो
मेरो देशको राजधानी – महानगर काठमाडौं
न कसैको दुःखमा यसले आंसु झार्छ
न आफ्नै दुःखमा पनि यो रुन सक्छ
भावशून्य, चेतशून्य, संवेदनहीन भएर
निर्जीव लाचार भएर बाँचिरहेको महानगर – काठमाडौं।

२७ मार्च १९९५, काठमाडौं।

Административные центры и офисы
властных структур,
Мультинациональные корпорации
и шпионские агентства,
Центр политиканов и коррупционеров,
Контрабандистов, торговцев золотом, гашишем,
антиквариатом и торговцев женским телом,
Перевоз товаров отсюда – туда и оттуда – сюда,
Превращение в миллиардера за одну ночь,
Как в сказке, как во сне, чудо-город – это Катманду.

Люди здесь ходят и спят наяву, и видят сны.
Люди здесь обморочены фокусами и иллюзиями,
Их, не очнувшихся от сна, уже превратили
в мертвецов,
Их перемололи в жерновах в порошок.
С четырех сторон хлынул в страну поток
И гонит каждого взашей из его дома,
Собственным детям навязывая чужой язык,
Торопятся люди стать рабами пришельцев.
Торопятся стать чужими в родной стране
Во имя чужой цивилизации, эти жители Катманду!
Город, раскрывающий объятия всякой дряни –
это Катманду!

Столько людей, что человек нигде
Не находит даже воды, чтоб напиться, в стране,
Где текут полноводные реки, большие и малые.
Из-за нехватки питьевой воды страдают люди,
Мечутся туда-сюда в поисках – это Катманду.

Здесь получает пинки, там бьется о преграды,
Существует в полуживом состоянии этот город,
Столица моей страны – этот мегаполис Катманду!
Даже в собственном горе он не может рыдать,
Вынужден существовать беспомощно и бесцельно,
Без любви, без слез, без сочувствия – это Катманду!

27 марта 1995 г., Катманду

तेजप्रकाश श्रेष्ठ

छक्क परिरहिन् द्यःमैजु

'य...मा...' को चर्को स्वर गुन्जियो वातावरणभरि।

परेवाहरू भुरुरु उडे। आकाश धुलोको मुस्लोले भरियो।

म भरेङ ओर्लदै थिएँ। घर कर्याककुरुक गर्न थाल्यो। के भयो ? कसो भयो ? मैले ठम्याउनै सकिरहेको थिइनँ। घर त हल्लियो मज्जैले। झन्डै म भरेङबाट गुल्टिएको, धन्न भरेङ्को डन्डी समाउन भ्याएँ।

बाहिर कोलाहल मच्चियो। बुङ्बुङ्ती धुलो उड्न थाल्यो। मेरी पत्नी ढोकाको सँघारमै कक्र्याक-कुक्रुक्क परिन्। मेरो हातगोडा थरथर काम्न थाले।

'य...मा...' को चर्को आवाज फेरि सुनेँ। लौ, द्यःमैजु ! हाम्री छोरी ! मेरो मन झनै तर्सियो। आम्मै ! उनी त माथिल्लो तलामा एक्लै थिइन्। कतै केही त भएन ? चोटपटक पो लाग्यो कि ? मन थरर काम्यो। त्यसै बेला फेरि घर हल्लियो।

"य द्यःमैजु !.. ए छोरी !..." हामी एक्कैचोटी चिच्याए छौँ।

'य...मा...' आवाज आयो द्यःमैजुको। म आत्तिँदै माथिल्लो तलामा उक्लिएँ।

द्यःमैजु त झ्यालबाट बाहिर हेर्दै रहिछन्। लौ, केहि त भएको रहेन छ। ढुक्क भयो मन।

"लौ त्यसरी झ्यालमा बस्नुहुन्न, आउनोस्, जाऔँ तल !" – मैले उनलाई बोकेरै तल ल्याएँ।

छोरीलाई भेट्नासाथ आमाचाहीँ सुम्सुम्याउँदै रुन थालिन्। द्यःमैजु छक्क परिरहिन्। के भएको उनलाई थाहै थिएन।

"पिने झासँ ! पिने झासँ !" (बाहिर आउनोस् ! बाहिर आउनोस् !) बाहिरबाट चिच्याएको आवाज आइरहेको थियो। हामी घर बाहिर निस्कियौँ। घर हल्लन छोडेकै थिएन।

"द्यःमैजुया जय ! द्यःमैजुया जय ! (कुमारी देवीकी जय ! कुमारी देवीकी जय !)" – बाहिर जयजयकार गुन्जियो।

मानिसहरू हाम्री छोरी 'द्यःमैजु' लाई घेर्न आइपुगे। बल्ल मेरो होस् आयो।

हाम्री छोरी दुई वर्षअघि मात्रै जीवितदेवी कुमारी (द्यःमैजु) मा छानिएकी हुन्। आराध्यदेवी तुलजा भवानीकी प्रतिरूप। नेपालकी आराध्य जीवितदेवी कुमारी। वर्षौं वर्ष पहिलेदेखि परम्परामा बाँचिरहेकी जीवितदेवी कुमारी।

धेरै धेरै वर्षपहिले राजा त्रैलोक्य मल्लसँग खुशी भएकी तुलजा भवानीको प्रतिरूप देवी कुमारी। पहिले तुलजा भवानी राजासँग बसेर पासा नै खेल्ने गर्थिन रे। राजकाजमा सल्लाह र सुझाव दिन्थिन् रे। तर राजा र देवी पासा खेल्ने गोप्य कोठामा कोही पनि जानुहुँदैनथ्यो रे। तर एकपटक राजा त्रिलोक्यकी गङ्गादेवी नामकी छोरी गोप्य कोठामा पसिछन्। त्यसपछि तुलजा भवानीले राजालाई भेट्न छोडिछन्। अनि राजाको आग्रहमा तुलजा भवानीले सपनामै भनिछन् –

"राजन्, अब म तिम्रो सामु आउन सक्दिनँ। तर म बत्तिस लक्षणयुक्त कन्याको रूपमा तिमीलाई दर्शन दिने छु। तिमीले उनै कन्यालाई मेरो प्रतीक मानेर पूजा गर्नू। तिम्रो भलो हुनेछ।"

त्यस्ती कन्याको खोजी हुँदा त्यही नगरको एक बाँडाकी कान्छी छोरी भेटिइन्। गुरुको सल्लाहअनुसार शाक्यवंशकी उनै कन्यालाई तुलजाको प्रतिरूप जीवितदेवी कुमारी मानेर विधिपूर्वक पूजाआजा गर्न थालिएको रे। रजस्वला भएपछि कन्या फेर्दै कुमारी स्थापना गर्ने परम्परा नै बसेको रहेछ। आहा! यस्ती जीवितदेवी कुमारीको रूपमा आफ्नी छोरी! म मुसुक्क हाँसेँ।

भुइँचालोको कम्पन केही साम्य भएपछि मैले घर नियालेर हेरेँ। द्यःमैजु (देवी कुमारी) बस्ने कलात्मक चारखाले घर ठिङ्ग उभिएकै थियो। त्यति क्षेति भएझैं लागेन। बास्तुकला मजबुत नै रहेछ। मूल ढोका माथिको तोरणकी महिषमर्दिनी दुर्गाभवानी यथावत् थिइन्। ढोकाको दायाँबायाँ उभिएका ढुङ्गे सिंहहरूले सधैँझैँ सुरक्षा दिइरहेकै थिए।

म द्यःछेँ (कुमारी घर) हेर्दै घोत्लिन पो थालेछु। काठमाडौंका अन्तीम राजा जयप्रकाश मल्लले देवी कुमारीलाई खुसी पार्न यो घर बनाएका हुन् रे। एकपटक कुनै कारणवश राजा जयप्रकाश सत्ताच्यूत भएका थिए। त्यसै बेला एक रात उनलाई 'फेरि राज्य पाएस्' भनी जीवितदेवी कुमारीले सपना दिइन् रे। सपना देखेको केही दिनमै उनी फेरि राजा भएछन्।

फेरि राजा हुन पाएकोमा जयप्रकाश दङ्ग थिए। उनी फेरि राजकाज र सुखशयलमा व्यस्त रहन थाले। उनले देवी कुमारीको वास्ता गर्न छोडे। इष्टदेवी तुलजा भवानीको पनि मर्यादा राखेनन्। एकपटक त देवी कुमारीका एकजना भक्तलाई दरबारको खम्बामा बाँधेरै मारे रे। यस्तो चाला देखेर देवी कुमारीले रिसाएर श्राप दिइन् –

"यो राज्य अब तेरो रहने छैन।"

यस्ती साक्षात् जीवितदेवी कुमारीको श्राप सुनेर राजा जयप्रकाश साह्रै डराए। देवी कुमारीसँग माफी मागे। पश्चाताप गरे। कुमारीलाई खुसी पार्न उनले पूजापाठ लगाए। क्षमा पूजा गराए। उनले आफ्नै दरवार अगाडि तान्त्रिक विधिअनुरूप एउटा कलात्मक घर निर्माण गराए। राजाले त्यही कलात्मक घरमा देवी कुमारीलाई विराजमान गराए रे।

कुमारीका अभिभावकलाई बस्ने व्यवस्थाका साथै खानपान र पूजापाठको पनि बन्दोवस्त गरे।

अनि उनैले प्रत्येक भाद्र शुक्ल चतुर्दशीको दिनमा कुमारीलाई कलात्मक रथमा राखी काठमाडौं नगर घुमाउने चलन पनि चलाए। जति गरे पनि यो जात्रा उनले एघार वर्ष मात्र निर्बिघ्न चलाउन पाएछन्। बाह्रौं वर्षको कुमारी जात्राकै दिनमा राजा जयप्रकाश मल्ल सत्ताच्यूतभै लखेटिएका थिए रे। तर जीवितदेवी कुमारीको प्रथा जीवितै पाएका छौँ।

“एई, गुर्जु ! किन टोल्याएको ? कुमारीलाई अलपत्रै राखी छोड्ने !” – कसैले मलाई झक्झकायो। -

म झसङ्ग भएँ। मेरो सोचाई भङ्ग भयो। भुइँचालोको खैलाबैला साम्य भएको रहेनछ। द्यःमैजु (देवी कुमारी) चोकमै अलपत्र रहिछन्। हत्तपत्त सबैको सहयोग लिएर उनलाई सुरक्षित ठाउँमा सार्यौँ।

कुमारी घर ठिङ्ग उभिएको भए पनि भुइँ हल्लिएकै थियो...।

Тедж Пракаш ШРЕСТХА

ИЗУМЛЕНИЕ ЖИВОЙ БОГИНИ

«Ой… Ма-а!..» – громкий крик сотряс воздух.

Стая голубей мгновенно взлетела вверх! Небо уже было окутано густым облаком пыли.

В это время я спускался вниз по лестнице. Вдруг дом начало трясти. Сразу я не понял, что случилось. Дом начал сильно раскачиваться из стороны в сторону, как маятник часов. Я чуть не свалился с лестницы, но, к счастью, успел ухватиться за перила.

На улице поднялся неимоверный шум. Облака пыли заполонили все кругом. Жена моя, не зная что делать, сидела у порога двери. От страха у меня задрожали руки и подогнулись колени.

И тут я снова услышал громкий и отчаянный крик: «Ой… Ма-а!..»

– Это же зовет Део-маиджу ! Наша дочка!

Мне стало совсем не по себе. Страх охватил мое сердце. Я восклицал:

– Ох!.. Ведь она же была одна на верхнем этаже!

В голове моей замелькали разные мысли: «Не случилось ли с ней что-нибудь неладное? Вдруг она упала и поранилась?..» Я ужаснулся этой мысли. И вдруг дом снова начало трясти…

– Эй, Део-маиджу! Эй, дочка!.. – закричали мы с женой, и я бросился вверх по лестнице.

«Ой… Ма-а!..» – вновь раздался душераздирающий детский крик.

Торопясь изо всех сил, я, наконец, взбежал на верхний этаж дома.

Део-маиджу смотрела на улицу из знаменитого священного окна. При виде ее у меня отлегло от сердца Слава богу, ничего дурного с ней не случилось!

– Нельзя сейчас сидеть у окна! Надо скорее спуститься вниз! – сказал я.

Я поднял Део-маиджу на руки и спустился с ней по лестнице. Жена, оставшаяся на первом этаже, увидев дочь, стала обнимать ее и рыдать. Део-маиджу изумилась, ведь она абсолютно не понимала, что случилось!

«Пине джхасан!..» («Выходите наружу! Скорей!..») – кричали с улицы. Там стояла толпа людей. Уже не такие сильные, подземные толчки продолжались и дом дрожал. Мы вышли из дома и приединились к толпе на улице.

«Део-маиджуя джай!...» – «Да, здравствует богиня Кумари!..» – скандировала толпа приветствия в честь живой богини Кумари.

Все окружили нас, чтобы чествовать нашу дочь. Да-да, живую богиню Кумари!..

Только тогда я осознал всю опасность произошедшего. Два года назад наша девочка была избрана земным воплощением богини Кумари, богини Туладжа-Бхавани – покровительницы страны. Живая богиня – драгоценна! С давних пор в Непале она почитается всеми без исключения.

В старые времена, как говорят люди, богиня-покровительница государства Туладжа-Бхавани, явившись в образе красавицы, играла в кости с правителем страны. Во время игры богиня давала радже ценные советы, чтобы он успешно мог исполнять государственные обязанности. Однако в комнату, где они играли, никто не должен был входить – таково было ее условие.

Но однажды, когда в Непале стал править Траилокья Малла, принцесса Гангадеви нарушила этот

запрет, тайно проникнув в секретную комнату, и богиня тут же исчезла. С того самого дня богиня перестала появляться перед раджей. Это обстоятельство очень расстраивало правителя. Чтобы утешить своего почитателя, богиня явилась ему во сне и молвила:

– Раджан! Отныне я буду являться перед тобой в образе невинной девочки. Почитай меня, избрав девственницу с тридцатью двумя благими приметами – баттис-лакшана , принадлежащую к роду золотых дел мастеров – ванда. Я буду воплощаться в ней!

После долгих и тщательных поисков в столице нашли такую девочку: младшую дочь семьи Шакья. Ее стали почитать как живую богиню Кумари, в которой воплотилась богиня-покровительница Туладжа-Бхавани. Девочка оставалась воплощением богини до появления у нее женской крови.

Вспомнив древнюю традицию избрания живой богини, я с гордостью улыбнулся, поскольку именно моя дочь была в прошлый раз избрана живой богиней и потому сейчас почитается всеми в стране.

Когда подземные толчки немного стихли, я посмотрел на дом. Изящный трехэтажный дворец живой богини Кумари, построенный в стиле монастыря, невредимый, по-прежнему стоял на месте. Архитекторы позаботились о прочности и долговечности этой постройки. Изображение богини, укротительницы демона в образе буйвола Махишасура, на тимпане – *торана*, установленное над главным входом дома Кумари, невозмутимо смотрело на разрушения вокруг, а львы, охраняющие дом, по обеим сторонам входа, как всегда, находились на своем посту.

Глядя на дом Кумари – Део-чхен, я погрузился в размышления. Этот дом был построен Джай Пра-

кашем, последним раджей Кантипура из династии Малла, чтобы прославить живую богиню. Когда раджа из-за дворцовой интриги был свергнут с престола и изгнан из столицы, ему во сне явилась богиня Кумари, и предрекла: «Ты снова будешь владеть своим княжеством»!

Действительно, спустя некоторое время раджа вернул себе власть. Но он ничем не отблагодарил богиню Кумари и даже перестал оказывать должное внимание и почтение своей родовой богине-покровительнице Туладжа-Бхавани. Он сделался таким жестоким правителем, что даже погубил одного своего подданного, верного почитателя богини, привязав его к столбу во дворце без еды и воды. Увидев такое злобное поведение раджи, и без того сердитая на него богиня Кумари, вновь явившись во сне, прокляла его, сказав: «Ты лишишься своего престола через двенадцать лет!»

Раджа Джай Пракаш Малла очень испугался и раскаиваясь, стал просить у богини прощения. Он начал совершать различные молитвенные обряды в честь богинь Туладжа-Бхавани и Кумари. Наконец, рядом со своим дворцом он повелел построить великолепный дворец-храм для живой богини Кумари. Он распорядился обеспечить храм всеми предметами культа для ежедневной молитвы нитья-пуджа и ежегодных церемониальных обрядов в дни праздников, а также снабдить необходимыми продуктами семью наставника живой богини. Еще раджа учредил ежегодный праздник шествия колесниц живой богини Кумари по улицам столицы на четырнадцатый день светлой половины месяца бхадра.

Во время праздника живой богини Кумари 25 сентября 1768 года, как раз двенадцать лет спустя, раджа Джай Пракаш Малла лишился престола, так

как Кантипур, захваченный войсками Притхви Нараяна Шаха, раджи княжества Горкхи, был объявлен столицей нового единого государства Непал. Однако праздничное шествие колесниц в честь живой богини Кумари совершается и поныне...

– Эй, Гурджу ! Что ты стоишь, как истукан? Ведь богиня Кумари утомилась! Что ты молчишь? – Кто-то тряхнул меня.

Я опомнился от своих размышлений. Толпа по-прежнему волновалась и шумела, и множество людей шли мимо, спеша к своим близким. Деомаинджу мирно наблюдала за всем, что творилось вокруг .

С помощью собравшихся людей я отвел живую богиню в безопасное место. Время от времени земля продолжала содрогаться, но уже не с такой силой, как в первый раз. Земля еще дрожала, но дворец-храм богини Кумари продолжал стоять на своем месте, тогда как другие храмы рядом с ним превратились в руины в один миг.

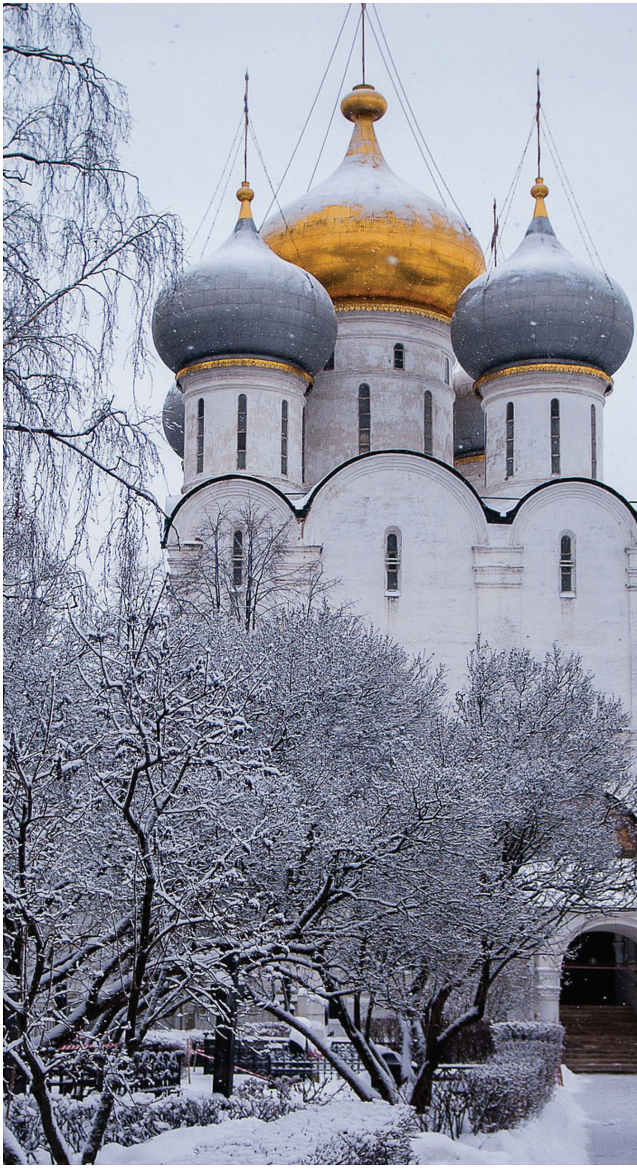

ЧАСТЬ ВТОРАЯ

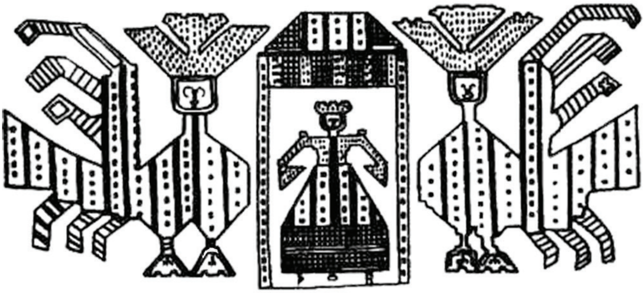

भाग दुई

Людмила *ВЯЗМИТИНОВА*

ДОРОГАЯ МОЯ СТОЛИЦА

Я родилась в Москве на Девичьем поле — вблизи Новодевичьего монастыря, в здании, расположенном в самом конце Погодинской улицы, в котором тогда был роддом, а ныне — какое-то учреждение, и первые семь лет жила там же — на Малой Пироговской улице; выросла в Хамовниках — на улице Фрунзенский вал (ныне он — Хамовнический). В то время по насыпи вдоль этой улицы ходили длинные неспешные товарные поезда, и было уютно засыпать под перестук колес, приглушенный, потому что наш дом стоял и стоит до сих пор торцом к насыпи. Этот дом — второй от набережной Москвы-реки, через которую тогда в том месте был перекинут Андреевский мост (ныне он перенесен в сторону Крымского моста и стал пешеходным). А тогда по нему ходили длинные товарняки, и были на нем узкие пешеходные дорожки — сколько же хожено мною по этим дорожкам! Зимой, с санками и лыжами — на той стороне реки находится Нескучный сад на Воробьевых (в то время — Ленинских) горах, а дети тогда в Москве с малых лет без всякого пригляда гуляли в своих дворах и довольно-таки обширных окрестностях. И мы с близкой подругой- одноклассницей, таща за собой прикрепленных к нам нашими родителями младших, я — брата, а она — сестру, его ровесницу, а потом и одноклассницу, с 8-ми наших лет гуляли, где хотели, в том числе — на той стороне реки, в безлюдных часто местах. На имеющиеся у нас копейки мы покупали обсыпан-

ные мукой белые-белые ситные булочки, 10 копеек штука, и какие же они были вкусные! Нет сегодня такого ситного хлеба!

После первого замужества я переехала в коммуналку на Колхозную площадь (ныне она — Сухаревская), где и родился мой сын. Из окон наших двух комнат был виден золотой купол института скорой помощи им. Н.В. Склифосовского, очень красивый в лучах утреннего солнца. На эти окна я смотрю каждый раз, когда приходится идти по Садовому кольцу, и вспоминаю, что тогда на площадке, где ныне находится станция метро «Сухаревская» (тогда — «Колхозная», запущенная в январе 1972 года, а до этого мы ходили к/от станции «Чистые пруды», в то время — «Кировская»), стояли дома, закрывая тот, в котором я жила, от шума Садового кольца, в то время, кстати, далеко не такого шумного. Потом мы с первым мужем и трехлетним сыном переехали в отдельную квартиру в Люблино, и на много лет местом наших прогулок стали Люблинские пруды и Кузьминский парк. И вот уже почти четверть века я живу недалеко от станции метро «Юго-Западная» — в оазисе между Вернадского и Ленинским проспектами. Училась и работала я тоже в Москве, в самых разных ее концах, практически все мои родственники и большинство друзей живут в Москве. Причем родители вернулись в район Девичьего поля — уже на Большую Пироговскую.

И с годами я стала замечать, что во время перемещений по Москве в моей голове появляются несколько сентиментальные мысли: вот здесь жил тот-то человек, вот здесь было то-то событие, здесь собирались такой-то компанией и по такому-то поводу, и так далее. А по мере лет и изменения жизни все чаще начинает двоиться и даже уже троиться восприятие: вот здесь были такие-то дома, такая-то

улица, такая-то контора, ходил такой-то транспорт, а потом, а теперь... Видимо, все это и делает город родным, создавая множество корней, которые привязывают человека к определенному месту в мире — единственному, без которого жизнь немыслима. А когда этот город — столица огромной страны, центр культурной жизни на родном языке и одновременно мегаполис, в котором взаимодействуют многие культуры...

В общем, понятно. Даже после небольшой отлучки из родного города, даже возвращаясь из ближнего пригорода, при виде надписи — обычно большими буквами — «МОСКВА», я, сколько себя помню, испытывала прилив радости и глубокое удовлетворение от ощущения, что я там, где мне и надо быть. Также, сколько себя помню, стоило мне услышать всем знакомую бравурную музыку и строки «Я по свету немало хаживал...» и далее:

Но Москвой я привык гордиться,
И везде повторял я слова:
Дорогая моя столица,
Золотая моя Москва, —

мной начинало овладевать некое, как мне когда-то казалось, сентиментальное чувство, которое временами начинало зашкаливать. Но когда, уже в солидном возрасте, отнюдь не в силу собственного желания, а подчиняясь семейным обстоятельствам, я ждала с грудой вещей и котом в перевозке в московском, тогда, по-моему, единственном международном, аэропорту Шереметьево посадки на самолет, следующий рейсом «Москва – Франкфурт», чтобы потом пересесть на рейс «Франкфурт – Бостон», — расставаясь с родным городом как минимум на несколько месяцев, то удивляясь себе, а в сущности, и не удивляясь, я вытирала градом катящиеся по лицу слезы и шептала:

Дорогая моя столица,
золотая моя Москва. —

вот тогда до меня начало доходить, что дело не только в сентиментальности, а большей частью — в некоей корневой системе, которая питает и которую лучше не испытывать на разрыв без чрезвычайной на то необходимости. И мне навсегда запомнилось, как через несколько месяцев после того отлета, уже вернувшись на пару месяцев обратно в Москву и опять улетев в Бостон, я стояла морозным январским вечером в пригороде Бостона — в одном из двориков городка Фраминхем — и ждала, когда погрузят в машину костюмы и декорации после праздника детской русской елки, в котором участвовала моя внучка, скользила взглядом по желто-коричневым трехэтажным домам этого дворика, и вдруг с отчаянной щемящей тоской ощутила, насколько отличная от родной московской жизни идет местная жизнь, и прямо до физической боли захотелось домой — в Москву, к родным белесым двенадцатиэтажкам — ну прямо щекой захотелось прижаться к такой двенадцатиэтажке.

Сегодня Москва действительно не та, которую помнят мои ровесники. Да и мир раздвинулся в своих границах. Не так давно вхожу, опаздывая на встречу, на одну из станций недавно построенного участка московского метро, которое за последние годы очень сильно разрослось, смотрю вверх, на вывеску, где обычно указано, к каким станциям идут поезда слева, а к каким — справа, и вижу: «в сторону центра» и «от центра». Раздраженно соображаю, «в сторону центра» или «от центра» мне надо ехать, чтобы попасть на нужную станцию и с тоской вспоминаю времена, когда на вывесках были попросту перечислены все станции, до которых идут поезда справа и слева после схода

с эскалатора, и с еще большим раздражением думаю, что вижу кальку с «downtown», «uptown». Ну и зачем калькировать из другой культуры? И таких калек, увы, появилось очень много.

Но Москва есть Москва — дорогой, любимый, единственно родной в мире город, один из великих мегаполисов. И когда я стою на смотровой площадке около Университета, или гуляю по набережной Нескучного сада, или сижу на лавочке — в Александровском саду или на площади перед Большим театром — список можно продолжить до бесконечности, хотя родной Юго-Запад навсегда самый родной, то мне так и хочется промурлыкать: «Я по свету немало хаживал...» — тем паче что «хаживания» этого действительно набралось уже «немало». И далее, как несколько — уже —десятилетий назад, с тех майских демонстраций, на которые меня водили с раннего детства, потому что родители были обязаны ходить на них от своих предприятий, повторяю слова, от которых перехватывает дыхание и увлажняются глаза:

Я люблю подмосковные рощи
И мосты над твоею рекой,
Я люблю твою Красную площадь
И кремлевских курантов бой.
В городах и далеких станицах
О тебе не умолкнет молва:
Дорогая моя столица,
Золотая моя Москва.

ल्युदमिला भ्याज्मितिनोभा

मेरो राजधानी अति प्यारो

मस्कोको नोभोदेभिच्ए मोनेष्ट्रीनजिकै देभिच्ए पोले भनिने ठाउँमा पोगोदिन्स्काया सडकको पुछारमा रहेको घरमा मेरो जन्म भएको हो। त्यतिखेर त्यसै घरमा प्रसूतिगृह थियो । अहिले त्यहाँ कुन्नि के संस्था रहेको छ । आफू जन्मेको शुरुका सात वर्षसम्म त्यसै ठाउँमा मालाया पिरोगोभ्स्काया सडकमा मेरा बचपन बित्यो। फ्रुन्जेन्स्की-भाल (हाल खामोभ्नीचेस्की) सडकमा म हुर्केकी हुँ। त्यसताका यस सडकको हाराहारी बालुवाको ढिस्कोमा बनेको लिग हुँदै लामो मालगाडी रेल सुस्तसुस्त गुड्ने गरेको थियो । रेलको पाङ्ग्राको 'छकछक' आवाजको लयसँगै बालुवा छर्कंदै खेल्न निकै रमाइलो हुन्थ्यो। हाम्रो घर बालुवाको ढिस्कोपछाडि थियो (अहिले पनि त्यो घर त्यहीं नै छ) र त्यसै हुनाले रेलको आवाज मधुरो सुनिन्थ्यो। मस्को नदीको तटबाट गणना गर्दा यो दोस्रो घर हो। त्यतिखेर नदीमा आन्द्रेएभ्स्की पुल थियो जुन अहिले क्रिम्स्की पुलतिर सारिएको छ र त्यसमा अब मानिसहरू हिँड्छन्। त्यसताका त्यसै पुलबाट लामो मालगाडी रेल गुड्ने गर्दथ्यो र त्यहाँ मान्छे हिँड्ने साँगुरो बाटो पनि थियो । मैले कति हो कतिपल्ट त्यो बाटो वारपार गरें, त्यसको त गन्ती नै हुन सक्तैन । हिउँदमा सानो स्लेज र स्कीद्वारा पारिपट्टि रहेको त्यतिखेर 'लेनिन्स्की' भनिने भोरोभ्यौभी डाँडामा रहेको नेस्कुच्नी बगैंचा पुगिन्थ्यो। मस्कोमा त्यतिखेर केटाकेटीहरू सानै उमेरमा पनि निश्चिन्त भएर आफ्नो घरआँगनमा मात्र नभई वरपर निकै टाढासम्म घुम्न जान्थे। ज्यादै मिल्ने सहपाठी सँगिनीसित म पनि बुवामुमाले हाम्रो जिम्मा लगाएका साना बालकहरूलाई साथैमा लिएर जहाँ मन लाग्थ्यो त्यहीं डुल्न निस्कन्थ्यौं। मसित मेरो आठवर्षको सानो भाइ हुन्थ्यो भने मेरी संगिनीसित त्यसै उमेरकी बहिनी हुन्थी । अक्सर हामी नदीपारि थोरै मात्र मान्छे हुने ठाउँहरूमा चहार्दथ्यौं। हामीसित भएको केही चानचुन मिलाएर हामी १० कोपेक पर्ने डल्लेरोटी किन्दथ्यौं। क्या मीठो हुन्थ्यो त्यो रोटी ! आजकल त्यस्तो रोटी बेच्न राखेकै हुँदैन।

मेरो प्रथम विवाहपछि म कोल्खोज्नाया (हाल सुखारेभ्स्काया) प्लोश्श्यादको सामूहिक घरमा बस्न पुगें । त्यहीं नै मैले छोरो पाएँ । हाम्रो दुई कोठाबाट क्लिफोसोभ्स्की प्राथमिक चिकित्सासेवा संस्थानको भवनमाथि सुनौला गजूर टडकारै देखिन्थ्यो । बिहान सूर्यको लाल किरण त्यसमा पर्दा निकै सुन्दर प्रतीत

हुन्थ्यो । जहिले पनि म 'सादोबोए कल्चो' भनिने उद्यानचक्रपथ हुँदै जाँदा ती झ्यालहरूतिर दृष्टि दिन्छु र अतीतको सम्झना गर्छु । पहिलेको कोल्खोज्नाया प्लोश्श्यादमा सन् १९७२ को जनवरीदेखि भूमिगत मेट्रो-रेलको 'सुखारेभ्स्काया' नामक बिसौनी बनेको छ । तर त्यतीखेर भूमिगत रेल चढ्न परे त्यसताका 'किरोभ्स्काया' भनिने 'चिस्तिए प्रुदी' मेट्रो-बिसौनीसम्म नै हिँड्नुपर्दथ्यो । म त्यसताका बस्ने घर 'सादोबोए कल्चो' सडकमा गुड्ने गाडीहरूको आवाज रोक्ने घरहरूको पछिल्तिर रहेको छ । हुन त त्यतिखेर आजकलको जस्तो कोलाहल सुनिंदैनथ्यो । पछि हामी मेरा प्रथम पति र तीनवर्षको छोरोसँगै लुब्लिनो भन्ने ठाउँमा सिंगो फ्लैटमा सर्यौं । यसरी धेरै वर्षसम्म हाम्रो घुमफिरको प्रिय स्थल बनेका थिए लुब्लिनोका तलाउहरू र कुज्मिन्स्की पार्क । हाल म 'युगो-जापाद्नाया' मेट्रो-बिसौनीनजिकै भेर्नाड्स्की र लेनिन्स्की मार्गको मध्य भागमा अवस्थित 'हरित क्षेत्र' मा बस्छु, जहाँ मेरो झण्डै एक चौथाई युग बित्नै आँटेको छ । मेरो शिक्षादीक्षा र कार्य पनि मस्कोसित नै सम्बन्धित रह्यो । वस्तुतः यस महानगरको विभिन्न कुनामा मेरा सबै नातेदार र अधिकांश इष्टमित्रहरू पनि रहेका छन् । अझ मेरा बुवामुमा पनि बोल्शाया पिरोगोभ्स्काया इलाकामा पर्ने देभिच्ये पोलेमै फर्कनुभएको छ ।

आजकल मलाई के लाग्न थालेको छ भने मस्कोमा एक ठाउँबाट अर्को ठाउँमा पुग्दा मेरो मनमस्तिष्कमा केही भावुक चिन्तन फुर्ने गरेको छ – यहाँ अमुक मानिस बस्थ्यो, यहाँ अमुक घटना घटेको थियो, यहाँ अमुक साथी-सँगातीसित भेटघाट गरिएको थियो, अमुक परिस्थितिमा र अमुक मौकामा इत्यादि । वर्षहरू बित्दै गएअनुसार र जीवनमा हेरफेर आएअनुसार अनूभूति दोहोरिन र अझ तेहरिन समेत थाल्दछ – यहाँनेर यस्ता घरहरू थिए, त्यहाँनेर यस्तो सडक थियो, यस्तो अफिस थियो, यस्ता यातायात साधन गुड्ने गर्थे, त्यसपछि र अहिले आदिइत्यादि... सम्भवतः यी सबैले धेरै हाँगाबिंगाहरूले बेरेर शहरलाई विश्वभरिमा कतै पनि नभएको एक मात्र यस्तो आत्मीय बनाइदिन्छन् कि त्यसबेगर जीवन नै निर्रथक लाग्छ । अनि जब त्यो शहर विशाल देशको राजधानी नै हुन पुग्छ र नाना थरीका संस्कृतिहरूको अन्योन्याश्रति मिलनस्थल बन्न पुगेको मातृभाषा, साहित्य र संस्कृतिको केन्द्रस्वरूप एक मात्र महानगरी भएको अनुबोध हुन्छ तब त...

छोटकरीमा यो त्यसै पनि बोधगम्य छ । आफ्नो आत्मीय शहरबाट छोटो समयको बिछोड र नजिकैको उपनगरको यात्राबाट फर्कंदा समेत ठूल्ठूला अक्षरमा 'मस्को' अङ्कित संरचना देख्नासाथ, जहाँसम्म मलाई थाहा छ, म आनन्दविभोर हुन पुग्दछु र म जहाँ हुनुपर्ने हो त्यहीं स्थानमा आइपुगें भन्ने लागेर महासुख अनुभव गर्दछु । मलाई सम्झना भएसम्म अत्यन्तै लोकप्रिय सुपरिचित संगीतको लय कानमा पर्नेबित्तिकै मेरो मनमस्तिष्कमा भावुकताको बाढी चल्न थालिहाल्छ र यदाकदा त

छाल समेत उर्लन थाल्दछ । अनि त म 'चहारियो संसार सबैतिर...' भन्दै स्वतः गुनगुनाउन थाल्छु -

मस्कोको गाउँछु गुणगान ।
दोहोर्याउँछु नित्य बयान -
मेरो राजधानी अति प्यारो,
रमणीय सुनौला मस्को !

उमेरदार भइसकेपछि मैले चाहेर नभई पारिवारिक परिस्थितिवश कम्तीमा पनि केही महीनाका लागि जब म आफ्नो शहर छाडेर मालमत्ताको रास र बिरालोसहित त्यसताका मस्कोको एकमात्र अन्तर्राष्ट्रीय विमानस्थल शेरेमेत्येभोमा 'मस्को – फ्रान्कफुर्ट' उडान भर्ने हवाईजहाज चढ्ने प्रतीक्षामा हुन्थें र त्यसपछि 'फ्रान्कफुर्ट – बोस्टन' उडानका लागि हवाईजहाज फेर्नुपर्ने छ भन्ने पनि सोच्न पुग्दथें, स्वयं छक्क पर्दै, छक्क नपरेको पनि हुन सक्छ, अनायासै म गालामा टप्कन पुगेको आँसु पुछ्न लाग्दथें । त्यतिखेर पनि म मनमनै गुनगुनाउन थालेकी हुन्थें –

मेरो राजधानी अति प्यारो,
रमणीय सुनौला मस्को !'

यो भावुकताको मात्र कुरो होइन, बरु कुनै यस्तो मूल प्रणालीसित नै यो सम्बन्धित छ, तसर्थ अत्यन्त जरुरी नभएसम्म बिछोडको पिरलो भोग्दै नभोग्नु बेस हुन्छ भन्ने कुरो मैले त्यतिखेर मात्र बुझ्न थालें । त्यस उडानको केही महीनापछि मस्कोमै एक– दुई महीना बस्ने गरी फर्कने क्रममा बोस्टोनको उपनगर फामिन्हेमको एउटा आँगनमा जनवरी महीनाको ठिहिर्याउने साँझपख उभिएर मेरी नातिनीबाट समेत भाग लिइएको नयाँ वर्षको उत्सवका लागि सिंगारिएको रूसी तलेसल्लाबाट झिलिमिली श्रृङ्गार-सामग्री र खेलौना आदि झिकेर गाडीमा हालुञ्जेल पर्खिरहँदा त्यसै आँगनमा रहेको पहेंलो-न-खैरो रङ्गको तीनतले घरका झ्यालहरूमा मेरो दृष्टि परेको थियो । त्यतिखेर मलाई त्यहाँको जीवनशैली आफ्नो आत्मीय मास्कोको जीवनभन्दा बेग्लै भएको अनुबोधले एकाएक मनभित्र चसक्क चिमोटेको अनुभूति भयो र सोझै सशरीर मस्कोको फिका कैलो रङ्को बाह्रतले आफ्नै घरमा पुगेर त्यसका भित्तामा गाला जोड्न पाए हुन्थ्यो भनी सोच्न थालें ।

आजको मस्को त्यस्तो छैन, जस्तो मेरा दौंतरीहरूको स्मृतिपटलमा अंकित छ । ठूलो परिवर्तन आइसकेको छ । केही दिनअघि मात्र मलाई एउटा भेटमा जानुथियो र म अबेर हुन थालेको हुँदा हतारिएर भूमिगत मेट्रो-रेलको बिसौनीभित्र पसें । पछिल्लो समयमा मेट्रोको निकै विस्तार भइसकेको छ र ठाउँ-ठाउँमा नयाँ मेट्रो-बिसौनीहरू देखापरेका छन् । मैले मेट्रो-बिसौनीको कुन चाहिं लाइन कुन ठाउँतिर जाने हो भन्ने लेखिराखेको सूचनापटमा हेर्न माथितिर नजर दिएँ । त्यहाँ दायाँ र बायाँ दुईतिर लेखिएको

थियो – ‘केन्द्रतिर’ र ‘केन्द्रबाट’ । म अकमक्क परेर विचार गर्न लागें – मैले आफ्नो गन्तव्यमा पुग्न ‘केन्द्रतिर’ जानुपर्ने हो कि ‘केन्द्रबाट’ लेखिएको तिर ! म अतीतको सम्झना गर्न लागें । उहिले सूचनापाटीमा सबै मेट्रो-बिसौनीहरूको नाम लहरै लेखिएको हुन्थ्यो । स्वचालित सोपानबाट तल उत्रने बित्तिकै छतमा टाँगिएको यस्तो सूचनापटबाट आफूले जानुपर्ने मेट्रो-बिसौनीतिरको लाइन सहजै थाहा पाइन्थ्यो । अचेल कतिपय मेट्रो-बिसौनीका सूचनापटमा रूसी अक्षरमा «downtown» र «uptown» लेखिराखेको देख्ता त मुर्मुरिएर सोच्न थाल्दछु – ‘बिरानो संस्कृतिको शब्द किन प्रयोग गर्नुपरेको होला ?’ खै, के भनौं ? पछिल्लो समयमा यस्ता आगन्तुक शब्दहरू भरमार प्रयोग हुन थालेको छ ।

जे जसो भए तापनि मस्को भनेको मस्को नै हो । अत्यन्त प्यारो र संसारभरिमा एकमात्र आत्मीय शहर ! यो विश्वकै एक सुन्दर महानगरी हो । मस्को राजकीय विश्वविद्यालयनेरको अवलोकन-स्थलमा उभिंदा होस् अथवा मस्को नदीको किनाराको हाराहारी रहेको नेस्कुच्नी बगैंचामा डुलिरहँदा होस्, अथवा अलेक्सान्द्रोभ्स्की बगैंचा वा बोल्शोइ ठेटरअगाडिको फोहरा-चोकमा राखिएको बेन्चमा बसिरहँदा होस्, अथवा आफ्नै निवासस्थान रहेको मस्कोको दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रमै रहेका यस्ता कतिपय सार्वजनिक स्थानहरूमा घुम्दा नै किन नहोस्, मलाई जहिले पनि गुनगुनाउन मन लाग्छ – ‘चहारियो संसार सबैतिर...’ ! नभन्दै मबाट वास्तवमै ‘निकै’ देशहरू ‘चहारियो’ पनि ! कैयौं अर्थात् दशौं वर्षअघि बर्षेनी मई महोत्सवको जुलुसमा मेरा आमाबाबु दुवैजनाले आफ्नो कारखानाका सहकर्मीहरूको साथमा पंक्तिबद्ध भएर भाग लिनै पर्ने भएकाले मलाई पनि सानै उमेरमा डोर्याएर लगिन्थ्यो । त्यतिखेर नै त्यहाँ सबैले गाउने गीतका गेडाहरू मैले कण्ठ पारिसकेको थिएँ। यो गीत गुनगुनाउँदा भित्रदेखि नै उमङ्ग भरिएर आउँछ र अनायासै आँखा रसाउन थाल्दछन् –

मस्कोबाहिरका वन प्यारा,
पुल रम्य नदीमाथि तिम्रा ।
मनमोहक लालमैदान,
क्रेम्लिन-घण्टाको गुञ्जन !
सुनिन्छ सर्वत्र नै गुणगान,
गाउँ, बस्ती र नगरमा तिम्रो ।
राजधानी मेरो अति प्यारो,
रमणीय सुनौला मस्को !..

ДАНИИЛ МОСКОВСКИЙ
МОСКВА
ЗОРКОСТЬ
ДЕРЕВЯННЫЙ ГРАД
ПРЕОБРАЖАЛ
ВЕЛИКИМ
МЕСТЕЧКОВЫЙ
СТАЛ
СБОР ЗЕМЕЛЬ
Н
АЧ АЛ
СПЛ ИВ
МИЛОСТЬЮ
НАРОД
ИВАН III
НА ОБЩЕСТВЕННОМ
КЛАДБИЩЕ
ТИХО ЛЕГ
СМОГ
НАПРАВЛЯТЬ ЦАРЕЙ
ПЕДАГОГИКА
ИЗ-ПОД МОГИЛЬНОЙ
ПЛИТЫ
КНЯЗЯ ШУЙСКОГО
КОНЕМ ПРИДАВИЛ

भासिली गालेच्यान

इतिहासको रहस्य

दानिइल मस्कोभ्स्की[1]

मस्को

काष्ठ नगरी
भव्य भयो निर्मित
राजधानी यो

दूरदर्शिता

थाल्यो
भूमिसङ्कलन
एकजूट पार्‍यो
दयाले जन

इभान तृतीय[2]

सगोल
चिहानघारीमा
बिस्तारै पल्टियो
राजाहरू हाँक्ने
शक्ति थियो

शिक्षा

शिलामुनिबाट
चिहानको
रजौटा
सुइस्कीलाई
घोडाले दबायो

[1] दानिइल मस्कोभ्स्की (१२६१-१३०३ ई.सं.) – मस्को राज्यका प्रथम स्वतन्त्र राजा, मस्कोका राजा र जारहरूका पूर्वज।

[2] इभान तृतीय (१४४०-१५०५ ई.सं.) – मस्कोका महाराजा, एकीकृत रूस राज्यका संस्थापक। उनले ‘सम्पूर्ण रूसका महाराजाधिराज’ भन्ने उपाधि पाएका थिए।

Сквозь татар
раз
брод
мос
тил
нас
з ɛ
р d
е э
л ш
державы славу
В глаза татар
пыль
ветер жаркий
гнал
си
подал к атаке
Унесен с поля
е
угод н
ику

В богородицы
и ен
м ины
с отр
устроил судьбе

Дмитрий Донской

Невский
навестил
в битвы
канун
. . . .л
враг
в кустах
прибрежных
Раз р
о ения
и опуст ш

убереженным завершали путь

चिरेर तातारहरूको मझधार
बनाइयो सुगम जङ्घार
गोरेटो पहिल्याइयो
देशको गौरव चुल्याइयो

देवमातासमक्ष
साइत जुराई
भाग्यको रेखा कोराई

दिमित्री दोन्स्कोइ[1]

तातारहरूको आँखामा
हुल्यो
हावाले ल्याई रापिलो
छारो
धावाको निम्ति
सङ्केतको झटारो

नेभ्स्कीको निगरानी
संग्रामको बिहानी
किनाराका
झ्याङतिर
शत्रुको निसानी

खेतबाट लगियो
चाहनेको चाहनाले
बाँचेकाहरूलाई

लूटपाट
र उत्पातको
बाटो नै बन्द

[1] **दिमित्री दोन्स्कोइ** (१३५०-१३८९ ई.सं.) – दोननदीको किनारामा कुलिकोभ रणक्षेत्रमा मामाएको सेनाविरुद्धको संग्राममा ८ नभेम्बर १३८० का दिन रूसी सैन्यको विजयपश्चात् 'दोन्स्कोइ' भन्ने उपनामले प्रख्यात मस्कोका राजा।

московские ведьмы

софья ворожей

взашей

гон

яла

взя

силу

топила

колдунья софья

макошь

старуха макошь

не сдавалась

победное стояние

заговор софьи

татар

рати

некст

однако

сдала

понос удружил

मास्कोका बोक्सिनीहरू

झारफुक गर्ने
जोखना हेर्ने
सोफियाले धपाउँछे
शक्ति
चुसी
डुबाउँछे

माकोश[1]

बुढी माकोश
लड्दै थी
किन्तु हारेर
ऊ लडी

विजयी विश्राम

सोफियाको झारफुक
तातार फौजको निम्ति
छेर्दैमा सास्ती

[1] माकोश – मस्कोकी सबभन्दा प्रसिद्ध र शक्तिशाली बोक्सी। उसले इभान तृतीयकी रानी सोफियालाई टुनामुनाको मद्दतले विस्थापित गर्ने प्रयास गरेकी थिई।

постриженная
над чашей с кровью
наговор зачатия
не дал
ж
постриг

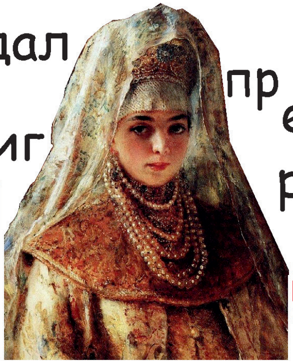

СОЛОМОНИЯ

шалости монахини
в рубашке куклу
в гроб
к ы
с р ла
хо они
биографию

проклятье
рюриковичей
бесплодная
о ля
пр к ла
есе
род весь

САБУРОВА

преподобная
поляк стращала
из м г ы
о ил
тб а
суздаль у врага

मुडिएकी

रगत भरिएको प्यालामाथि
फूबाचाले गर्भाधान दिएन
मुडिनुको विकल्प रहेन

सराप

रिउरिकका सन्तानहरूलाई
बाँझोपनाले सराप्यो
सारा वंश नै नास्यो

सोलोमोनिया

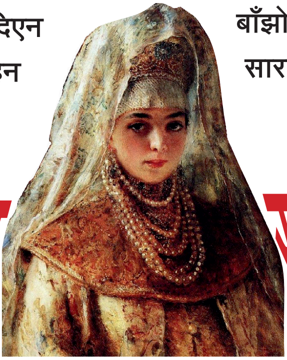

सुबोरोभा

भिक्षुणीको चुरीफुरी

चोलीभित्र पुतली
शवपेटिकामा लुकाई
जिन्दगानी चाहिं
चिहानमा दफनाई

महामना

पोल्याण्डवासीलाई तर्साइन्
चिहानबाट
सुज्दालभूमिलाई
छुटाइन् शत्रुबाट

सोलोमोनिया सुबोरोभा (अं. १४९०-१५४२ ई.सं.) – मस्कोका महाराजा भासिली तृतीयकी प्रथम रानी। उनी सन्तानहीन बाँझी भएकी हुनाले भिक्षुणी मुडेर मोनेस्ट्रीमा निर्वासित गरिइन्। अठारौं शताब्दीमा उनलाई सन्त-स्वामिनीको उपाधि प्रदान गरियो।

Долгожданный
юродивый ум
широкий чаду

у
с лил
не о и
царь

Появление
со страшным
мом
гро
зный
иван
од
р ился
ст аш
народ

चीरप्रतीक्षित

कुशाग्र बुद्धि
जतातत‌ै त्रास
पुत्रको विनाश
राजसंयमको ह्रास

प्रादुर्भाव

मेघ गर्जियो
भयङ्कर इभान
जन्मियो
लोक तर्सियो

उडान

बाइपङ्खी रैती
घन्टाघरबाट उड्यो
शासक पातालमै भासियो

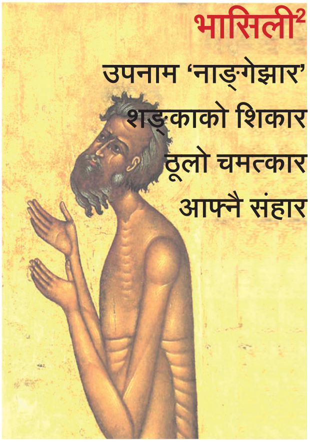

भासिली[2]

उपनाम 'नाङ्गेझार'
शङ्काको शिकार
ठूलो चमत्कार
आफ्नै संहार

[1] **इभान चतुर्थ** (१५३०-१५८४ ई.सं.) – युद्धमा वीरता हासिल गरी राज्यविस्तार गर्दै नयाँ नयाँ मुलुक आफ्नो राज्यमा मिलाएर स्थानीय स्वायत्वताको विकास गर्ने 'भयङ्कर' उपनामधारी प्रथम रूसी जार (सम्राट्) । उनको राज्यकालमा शासन-संचालनका लागि आम दमन र प्राणदण्डको सहारा लिइएको थियो ।

[2] **भासिली ब्लाझेन्नी** – हिउँदको कठ्याङ्ग्रिने जाडोमा समेत नाङ्गै हिँड्ने हुनाले 'भासिली नाङ्गा' भन्ने उपनामले समेत प्रसिद्ध सिद्ध-पुरुष । उनी भविष्यद्रष्टा थिए र जीवनकालमा मात्र नभई मृत्योपरान्त समेत उनले कैयौं चमत्कार गरेका थिए भनिन्छ । जार इभान भयङ्कर समेत उनीबाट त्राहिमाम थिए । मस्को लालमैदानस्थित नौवटा गजूर भएको प्रसिद्ध चर्चले उनकै नाम प्राप्त गरेको छ ।

Татьяна ВИНОГРАДОВА

из цикла «СНЫ О СТАРОМ ДОМЕ»

Мучительное, болезненное чувство связывает меня с этим городом. Городом, которого уже почти нет. Городом, поминутно исчезающим, пожирающим самого себя, в самого себя проваливающимся, схлопывающимся. Городом, входящим в коллапс.

От этого города хочется убежать. Спрятаться. Не видеть, как он пульсирует и колышется, постоянно изменяя очертанья. Если смотреть с Воробьевых гор, кажется, сиренево-розово-желтая громада мегаполиса дрожит, трескается, пузырится – то там домище вспучится, то тут домишко пропадет. Город в постоянном движении. А я хочу говорить о застое. О запустении. Когда время стояло. Стояли и дома. Ветшали потихоньку, но, в сущности, не менялись десятилетиями. И в них жили люди. Преимущественно в коммунальных квартирах. Я хочу вспомнить фрагменты, отзвуки, тени того времени, когда нежнейшая прелесть запустения конца 1960-х – начала 1970-х осеняла мой Центр.

Два дерева хотят друг к другу.
Два дерева. Напротив дом мой.
Деревья старые. Дом старый.
Я молода, а то б, пожалуй,
Чужих деревьев не жалела.

Для Цветаевой эти тополя были чужими. Для меня – нет. Почему? Потому что я родилась в этом доме (ну, точнее в роддоме № 1 имени Грауэрмана), но выросла здесь, под тополями. И мама моя здесь же родилась. Бабушка и дедушка заселились

в квартиру номер 3 дома 6 по Борисоглебскому переулку в 1923 году. По ордеру, который дедушке выдали как бывшему красноармейцу. И волею судеб из пяти квартир они попали именно в ту, двухэтажную, где до этого жила Марина Ивановна. В итоге, десятилетия спустя, нашей семье, в дополнение к первой комнате, достались еще две. Одна – верхняя, на антресолях, называемая у нас «Бабушкиной». Она принадлежала во времена Цветаевой Сергею Эфрону. Именно оттуда, через окно, был выход на плоскую крышу флигеля, где, говорят, Марина танцевала.

Я помню, как оглушительно там ворковали голуби, неправдоподобно ворковали, почти отчетливо-членораздельно, любовно как-то и загадочно. Это была целая голубиная цивилизация – на этих крышах и подоконниках. Больше я нигде и никогда такой голубиной симфонии не слышала.

В этой верхней комнате у меня была целая стенка с полками, забитыми игрушками. Одна из полок располагалась в нише замурованного окна. Мишки всеразличные, кукла-негритенок, кукла-монголенок (шестидесятые годы, время дружбы народов! да еще Монгольское посольство напротив!), кукла-гибрид, страшноватенькая и таинственная: вроде коричневая шкурка медвежья, лапки беспалые вместо ручек-ножек, но при этом девочкино лицо выглядывает из меха...

Желтый игрушечный телефон на перевернутом красненьком ведерке для куличиков – у кровати в кукольной комнате. Я знала, что Телефон Ставят На Тумбочку, именно знала, но, покуда не пошла в школу, никогда такого не видела. У нас в квартире телефон был один на всех, черный, с тяжеленной, «убойной» трубкой, с диском, на котором помимо цифр были начертаны еще и какие-то загадочные

буквы. Висел он в конце общего коридора, прикрученный к стене намертво. Мне нравилось по нему звонить – я чувствовала себя солидной…

В этой верхней комнате жил удивительный, «андерсеновский» книжный шкаф темного дерева, со стеклянными створками в резных рамах. Когда меня, совсем еще маленькую, там, посреди этой верхней комнаты, мыли в ванночке, поставленной на венский стул и табуретку, я разглядывала книжные корешки. Особенно мне нравились четыре серых с витиеватыми золотыми буквами «Сага о Форсайтах». Я придумывала, что это за сага такая (сказка, наверное?), мечтала, что когда-нибудь прочитаю эти загадочные книги… Был там еще дубовый резной буфет с мерцавшими в нем зеленого стекла рюмочками («царские еще» – говорила про них бабушка, почему-то пригорюнившись), стоял огромный тяжеленный дубовый же стол…

А позже, за выездом соседей (мать называла их «старики Рихтеры») нашей стала и та комната, что с окном-фонарем в потолке. Стекла в этом необыкновенном окне к тому времени были повыбиты, заколочены фанерой, и комната получила у нас прозвище «темной». В ней стояли холодильник и обеденный стол, висел дачный умывальник с тазиком. Потому что наверх, на антресоли, каждый раз умываться не нахóдишься, далековато, да и одна раковина на всех, к тому же – с холодной водой. Я впервые увидела настоящую ванную комнату (с огромной белой ванной! с горячей водой!) в восемь лет, в гостях у школьной подружки. Было трудно не показывать удивление. Но я старалась.

Когда я подросла, стала ходить мыться вместе с бабушкой и мамой в Краснопресненские бани… О! Какие впечатления! Тела, тела… Толстые, сухие, красивые, жуткие, старушечьи, девичьи, бабьи…

Детей в бане было на удивление мало. Нелогичные скамейки для переодевания в предбаннике: спинка красная, сиденье синее. Или наоборот, не помню уж сейчас, но – раздражало отсутствие логики, неуместная, на мой детский взгляд, пестрота. Скамьи должны быть либо только красными, либо только синими. А внутри, в клубах пара и плеске воды – страшные серые тазы с воровским названием «шайки», какие-то древние, осклизлозаскорузлые... Скользкий плиточный пол, залитый водой по щиколотку, – по нему было удивительно противно и брезгливо шлепать босиком. И – тела, тела... Мокрые, распаренные, беззастенчиво, всем скопом вторгавшиеся в мой маленький упорядоченный мир, они были повсюду, их было видно даже сквозь закрытые глаза... Ощущения радостной чистоты, короче, как-то не возникало.

Одно из самых первых моих сознательных воспоминаний – золотой осенний день (но, кажется, я еще не знаю таких понятий, как «осень» и «золото»). Мне, наверное, года четыре. Я сосредоточенно еду на трехколесном велосипедике по тротуарчику вдоль «нашего газона», лежащего между улицей Писемского и зданием Монгольского посольства. О, эти благословенные газоны! Они – моя первая встреча с природой, да что там – с жизнью вообще! А в этот день на мне надета розово-серебристая переливающаяся курточка (видимо, из модной тогда болоньи, как я теперь понимаю). Курточку мне подарила бабушкина сестра, которую я звала Баба Лиза. Она была очень добрая и веселая, беспрерывно курила папиросы «Беломорканал». Потом, когда я повзрослела, мама мне рассказала, что Баба Лиза в молодости была революционеркой, состояла в партии эсеров... Но пока я об этом ничего не знаю. Курточка

мне ужасно нравится. Я еду на своем трехколеснике по опавшим кленовым листьям, чувствую их сладкий, пронзительный и мягкий запах. До сих пор для меня этот аромат – пряный, пьянящий и нежный, – лучший на свете. Но в ту осень я не знаю еще, как его определить. Для меня он слит воедино с солнцем и с моей новой курточкой, и с ощущением ветерка на щеках, когда я стараюсь ехать быстрее. И, чтобы уж все органы чувств были задействованы, помнится, что дома бабушка угощала меня – в этот ли день или в другой, но примерно тогда же – «Невским» пирогом с кремом. Продавался он в кулинарии при рестонане «Прага» на Старом Арбате – такой восхитительный, высоченный и круглый пирог. Формой он напоминал купол, а внутри у него был белый, неприлично жирный и невообразимо вкусный крем. Причем уже тогда я знала название, и в названии был отдельный интерес и загадочность: «Невский» – значит, не принадлежащий Москве! Из Ленинграда! И, может быть, его любил есть с чаем сам князь Александр Невский! (Родители иногда рассказывали мне исторические сказки на ночь.)

Теперь подробней о самом газоне или «газончике». Перпендикулярно к проезжей части улицы шла подъездная дорожка к стоявшему в глубине зданию Монгольского посольства. По сторонам ее тянулись две озелененных полосы, окаймленные узенькими тротуарчиками, как раз подходящими для детей. Правый, ближний к дому, тротуарчик, так и назывался «наш», и на нем мне разрешалось играть одной – в основном, под двумя достопамятными тополями. Левый же именовался «дальний» или просто «Тот». Таков был мой огромный мир.

Мир этот был населен различными обитателями. В нем жила Липа, очень прямая, пышная, под

которой я впервые поняла, что такое «шатер листвы». Еще была Роса На Траве, на каких-то милых мохнатеньких листочках – в середине ОДНА ртутная капля-линза, и я слизывала эти линзы… Капельки на кремовых цветочках «глухой крапивы» – не жгучей, не кусачей, в отличие от крапивы обыкновенной, а доброй…

Иногда я приносила в этот мир жестокость, – просто из любопытства, еще не понимая, что так поступать нельзя. Муравьиные бои, которые я устраивала, прилежно стравливая рыжих муравьев с черными и наблюдая за результатом. Побеждали всегда рыжие, они были крупнее и злее черных. И маленькие чернушки, смешно посопротивлявшись, неизменно затихали, опрокинувшись на спинку или скрючившись на боку. Иногда я на время перекрывала входы в муравейник стеклышками, и с интересом смотрела, как муравьиный народец толпится и суетится, пытаясь сдвинуть неподъемную прозрачную преграду.

Напоминаю, все эти развлечения юной натуралистки происходили в самом центре Москвы, в арбатских переулках. Теперь, сорок лет спустя, на этих газонах и травы-то почти не осталось. Какие уж тут муравейники!

Были в моем мире и менее жестокие игры. Например, собирание тополиных сережек в полосатый жестяной расписной баульчик… Мои тополя были без пуха, только сережки с них опадали, темно-алые, мягкие, красивые. Я их называла «червячками». Настоящих червяков и гусениц боялась (кроме дождевых, их я спасала после дождя, относила с асфальта в траву, и до сих пор спасаю). А эти, тополиные, были милые, «понарошку».

Деланье «секретиков» под тополем и в его дупле, расположенном низко, как раз на удобном для нас, малышей, уровне.

Брошечка с деревянными висюльками (две маленькие «матрешки», но с талией). Желание подарить эту брошку самой страшной и уродливой из всех старух, похожей на слона в её огромном плаще, серого, пыльного, слоновьего цвета. Старухи сидели на стульях на нашем газоне. Скамеек почему-то не было. Про эту, в сером, шептались, что у нее «диабет». С тех пор осталось: диабет – это ужасно, лучше все, что угодно, но только не это. Еще была добрая старушка Татьяна Ивановна, в белом платочке в горошек. Она всегда нас звала, чтоб приласкать, дать что-то сладенькое. Мы, дети, старух этих не боялись, мы с ними друг другу не мешали. Они сидели, нет, восседали на своих стульях-тронах. Мы копошились рядом.

Разглядывание загадочных извилистых трещин в асфальте и гадание по ним – подробностей и правил уже не помню.

Серьезные, обстоятельные разговоры с милиционерами (о чем, Господи?!), охранявшими Монгольское посольство (ни одного ростом с Дядю Степу, к сожалению, зато все добрые).

Снежинки под качающимся конусом света из подвешенного над переулком, поперек его, «на проводах» конического же, жестяного (наверное?) фонаря...

Я помню ночь на склоне ноября.
Туман и дождь. При свете фонаря
Ваш нежный лик – сомнительный и странный,
По-диккенсовски – тусклый и туманный,
Знобящий грудь, как зимние моря...
– Ваш нежный лик при свете фонаря.

Не об этом ли именно фонаре писала Цветаева?

Вообще – чувство зимы. Большой снежной зимы. Снежинки, мерцавшие на сугробе под моим самым любимым «тронным» деревцем (с низкой

развилкой, в которой можно было сравнительно удобно усесться).

Ольга Сергеевна, моя первая учительница музыки, очень-очень молодая. Худая, сутулая, в очках, она играла мне на пианино хрустальную мелодию песни – слова (хотя и явно не цветаевские) помню до сих пор:

...Мерцают снежинки и падают прочь.
Идем мы с тобой в новогоднюю ночь.
Идем, а кругом – тишина и покой,
и только снежинки ты ловишь рукой...

Огромные сугробы, выше меня. Я в них рыла пещерки, выстилала вязанными салфеточками и атласными подушечками-думками, и селила туда тепло одетых кукол. Снег сахарно искрился, было сказочно, хотя и холодно. Таких огромных, переливающихся всеми цветами, удивительных снежных искр-звезд-мерцаний после уже не было никогда.

Дворник с ломиком и огромным блестящим, зеркальным почти, скребком из жести. Асфальт на тротуарах зимой был чист, без наледей. Эти дворники, ездили на смешных грузовых бирюзового цвета мотороллерах, очень шумных. Нынче такие мотороллеры остались, кажется, только на кладбищах. Мама рассказывала, что до войны переулок был вымощен брусчаткой (асфальт появился лишь в конце войны). А в довоенные времена по брусчатке со страшным грохотом проезжал извозчик, с железными (почему-то) ободами колес. И если проедет один автомобиль в день по нашему переулку, то это было много.

...Тетя Наташа (дочка Бабы Лизы и, соответственно, мамина двоюродная сестра), бывавшая в Москве в командировках, шумная и модная, однажды подарила мне брошь чешского стекла. Я любила «собирать драгоценности», года в четыре уже

распотрошила двое маминых бус – из горного хрусталя и из искусственного жемчуга, соорудив себе «потрясающее» ожерелье. Одной из любимых книг моих была «Малахитовая шкатулка» Бажова. Тети-Наташина брошь была дивная, с тремя подвесками, стекляшки играли роль, как я сразу определила взглядом знатока, хризолитов и изумрудов.

Стоял веселый май, и я пошла гулять (мне было уже шесть лет, и меня отпускали пастись одну в окрестностях дома). Пошла я через Проходной двор, это был еще один мир, находившийся между нашим домом и Ржевским переулком.

И тут я увидела, как ломают дом. Тяжеленным шаром на толстенной цепи. (Потом я узнала, что шар, оказывается, чугунный, и называется странно и страшно: «баба».) И вот этим шаром – по стене дома – р-раз! Пыль. Дом стоит. – Р-раз! – Пыль. – Р-раз! – Отвалился кусок стены. А я стою почти напротив, на другой стороне переулка, любуюсь приколотой на груди брошкой (три зеленые подвески качаются, солнце слепит), от солнца хорошо, от тяжелого шара – плохо и непонятно: зачем ломают дом? Он же хороший! Нормальный! Чтобы как-то объяснить себе происходящее я шептала: взрослым, наверное, виднее, им лучше знать. Может, на самом деле дом совсем не такой хороший. Я не боялась и не грустила. Я просто не понимала – ЗАЧЕМ.

...А потом, годы спустя, уже переехав на окраину и лишь изредка навещая свои переулки, я каждый раз недосчитывалась – дерева, дома, газона. И наконец перестала приезжать совсем. И тот зачарованный мир детства остался лишь в памяти. И в этих строчках.

ताच्याना भिनोग्रादोभा

पुरानो घरको सपना

यस सहरसित मेरो दुःखदायी र पीडाजनक भावना गाँसिएको छ। त्यो सहर जसको अस्तित्व नै मेटिन लागेको छ। यस्तो सहर जसले पल-पलमा आफ्नो अस्तित्वलाई जराजीर्ण तुल्याउँदै स्वयं आफैले नष्ट र विलुप्त पार्न थालेको छ। यो सहर संहारको भुमरीमा लोप हुँदैछ।

यस सहरबाट कतै टाढा भाग्ने चाहना हुन्छ, कतै लुक्न मन लाग्छ, ताकि आफ्नो रूप निरन्तर परिवर्तित गर्दै कसरी ऊ छट्पटाउँदै छ र हल्लिँदै छ भन्ने देख्नै नपरोस्! भोरोभ्योभ डाँडाबाट हेर्ने हो भने महानगरको कैलो-पहेंलो-बैजनी रङको अजङ्गको ढिक्का चलमलाएको, थर्केको, उर्लेको भान पर्दछ। कतै भीमकाय भवन थेप्चिएको छ त कतै विशाल घर नै बिलाएर गएको छ। पूरै सहर निरन्तर गतिशील प्रतीत हुन्छ। तर म चाहिं उजाडिएको होइन कि स्थीरताको कुरा गर्न चाहन्छु। जतिखेर समय स्थीर थियो, घरहरू पनि अडिग थिए। बिस्तार-बिस्तार जीर्ण हुने क्रम थियो, तर दशौं वर्षसम्म अपरिवर्तनीय नै थियो। ती घरहरूमा मानिस बस्तथे। अक्सर सगोल फ्लैटमा सबै अटाएका थिए। म त्यस समयको केही टुक्रा, स्वर र छायाको संस्मरण गर्न चाहन्छु जतिखेर सन् १९६० को अन्त्य – १९७० को प्रारम्भतिरको समयावधिमा मेरो सहरको केन्द्रलाई सुकोमल आभाले चहकिलो पार्दथ्यो।

> एक-आपसमा मिल्न चाहन्छन् दुई वृक्ष ता।
> दुवै ती वृक्ष छन् मेरो घरअगिल्तिरै खडा॥
> वृक्ष ती हुन् पुराना नै, पुरानै घर त्यो पनि।
> जे होस्, परन्तु साँचो हो – म छु यौवनकी धनी।
> अरुको वृक्षका निम्ति दया जाग्दैनथ्यो ममा... ॥

कवयित्री त्स्वैताएभा[1] को निम्ति ती बनपिपलका रूखहरू पराया थिए। तर मेरो निम्ति चाहिं होइन। किन ? किनभने मेरो जन्म त्यसै घरमा भएको थियो (अझ यथार्थमा भन्ने हो भने घर नम्बर १ मा रहेको ग्राउएरमान प्रसूतीगृहमा)। तर म त्यही बनपिपलको छहारीमा नै हुर्केकी थिएँ। मेरी आमाको जन्म पनि त्यही नै भएको थियो। हजुरबा र

---

[1] त्स्वैताएभा, मारिना इभानोभ्ना (१८९२-१९४१ ई.सं.) – रूसी साहित्यको रजतयुगकी प्रसिद्ध कवयित्री।

हजुरआमा भने सन् १९२३ मा बोरिसोग्लेब्स्की गल्लीको ६ नम्बरको घरमा फ्लैट नम्बर ३ मा बसाइँ सर्नुभएको थियो। पूर्व लालसैनिकको हैसियतले मेरा हजुरबालाई प्रदान गरिएको पुर्जामा यो ठेगाना लेखिएको छ। नियतिवश उहाँहरूले त्यस घरमा रहेका पाँचवटा फ्लैटमध्ये त्यही दुईतले फ्लैट पाउनुभयो जसमा पहिले मारिना इभानोभ्ना त्स्वैताएभा बसेकी थिइन्। अन्ततोगत्वा दशौं वर्ष बितेपछि हाम्रो परिवारलाई पहिलो कोठामा अरू थप दुई कोठा दिइएको थियो। एउटा माथिल्लो तलाको बार्दली भएको चाहिं। त्यसलाई हामीले 'हजुरआमाको कोठा' भन्ने गरेका थियौं। त्स्वैताएभाको समयमा त्यो कोठा सेर्गेइ एफ्रोन[1] को स्वामित्वमा थियो। त्यसै कोठाको झ्यालबाट बङ्गलाको मुण्डे छानामा जान मिल्दथ्यो। त्यहाँ त्स्वैताएभा नाच्तथिन् भन्ने गरिन्छ।

मलाई सम्झना भएसम्म त्यहाँ मधुरो स्वरमा परेवाहरूको घुरघुर सुनिन्थ्यो। यी पखेटादार जीवहरूको घुराइ वर्णनातीत थियो – निकै स्पष्ट, सुमधुर अनि रहस्यमय ! त्यस छानामा र झ्यालका तख्ताहरूमा विकसित भएको परेवा जगत्को सभ्यता भन्न सकिन्थ्यो होला ! मैले कहित्यै पनि र कतै पनि परेवाहरूको यस्तो सुमधुर सिम्फनी सङ्गीत सुनेकी छैन।

त्यस माथिल्लो कोठामा मेरो तख्तावाल दराज थियो जहाँ थरीथरीका खेलौनाहरू भरपूर थिए। एउटा तख्ता त झ्याल टालेर बनेको खोपामै पनि थियो। विभिन्न आकार-प्रकारका भालुहरू, हब्सी-पुतली, मङ्गोल-पुतली (सन् १८६० को दशक जनमैत्रीको समय थियो ! त्यसमा पनि मङ्गोलियाको राजदूतावास समेत घरअगिल्तिरै रहेको थियो !)। त्यसै तख्तामा भालुको खैरो भुत्ले छाला, हातगोडाको सट्टा नङ्ग्रे पञ्जा, भुवादार टाउकोमा निकै राम्री केटीको अनुहार भएको एउटा डरलाग्दो मिस्कट-पुतली पनि थियो...

त्यहाँ पुतली-कोठामा रहेको पलङनेर नै यिनै पुतलीहरूका लागि उल्टाएर राखिएको रातो बाल्टीमाथि एउटा पहेंलो रङ्गको खेलौना टेलिफोन पनि थियो। टेलिफोन सानो टेबुलमाथि राखिन्छ भन्ने मलाई थाहा नहुने त कुरै थिएन। तर स्कूल नजाने भएकीले कहिल्यै पनि देखेकी चाहिं थिइनँ। हाम्रो सगोल फ्लैटमा चाहिं सबैका लागि एउटै मात्र टेलिफोन थियो – कालो रङ्गको, निकै गह्रुँगो र 'भद्दा' रिसिभर भएको। औंला हालेर घुमाउने चक्कीमा अङ्क मात्र नभई कुन्नि के-के रहस्यमय अक्षर पनि छापिएका थिए। त्यो साझा करिडोरको पुछारनेर भित्तामा झुण्ड्याइराखेको थियो। मलाई त्यसको चक्का घुमाउन निकै मन पर्दथ्यो र त्यतिखेर म आफूलाई भद्रमहिला नै अनुभव गर्दथें...

त्यस माथिल्लो कोठामा किताब राख्नका लागि कालो काठबाट बनाइएको एक

[1] एफ्रोन, सेर्गेइ याकोभ्लेभिच (१८९३-१९४१ ई.सं.) – साहित्यकार, स्वेत गार्ड सेनाका अफिसर, मारिना त्स्वैताएभाका पति।

ज्यादै आश्चर्यजनक 'आन्डेरसनीय' दराज थियो। त्यसको बुट्टा कुँदिएका खापाहरूमा शिशा हालिएको थियो। म सानी छँदा त्यस माथिल्लो कोठाको बीचमा भिएनामा निर्मित त्रिपाई र मेचमाथि बाटा राखेर मलाई नुहाइदिने गरेका थिए। त्यतिखेर चाहिं म दराजमा राखिएका किताबका गाताहरूमा हेर्ने सम्भावना पाउँथें। खास गरी मलाई सुनौला बुट्टे अक्षरमा 'फोर्साइटको सागा'[1] लेखिएको कैलो रङ्गको चार ठेली किताबले निकै आकर्षित गर्ने गरेका थिए। यो 'सागा' भनेको के होला ? सायद 'दन्त्यकथा' होला भन्ने सोच्दथें र कुनै न कुनै दिन यस्तो रहस्यमय शीर्षक भएको बडेमानको किताब पनि अवश्य पढ्ने छु भन्ने कल्पना गर्न पुग्दथें... त्यस कोठामा बज्राँठको घर्रादार दराज पनि राखिएको थियो। त्यसको ऐनामा भित्रपट्टि लहरै राखिएका हरियो रङ्गको काँचका लाम्चा गिलासहरू टल्कने गर्दथे। हाम्री बज्यैले किन हो कुन्नि नियास्रो मान्दै ती 'जारकालीन' हुन् भन्नुहुन्थ्यो। त्यसैको बगलमा अजङ्को गह्रौं बज्राँठकै टेबुल पनि थियो...

पछि छिमेकीहरू, जसलाई आमाले 'बूढा रिख्टेरहरू' भन्ने गर्नुभएको थियो, त्यहाँबाट गएपछि छतमा ऐनादार झ्याल भएको त्यो कोठा पनि हाम्रो भएको थियो रे। त्यस अनौठो झ्यालका ऐनाहरू त्यतिञ्जेलसम्ममा फुटिसकेका थिए र ऐनाको सट्टा फल्याकले टालिएको थियो। त्यसैले त्यसलाई हामीले 'अँध्यारो कोठा' भन्ने गरेका थियौं। त्यसै कोठामा फ्रीज र खाना खाने टेबुल पनि राखिएको थियो। भित्तामा चाहिं गाउँघरतिर ग्रीष्मकालीन बङ्गलामा हातमुख धुन राखिने पानीको भाँडो र त्यसमुन्तिर फोहोर पानी बटुल्ने बाटा पनि राखिएको थियो। कारण के त भने माथि कौसीमा हरेकपल्ट हातमुख धुन जानु एक त टाढा पर्दथ्यो, अनि दोस्रो – त्यहाँ भएको एउटै मात्र धारा सबैको निम्ति पर्याप्त पनि थिएन र त्यसमा चिसो पानी मात्र आउँथ्यो। चिसो (र तातो पनि !) पानी भएको नुहाउने साँच्चीको स्नानागार त मैले आठ वर्षको उमेरमा मात्र पहिलोपल्ट देखेकी थिएँ। त्यो पनि स्कूलकी सहपाठी सङ्गिनीको घरमा पाहुना बन्न जाँदा। मलाई अचम्म नलागेको होइन, तर त्यस्तो भान नपार्न मैले निकै प्रयास गरेकी थिएँ।

ठूली भएपछि बज्यै र आमासँगै म क्रास्नाया प्रेस्न्यामा रहेको स्नानागारमा नुहाउन जान थालें... अहो ! कस्तो रमाइलो अनुभव भएथ्यो ! थुप्रै आइमाईहरू... थसुल्ले, सिकुटे, सुडौल, कुरूप, बूढी, तन्नेरी, अँधबैंसे... तर म जस्ता किशोरीहरू निकै कम थिए। नुहाउने कोठाको बाहिर बरण्डामा लुगा फुकाल्न र लगाउन रातो रङ्गको अडेसो र निलो आसन भएका अड्भड्गे बेन्चहरू राखिएका थिए। भित्र नुहाउने कोठामा बाफको कुइरीमण्डल र पानी खत्याइएको आवाज व्याप्त थियो। कैलो रङ्गका 'शाइका' भनिने ज्यादै पुराना र कुच्चिएका भद्दा बाटाहरू... चारपाटे ढुङ्गा बिछ्याइएको, छिपछिपे पानीले भिजेको चिप्लो भुईं, जहाँ नाङ्गै गोडाले हिँड्न नै घिनलाग्दो थियो। अनि सर्वाङ्ग नाङ्गा शरीरैशरीर...

---

[1] फोर्साइटको सागा (*The Forsyte Saga*) – नोबेल पुरस्कार-विजेता अंग्रेज साहित्यकार र नाटककार जोन गोल्सवर्सी (१८६७-१९३३) को श्रृखलाबद्ध उपन्यास।

बाफले र पानीले भिजेका र निर्लज्ज... यी सब कुराले मेरो सुकुमार मनमस्तिष्कमा एक्कै चोटि धावा गरे। सबैतिर यस्तै थियो र आँखा चिम्ले तापनि यो सब झल्झली देखिन्थ्यो... नुहाइसकेपछि जस्तो सुकिलोपनाको आनन्दानुभूति हुनुपर्ने थियो सो पटक्कै भएन।

एउटा मेरो सबभन्दा पहिलो सचेतन संस्मरण थियो – सुनौला शरद्को दिन ! हुन त मलाई त्यतिखेर 'शरद्' र 'सुनौला' जस्ता शब्दहरूको अर्थ नै थाहा थिएन) ! सायद म चार वर्षकी मात्र थिएँ हुँला। म पिसेम्स्की सडक र मङ्गोलियाको राजदूतावासको बीचमा रहेको 'हाम्रो चहुर' कै हाराहारी बाटोमा तल्लीनतापूर्वक तीनपाङ्ग्रे साइकल गुडाउँदै थिएँ। अहा ! त्यो रमाइलो चहुर ! त्यो चहुर नै प्रकृतिसँग, अझ साँच्चै भन्ने हो भने जीवनसित नै मेरो पहिलो साक्षात्कारको ठाउँ थियो ! त्यस दिन मेरो आङमा गुलाफी-सेतो रङ्को टल्कने कुर्ता लगाइएको थियो ! सायद त्यो कुर्ता अहिले मैले जाने-बुझेसम्म त्यतिखेर फेसन बनेको बोलोनबाट सिइएको थियो)। त्यो टल्कने कुर्ता मैले बज्यैकी बहिनीबाट उपहार पाएकी थिएँ। उनलाई म 'लिजा बज्यै' भन्दथें। उनी निकै दयालु र हँसिली थिइन्। उनी जहिले पनि 'बेलोमोर-कानाल' चुरोटको सुर्को तानिरहन्थिन्। ती 'लिजा बज्यै' एसेर पार्टीकी सदस्य र क्रान्तिकारी पनि थिइन् भनेर म ठूली भएपछि आमाले बताउनुभएको थियो... तर जुन वेलाको म कुरा गर्दैछु त्यतिखेर मलाई यो थाहा थिएन। उनले उपहार दिएको कुर्ता मलाई खूब मन परेको थियो। आफ्नो तीनपाङ्ग्रे साइकलमा सवार भई म रुखबाट झरेका पहेंला कोमल पातहरूमाथि मजाले जाँदै थिएँ। सुमधुर र तिक्खर गन्धको पनि आभास भइरहेको थियो। अहिलेसम्म मलाई त्यस संसारको सबैभन्दा मिठो सुकोमल गन्धले लठ्याउने गरेको छ। तर त्यस शरद्ऋतुमा म अझै यो ठम्याउन सक्ने भइसकेकी थिइनँ। मेरो लागि त्यो सुगन्ध मेरो नयाँ कुर्ता र घामको न्यानो समेतको सम्मिश्रण अथवा म तोडले अगाडि जाने प्रयास गर्दा गालामा पर्ने बतासको स्पर्शजस्तै मोहक थियो। सबै ज्ञानेन्द्रीयहरूलाई सकृय तुल्याउँदा त त्यसै दिन हो वा अर्को कुनै दिन हो त्यसैताका घरमा बज्यैले मलाई क्रेम हालेको 'नेभ्स्की' केक खुवाएको पनि सम्झना हुन्छ। त्यस्तो बाटुलो, रसिलो र अत्यन्तै स्वादिलो केक पुरानो आर्बात सडकमा रहेको 'कुलिनारी' भनिने पाकशालामा बेच्न राखिन्थ्यो। बाटुलो 'कुलिच' रोटीकै आकार-प्रकारको त्यस केकभित्र सेतो, मुलायम र ज्यादै मिठो क्रेम भरिएको थियो। त्यतिखेर नै मलाई केकको नाम राम्रै थाहा थियो र 'नेभ्स्की' भन्ने नामसमेत रोचक र रहस्यमय लाग्दथ्यो – 'नेभ्स्की' अर्थात् मस्कोको होइन, लेनिनग्रादको ! सके स्वयं राजा अलेक्सान्द्र नेभ्स्की[1] ले चियासँग त्यो केक खान मन पराउँथे कि के थाहा !? (बुवामुमाले मलाई राति सुत्ने वेलामा ऐतिहासिक कथाहरू सुनाउनुहुन्थ्यो)। अब चहुरकै बारेमा

[1] अलेक्सान्द्र नेभ्स्की (१२२१-१२६३) – आफ्नो शासनकालमा सैन्यबलद्वारा पश्चिमको क्याथोलिक आक्रमणबाट र पूर्वतर्फ चाहिं कूटनैतिक सामर्थ्यको आधारमा तातार-मङ्गोलको हमलाबाट रूसभूमिको स्वतन्त्रताको रक्षा गर्ने महाराजा हुनाले अर्थाडक्स चर्चले सन्तको उपाधि प्रदान गरेको छ।

सविस्तार चर्चा गर्छु – हिँड्ने बाटो वारपार गर्दै मुन्तिर निकै गहिराईमा मङ्गोलियाको दूतावासको भवनसम्म जाने बाटो बनाइएको थियो । त्यस बाटोको दुवैतिर साँगुरो हिँड्ने पेटीसहितको हरियो चहुरको लामो सोतो तन्किएको थियो । त्यो ठाउँ केटाकेटीहरूका लागि साइकल चलाउन निकै पायकपर्दो थियो । हामीले दायाँतिर हाम्रो घरनेरको जुन बाटोलाई 'हाम्रो' भन्ने गरेका थियौं, त्यहाँ मलाई एक्लै खेल्नमा पनि कुनै रोकटोक थिएन । अक्सर हामी दुई निकै छिप्पिएका बनपिपलका बोटहरूको मुन्तिर खेल्ने गर्दथ्यौं । बायाँतिरको बाटोलाई 'परको' वा 'पल्लो' भन्दथ्यौं । त्यत्तिकै थियो मेरो निम्ति विशाल संसार !

त्यो संसार थरीथरीका वस्तुहरूले भरिपूर्ण थियो । वनपिपलको रुख त्यहीं उभिएको थियो । त्यो सुरिलो, घना हाँगाबिङ्गा भएको छहारीदार थियो र जीवनमा पहिलो पल्ट मैले पातले छाएको 'छाप्रो' के हो भन्ने पनि त्यसैबाट थाहा पाएको थिएँ । अनि घाँसमा बिहानपख शीतका थोपाहरू पनि त्यहाँ देख्न पाइन्थ्यो । कुनै सानो झूसे पातको माझैमा शीतको थोपा एक्लै ऐनाजस्तै टक्लिरहेको देखिथ्यो । सामान्य सिस्नो जस्तै देखिने तर छुँदा पनि 'नपोल्ने सिस्नु' का बैजनी रङ्गका फूलहरूमा टल्किरहने शीतका थोपाहरू म जिब्रोले स्वाट्ट चाट्न रुचाउँथें...

यदाकदा म त्यस संसारमा अशान्ति मच्चाउन पुग्दथें – आफ्नो खुल्दुली मेट्न । त्यसो गर्नु राम्रो होइन भन्ने मलाई बोध थिएन । म काला कमिलाहरूको माझमा खैरा कमिलाहरू ल्याएर राखिदिन्थें र त्यसको परिणामको प्रतीक्षा गर्दै उनीहरूको भिडन्त रमाइलो मानेर हेर्दथें । अक्सर खैरा कमिलाहरू नै विजयी हुन्थे, किनभने ती काला कमिलाभन्दा आकारमा ठूला र बढी क्रूर पनि हुन्थे । स-साना कमिलाहरू हाँसउठ्तो ढङ्गले लड्थे र शत्रुको सामना गर्दथे । तर अचानक उत्तानो परियो भने कत्ति पनि चल्मलाउँदैनथे । कहिलेकाहीं म कमिलाहरूको गुँडमा पस्ने वा निस्कने बाटो नै काँचका टुक्राले केही समयका लागि थुनिदिन्थें र कमिलाहरू हस्याङफस्याङ गर्दै जम्मा भएर उनीहरूको बलले नभ्याउने पारदर्शक काँचको टुक्रा पन्छ्याएर बाटो खोल्ने प्रयास गरिरहेको निकै तल्लीन भएर हेर्दथें ।

स्मरण रहोस्, फुच्ची प्रकृतिवेत्ताका यी सबै रमाइला प्रयोगहरू मस्कोको केन्द्रमै रहेको आर्बात गल्लीमै सम्पन्न हुने गर्दथे । आज चालीस वर्षपछि त्यो चहुरको ठाउँमा घाँस उम्रेको समेत देख्न पाइँदैन । त्यहाँ कमिलाका गुँडहरू त कहाँ पाउनु र !?..

मेरो त्यस संसारमा खेलिने केही कम निर्मम खालका खेलहरू पनि हुन्थे । उदाहरणका लागि भनौं, धर्के बुट्टा भएको टिनको बट्टामा बनपिपलका लामा कोसाहरू बटुल्नु । बनपिपलका कोसाहरू चाहिं 'वास्तवमै' निकै राम्रा देखिन्थे । त्यहाँका बनपिपलहरू फुल्दैनथे, तिनमा राता-न-काला, कोमल र निकै राम्रा कोसाहरू मात्र पलाएर झर्दथे । मैले तिन्लाई 'गडेउला' भन्ने नाम दिएको थिएँ । साँच्चैका गडेउला र

झुसिल्सीराहरू (बर्खे-झुसिल्कीरा होइन) देख्ता नै मलाई डर लाग्दथ्यो । बर्खे-झुसिल्कीरालाई चाहिं म झरीवर्षाबाट बचाउँथें – पीच हालेको बाटोबाट टिपेर घाँसपात भएको ठाउँमा छाडिदिन्थें ।

वनपिपलको छहारीमा, खास गरी त्यसको निकै तल रहेको र हामी, साना भुराहरूले भेट्न सक्ने त्यस रुखको खोपिल्टोमा 'गुप्त ठाउँ' थियो । काठको लर्कन (दुई स-साना 'मात्र्योश्का') झुण्डिएको ब्रोश्का भनिने छातीमा लगाउने गहना । सबै बूढीहरूमध्ये सबभन्दा कुरूप र थसुल्ले, खैरो र फुस्रो हात्तीको जस्तै रङ्को ओभरकोट लगाउँदा हात्तीझैं नै लाग्ने बूढीलाई त्यो ब्रोश्का कोसेली दिने चाहना ! बूढीहरू हाम्रै चहुरमा मेचमा बसेका हुन्थे । किन हो कुन्नि त्यहाँ बेन्चहरू राखिएका थिएनन् । त्यस थसुल्ले बूढीबारे खासखुस गर्दै त्यसलाई 'मधुमेह' छ भनिन्थ्यो । त्यसै वेलादेखि मधुमेह ज्यादै नजाती कुरो रहेछ, अरु जे होस्, तर त्यो नहोस् भन्ने लागेको थियो । त्यहाँ केराउँबुट्टे सेतो पछ्यौरावाली एउटी दयालु बूढी पनि हुन्थिन् – ताच्याना इभानोभ्ना ! उनले सधैं हामीलाई बोलाउँथिन् र प्यारो गर्दै मिठाई बाँडिदिन्थिन् । हामी, भुराभुरीहरू ती बूढीहरूसित डराउँदैनथ्यौं । हामी एक-दोस्रालाई डिस्र्टब गर्दैनथ्यौं । उनीहरू बसिरहन्थे अर्थात् आ-आफ्ना कुर्सी-सिंहासनमा विराजमान भएका हुन्थे । तिनकै बगलमा हामी पनि मिलेर खेलिरहेका हुन्थ्यौं । अलकत्रा लगाइएको पीचमा परेका रहस्यमय किरिमिरी चिराहरू नियालेर हेर्ने र तिनमा कुन्नि के-के हो जोखना गर्ने ?!.. अब विस्तृत रूपमा केही पनि सम्झना छैन ।

मङ्गोलियाको दूतावासमा पहरा दिने मिलिसिया-प्रहरीहरूसित गम्भीर र लामा कुराहरू (कुन विषयमा हो, हे भगवान् !?) । ती कसैको पनि अग्लाई द्याद्या स्त्योपा[1] को जस्तो त थिएन, तर सबै नै दयालु थिए ।

गल्लीमाथि वारपार तानिएका तारहरूमा झुण्डिएका चुच्चे आकारको टिनको (सायद ?) बत्तीको तीनकुने प्रकाशमा टल्कने हिमकणहरू...

> रात सम्झन्छु बित्दैथ्यो शनैःशनैः नोभेम्बर,
> तुवाँलो र झरीवर्षा, बत्तीको ज्योति मुन्तिर
> शङ्कालु र पीडाजन्य तिम्रो मुहार कोमल,
> डिकेन्सी शैलीकै तुल्य मधुरो र फिका तर,
> मुटु कठ्याङ्ग्रिने चीसो, मानौं हो हिमसागर...
> बत्तीको ज्योतिमा तिम्रो मुहार स्निग्ध कोमल ।

के यसै बत्तीको सन्दर्भमा नै मारिना त्स्वेताएभाले यस्तो लेखेकी त होइनन् ?

जे होस्, हिउँदको अनुभूति । भारी हिमप्रपात भएको हिउँद । मेरो अत्यन्त प्यारो 'गद्दीवाला' रुखमुनि हिउँको डङ्गुरमाथि चम्किला हिमकणहरू (निकै तल्तिर हाँगा फाटेको हुँदा त्यस रुखमा सहजै चढेर निकै मजाले बस्न सकिन्थ्यो) ।

---

[1] द्याद्या स्त्योपा – सोभियत कवि सेर्गेइ मिखाल्कोभको बाल-काव्यको नायक ।

ओल्गा सेर्गेएभ्ना, सङ्गीत सिकाउने मेरी प्रथम शिक्षिका, अत्यन्तै तरुनी थिइन्। दुब्ली-पातली, चश्मा लगाएकी ती शिक्षिकाले मेरो निम्ति पेनोबाजामा झङ्कारमयी लय बजाउँथिन्। गीतका शब्दहरू त्स्वेताएभाको नभए तापनि मलाई अझैंसम्म कण्ठ छ।

हिउँका कण टल्केर झर्दछन् तल धर्तीमा।
हामी दुवै सँगै जान्छौं नववर्षीय रातमा।
पाइला चाल्दछौं, चारैतिर शान्ति र चैन छ,
हिउँका कण पक्रन्छौ तिमी जो तल झर्दछ...

मेरो कदभन्दा अग्लो हिउँको रास। त्यसमा प्वाल पारेर मैले गुफा बनाएँ र त्यसभित्र नेपकिन ओछ्याएर त्यसमाथि मखमलको सानो तकिया पनि मिलाएर राखें। अनि त्यहाँ मैले न्यानो लुगा लगाएका पुतलीहरूलाई सुताइदिएँ। चिनीजस्तो सेतो हिउँ टल्किरहेको थियो। जाडो भए तापनि दन्त्यकथामा जस्तै प्रतीत भइरहेको थियो। पछि मैलै कहिल्यै पनि त्यसरी आश्चर्यजनक रूपमा अनेक रङ्गमा परिवर्तित भइरहने हिउँका ताराझैं चम्किरहेका हिमकणहरू देख्न पाइनँ।

बरफ फुटाउने औजार र झण्डै काँचझैं चहकिलो टिनको हिउँ सोहर्ने ठूलो साबेल लिइराख्ने आँगन सफा गर्ने कामदार। हिउँदमा पीचबाटोमा अलकत्रा पनि कसिंगरबिना सफा थियो। सायद ती कामदारहरू ठूलो आवाज निकाल्ने यूँरङ्गको सानो भद्दा ट्रकमा आवत-जावत गर्दथे। आजकल त त्यस्ता ट्रकहरू सम्भवतः केवल चिहानघारीतिर मात्र बाँकी रहेका होलान्। विश्वयुद्धभन्दा पहिले बाटोमा ढुङ्गा बिछ्याइएका थिए भनी आमा भन्नुहुन्थ्यो (युद्धको अन्त्यतिर मात्र त्यो बाटो कालोपत्रे बन्यो)। ढुङ्गा बिछरयाइएको बाटोमा युद्धभन्दा पहिले खट्खट गर्दै टाङ्गा दगुराइन्थ्यो। पाङ्ग्राहरू (किन हो कुन्नि) फलामका चक्काले मोडिएका हुन्थे। हाम्रो गल्लीमा दिनको एउटा मात्र मोटरगाडी आउनु समेत रमिता मानिन्थ्यो।

...त्योत्या नाताशा (लिजा बज्यैकी छोरी अर्थात् नाताले आमाकी बहिनी) काजमा खटिएर मास्को आउँथिन्। उनी ज्यादै फैसनदार र खूब बोलक्कड थिइन्। एकपल्ट उनले मलाई चेखियामा बनेको काँचको गहना – ब्रोश्का उपहार दिइन्। मलाई 'मूल्यवान् गहना' लगाउने सौख थियो। चार वर्षकी हुँदा नै मैले आमाका गहनाहरूमध्ये पहाडी क्रिस्टलको र कृत्रिम मोतीको समेत गरी दुईवटा कण्ठहार छताछुल्ल पारिसकेकी थिएँ। तिनैबाट मैले आफ्नो लागि 'शानदार' कण्ठहार तयार पारेकी थिएँ। मलाई औधि मन पर्ने एउटा किताब थियो – बाझोभ[1] को पुस्तक 'मालाहिट पत्थरको बट्टा'। त्योत्या नाताशाले लगाइराखेको ब्रोश्का गज्जबको थियो। त्यसमा तीनवटा लर्कन थिए र मैले एक विशेषज्ञको हैसियतले दृष्टि दिनासाथै त्यसमा जडिएका काँचहरू पक्कै पनि पन्ना र चन्द्रकान्तमणि नै हुनुपर्छ भन्ने ठम्याएको थिएँ।

---

[1] बाझोभ, पाभेल पेत्रोभिच (१८७९-१९५० ई.सं.) – उरालका दन्त्यकथाहरूका लेखक।

मई महिनाको रमाइलो दिन थियो । म घुम्न गएँ (म छ वर्षकी भइसकेकी थिएँ र मलाई घर आसपासको इलाकामा एक्लै जान दिइन्थ्यो) । साझा आँगनपारि हाम्रो घर र रजेभ्स्क गल्लीको बीचको क्षेत्र पनि एउटा अर्कै संसार थियो ।

त्यहाँ मैले मोटो सिक्रीमा झुण्ड्याइएको गह्रौं बाटुलो डल्लोले हिर्काएर घर भत्काइरहेको दृश्य देखें (त्यो डल्लो फलामको हो र त्यसलाई अनौठो र विचित्र ढङगले 'बाबा' भनिन्छ भन्ने पछि मात्र मैले थाहा पाएँ) । घरको भित्तामा त्यस डल्लोद्वारा जोडले बजारिन्थ्यो । बेसरी ढ्वाङ्ग ! अनि धूलोको मुस्लो ! घर खडा नै थियो । फेरि ढ्वाङ्ग !.. फेरि धूलो !.. बल्ल भित्ताको एक टुक्रा खस्यो । म चाहिं त्यसको ठीक सामुन्ने गल्लीको पारिपट्टि उभिएर छातीनेर लुगामा काँटीले अड्याइराखेको आफ्नो ब्रोश्कातिर प्यारो नजर दिंदै थिएँ (त्यसका तीनैवटा लर्कन हल्लिरहेका थिए, सूर्यको किरण आँखामा परिरहेको थियो) । सूर्यको न्यानो राम्रो थियो, गह्रुँगो डल्लो चाहिं राम्रो थिएन । त्यसैले अकमक्क परिरहेकी थिएँ – किन घरलाई पिटिरहेका होलान् ?! त्यो घर नराम्रो थिएन । राम्रै छ ! त्यहाँ देखिएको घटनाको तात्पर्य आफैलाई बुझाउन मैले मनमनै साउती गरें – सायद यी उमेरदार मान्छेहरूलाई राम्रो थाहा होला ! उनीहरूले नै राम्ररी बुझेका होलान् ! हुन सक्छ, त्यो घर त्यति राम्रो थिएन कि ? मलाई न डर लागिरहेको थियो, न त नरमाइलो नै । मैले केवल बुझ्न मात्र सकिरहेकी थिइनँ – किन ?

निकै वर्ष बितिसकेपछि आफू मस्कोको काँठतिर बस्ने भए तापनि कहिलेकाहीं आफ्नो बाल्यकाल बितेको पुरानो गल्लीतिर गइरहँदा न त्यो चहुर देख्छु, न त ती परिचित रूखहरू र घरहरू नै त्यहाँ पाउँछु । अन्त्यमा मैले त्यतातिर जान नै छोडिदिएँ । बचपनको त्यो रमाइलो संसार अब मेरो स्मृतिपटलमा मात्र बाँकी रहेको छ । र यी हरफहरूमा पनि बाँकी रहला नै !

पुनश्चः

नेपाली पाठकवृन्दका लागि बीसौं शताब्दीकी एक महान् रूसी कवयित्री, आख्यानकार तथा अनुवादिका मारिना इभानोभ्ना त्स्वेताएभा (सन् १८९२-१९४१) को विषयमा केही शब्द लेख्न चाहन्छु ।

उनी मस्कोमा जन्मेकी र हुर्केकी थिइन् र उनको सिर्जनामा मास्कोकै आत्मा मुखरित भएको पाइन्छ । निकोलाइ गुमिलेभ, माक्समिलिआन भोलोशिन, भालेरी ब्र्युसोभ जस्ता विख्यात कविहरूले तुरुन्तै उनको नवप्रयोगात्मक कविताप्रति अभिरुचि देखाए । मारिना त्स्वेताएभाको प्रारब्ध त्रासदीपूर्ण थियो । उनले अक्टोबर समाजवादी क्रान्तिलाई ग्रहण गरिनन् । सन् १९२२ मा उनी छोरीसहित सुरुमा ह्वाइट गार्डका पूर्वअफिसर आफ्ना पतिकहाँ चेखियामा र तत्पश्चात् फ्रान्समा बसाइँ सरिन् । त्यतिाका

उनले भन्ने गरेकी थिइन् – 'यहाँ (प्रवासी समुदायमा) म जरुरी छैन, त्यहाँ (अर्थात् सोभियत संघमा) म छु असम्भव' । सन् १९३९ मा मारिना त्स्वेताएभा सपरिवार सोभियत संघमा फर्किन्। उनका पति र छोरी तत्कालै गिरफ्तार गरिए। उनका कृतिहरू पनि छापिंदैनथे । कविताको अनुवाद गरेर उनले येनकेन जीवन धान्नुपरेको थियो । महान् देशभक्तिपूर्ण युद्ध सुरु भएपछि छोरासहित उनलाई सुरक्षार्थ अनकन्टार इलाकामा पर्ने एलाबुगु सहरतिर पठाइयो। एकान्त स्थलको जीवन, बेरोजगारी र प्रताडना सहन गर्न नसकी सन् १९४१ को ३१ अगस्तका दिन मारिना त्स्वेताएभाले आत्महत्या गरिन्। उनको कृतित्वले बीसौं शताब्दीको मात्र होइन कि एक्काईसौं शताब्दीको समेत रूसी काव्यको विकासक्रम निरुपित गरेको थियो। अपसोच, मस्कोमा मारिना त्स्वेताएभाको घरअगाडि उम्रिरहेका वनपिप्पलका रुखहरू समेत हाल काटिएको हुँदा ती रुखहरू मानवस्मृतिमा र कवितामा मात्र बाँकी रहेका छन् । ती रुखहरूप्रति समर्पित उनको कविता निम्नानुसार छ -

एकापसमा मिल्न चाहन्छन् दुइटा रुख,
उभिएका पनि छन् ती मेरो नै घरसम्मुख।
छन् ती रुखहरू बूढा, पुरानै घर यो पनि,
युवा नै म हुनाले पो... हुन्थ्यो कि नत्र अन्यथा,
अर्काको रुखको वास्ता राख्तिनथें म सर्वथा ॥

होचो छ जुन त्यो हात फैलाउँछ यतातिर,
नारीझैं त्यसको सारा गुम्यो यौवन आखिर।
ठिङ्ग त्यो उभिएको छ – दुःख यो देख्न सक्दिनँ,
सहारा खोज्छ तन्केर – अर्को रुख समाउन।
अग्लो अडिग जस्तै छ – खै, हो यथार्थ के यही ?!
हुन सक्छ, यहाँ होओस् बढी अभागी नै त्यही !!

दुई वृक्षहरू देख्छौं – सूर्यास्तको प्रकाशमा,
झरीवर्षा परी रुञ्छन् – सुक्दछन् अझ धूपमा।
एक वृक्ष छ अर्कोमा सदा अत्यन्त निर्भर,
विधिविधान हो – ताक्नु अर्कोतर्फ निरन्तर।
एकै नियम सर्वत्र – पर्छ ऊ अरुकै भर !!

Умут КЕМЕЛЬБЕКОВА

ПОСЛЕДНИЙ ЧАС ПЕРЕД ЗАКАТОМ

Лика рассматривала гравюру. С правого нижнего угла к верхнему левому протянулась дорога по склону холма, и по ней шла вереница людей – с собаками, повозками, лошадьми. Тень лежала густым зеленым покрывалом, так что глаз уже не мог различить подробности их фигур, которые сливались с деревьями, кустами, темнотой наступающего вечера. Взгляд остановился в верхнем углу, где на вершине холма между двумя деревьями стоял мужчина с ружьем в руке. Закатное солнце освещало небо.

Лике показалось, что она стоит рядом с мужчиной и смотрит с высоты холма. Сначала различила легкие розовые облака, освещенные заходящим солнцем, потом разглядела в долине город с крохотными домами, едва заметными улочками.

Столько раз рассматривала она эту гравюру, но не замечала города. Взгляд сначала падал на дорогу с идущими людьми, лишь потом останавливался на мощной фигуре мужчины и уходил вверх, в небо с закатным солнцем, но никогда – вниз, а мужчина, конечно, смотрел на долину и город, к которому шли или возвращались.

– Как же могла смотреть и не разглядеть города? – удивилась Лика.

Но размышление прервал звонок телефона.

Звонила Анюта.

– Ты готова? – услышала Лика ее звонкий голос. И только теперь вспомнила, что они должны были встретиться на вокзале и поехать на дачу на день

рождения Славки Обермана, их давнего студенческого приятеля, недавно объявившегося, как он говорил, «возвратясь из дальних стран».

– Анют, я забыла, заработалась. Мне надо в понедельник сдать проект, а у меня ничего не сделано, – сказала Лика, убирая разбросанное на столе: гравюры складывала в отдельную в папку с надписью «Охотничий календарь». – Ехать так далеко, и пятница... электрички... Может, не поеду? – спасительная мысль обрадовала, и она уже уверенней продолжала искать повод, чтобы не ехать. – Мы его не видели сто лет, да и подарка нет.

– Как нет, ты же сказала, что есть? – прервала ее Анюта. – Именно, что сто лет не видели и еще сто лет не увидим. Он приехал на два дня. Всех собрал. Когда еще встретимся?

– Действительно, когда? – согласилась Лика. – Только ты не жди меня. Я на следующую электричку успею, наверно. Правда, я еще за подарком пойду. Это здесь рядом. Приглядела кое-что, ему понравится, он же у нас на кларнете играл. Помнишь?

– Ты кларнет хочешь подарить? – засмеялась Анюта. – Ну ладно, я побежала. Но ты приезжай обязательно.

Лика положила трубку. Огляделась. В комнате было светло и тихо. Она закрыла окна, задернула занавески и вышла.

Наступал вечер. Солнце садилось. Последние лучи прохаживались в витринах магазинов и окнах домов. Лика любила закат в городе и часто гуляла, наблюдая, как меняется город в этот последний час перед закатом. Этот час был самым удивительным в летние вечера. Казалось, он длится бесконечно. Лика прошла угол Покровского бульвара. Остано-

вилась перед кафе. Над входом уже загорелась вывеска «Укулелешная». Вспомнила, как впервые увидела эту надпись и с трудом прочитала незнакомое слово. Кафе тогда готовилось к открытию, и висел плакат «Мы скоро откроемся».

Это «скоро» продлилось несколько месяцев, и она с нетерпением ждала, что же там будет. Незнакомое слово манило своей таинственностью. Конечно, она могла заглянуть в словарь, но ей хотелось отгадать, что оно означает. Может, это какая-нибудь устрица, или что-то северное? «Укулеле... укулеле...» – иногда напевала она, проходя мимо. Ирландский напиток, или скандинавское лакомство?

Наконец, кафе открылось. Лика пропустила день открытия и когда увидела открытые двери, посетителей, куривших на улице, услышала музыку, доносящуюся из открытых дверей, сразу направилась к кафе.

Кафе было маленьким, всего несколько столиков и барная стойка. Противоположную стенку занимали развешенные маленькие гитары, которых Лика никогда не видела раньше. Она подошла к барной стойке.

Молодой бармен, улыбаясь, произнес:

– Добрый вечер, что желаете?

– Вы давно открылись? Я пропустила. Я здесь неподалеку живу.

– Да недавно открылись. Неделя не прошла.

– А что значит «укулелешная»?

– А вот они – висят, – ответил модой человек, указывая на маленькие гитары на стене.

Лика от удивления даже рассмеялась.

– Надо же! Думала, это какое-то лакомство.

Бармен тоже засмеялся: «Это гавайская гитара. Переводится как «подарок, который пришел сюда».

Тогда-то Лике и пришла мысль подарить кому-нибудь такую гитару. И когда Анюта сообщила, что приехал Славка Оберман и собирает всех на даче в день его рождения, сразу решила подарить ему укулеле. Вспомнила, как на третьем курсе они со Славкой в летнюю сессию у него на даче готовились к экзамену по истории философии. В перерыве Славка играл на кларнете, а иногда на флейте и как-то сказал, что хотел бы еще научиться играть на гитаре.

Но сейчас кафе было закрыто. «Странно, – подумала Лика, озираясь по сторонам, будто ища объяснение этому, – почему же кафе закрыто? А как же я куплю укулеле?»

Солнце садилось в переулках Покровки. Облака розовым узором разрисовали небо. «Еще есть время, – успокоилась она. Пройдусь по магазинам и что-нибудь да найду».

Лика пошла вверх по Покровке, завернула в арку, где в глубине, в подвальчике находился книжный букинистический магазин «У Ходасевича».

Остановилась. «Навряд ли книга сейчас порадует Славку», – решила она и вышла из подворотни. На Покровке проходила мимо кафешек и магазинчиков. Дошла до Колпачного переулка, вспомнила, что недалеко есть площадка, огороженная решеткой. Там находилось здание, в котором арендовало комнатки множество заведений. Чего там только не было. Фотостудия, ателье по пошиву дизайнерской одежды, магазин дамских шляпок, картинная галерея, магазин подарков, ювелирные лавки и коллекционные модели автомобилей. Разложили свои коллекции нумизматы. Это напоминало громадный блошиный рынок. Хозяева и товар часто менялись. «Вообще-то уже поздно. Наверное, мага-

зины уже закрыты», – подумала Лика. С последними лучами солнца она свернула в переулок.

Ворота были открыты, охранники магазинов не спешили закрываться. Лика прошла за ворота. Стала обходить магазинчики, увлекаясь разбросанными на прилавках вещицами. Она очень любила это занятие, представляя жизнь вещей и их недавних хозяев. Но ничего пока что не влекло. Подходящее Славке не находила. Дошла до последних магазинчиков, решила ехать на дачу, а по дороге купить у итальянцев, которые расположились на Покровке, вино, памятуя, что Славка был большим знатоком вин. Повернулась, чтобы сократить путь. Подошла к решетке и тут у самого выхода увидела вывески багетной мастерской, туристической фирмы, типографии и магазина подарков.

Она нашла кнопку звонка против надписи «Магазин подарков» и позвонила. Ей открыли, и она ступила в темноту лестницы. Магазин подарков находился на третьем этаже. Лика хотела постучаться, но потом медленно, словно чего-то опасаясь, нажала ручку двери и открыла ее.

Раздался мелодичный звон колокольчика. Лика увидела комнату, наполненную светом заходящего солнца, – лучи проникали сквозь громадные высокие окна во всю стену до потолков.

Увидела сразу все. Комната показалась громадной залой, сплошь заполненной необыкновенными вещами. На полках, в углах, вдоль стен, на развешенных гобеленах расположились бесконечные кувшины, подсвечники, статуэтки, бусы и ожерелья. Миниатюрные портреты, зеркала украшали стены. Каким-то необъяснимым образом в углу поместились этажерка и даже клетка с попугаем, и еще множество вещей, назначения которых Лика не знала. Девушка не могла отвести взгляда.

– Что вам угодно, милая барышня? – услышала она.

Лика очнулась, отыскивая обладателя голоса. За столиком у этажерки сидел старичок, поглаживая бородку и весело поглядывая на нее сквозь очки в золотой оправе.

– Мне нужен подарок, – ответила она, стараясь разглядеть получше говорящего. Солнце било в глаза.

– А кому подарок? – спросил голос.

– Другу юности, – ответила Лика и поняла, что действительно всегда вспоминала Славку как друга юности.

– Посмотрите там, на полке. Видите в бронзовой рамке?

Лика подошла к полке. Увидела бронзовую рамку.

За стеклом, на бумаге было что-то написано.

– Возьмите, это напомнит ему о вашей юности, – старичок взял рамку и завернул ее в пергаментную бумагу.

– А сколько это стоит? – спросила Лика. – Я ведь даже не спросила, и хватит ли у меня денег...

– Это сущая безделица, милая барышня, – ответил волшебный старичок. Последний покупатель получает понравившуюся ему вещь в подарок – так я решил. Ведь вам же понравилась?

– Да! А что написано там? Я не успела прочесть. Я опаздываю на электричку.

– Вы не опоздаете! – сказал старичок.

– Почему? – удивилась Лика.

– Потому что солнце садится. Это последний час перед закатом.

Лика отметила, что солнце до сих пор не село.

Сколько же прошло времени? Я вышла из дома почти на закате...

– Я закрываюсь. Прощайте, милая барышня,– окликнул загадочный продавец, направляясь к двери.

Лика вышла. Услышала удаляющийся звон колокольчиков.

Она спустилась по лестнице. Все двери были закрыты, рабочий день давно закончился. Она прошла к Покровке. Торопливо зашагала к Курскому вокзалу. Успела на электричку, на которую хотела попасть, выходя из дома. Электричка была практически пустой, что удивило девушку, так как в пятницу в это время все электрички были битком набиты дачниками. Она доехала до нужной станции и пошла знакомой улицей в сторону Славкиной дачи, где не была, как сказала Анюта, сто лет. Во всяком случае, с тех пор как они со Славкой готовились к экзамену по истории философии на третьем курсе.

Заходящее солнце освещало тропинку. Лика подошла к даче и услышала музыку, громкие голоса. Увидела на лужайке перед домом всю студенческую компанию. Ей дружно закричали:

– Лика! Лика! Привет!

– Лика не опаздывает никогда, – дурашливо сказал немолодой мужчина, полный, в очках и в клетчатой рубашке. С удивлением она узнала в нем Славку!

– Славка! – воскликнула и бросилась ему на шею, обнимая.

– Ты знаешь, что это такое? – спросил он, освобождаясь из объятий. В руках он держал укулеле.

– Знаю, – с гордостью сказала Лика – Это – укулеле!

– Боже, как я тебя люблю! – вскричал Славка – Ты единственная, которая знает, что это такое. А то все остальные называли маленькой гитарой, – передразнил он предыдущие ответы.

– Помнишь, как готовились к экзамену? Я играл на кларнете и флейте…

– Конечно, помню. Ты хотел научиться играть на гитаре, – ответила Лика.

– Знаешь, я научился играть на укулеле, но она у меня дома. Не буду же я ее привозить в Москву. А тут проезжал сегодня по Покровке и увидел магазин с укулеле. Представляешь? И я, конечно, купил! – восхищенно сказал Славка. – Могу тебе сыграть!

И тут Лика вспомнила про свой подарок и что так и не прочла, что написано на пергаменте за стеклом в бронзовой раме.

–У меня для тебя подарок, только я сама не знаю, что это, – сказала она и достала из сумочки сверток. Они осторожно развернули упаковку. В бронзовой рамке был застеклен пергамент, на котором было что-то написано.

Лика прочла: «То, что возможно в возможности, не нуждается в действительности».

Она подняла голову и встретилась взглядом со Славкой. Он смотрел на нее из того далекого времени, когда они готовились к экзамену здесь, на этой даче.

Внезапно все изменилось.

– Солнце село, – сказала Лика.

– Пошли, – ответил Славка, направляясь к мангалу.

उमुत केमेल्बेकोभा
सूर्यास्तपूर्वको अन्तिम घडी

कुँदिएको पटचित्र हेर्दै थिई लिका। दायाँतिरको तल्लो कुनाबाट माथि देब्रे कुनासम्म थुम्कोको भिरालेमा बाटो तन्किएको थियो। त्यस बाटोमा कुकुर डोर्याउँदै हिँडिरहेका र घोडागाडीहरू गुडाइरहेका मानिसहरूको ताँती देखिन्थ्यो। त्यहाँ गाढा हरियो ढकनीको रूपमा छाया परिरहेको थियो। त्यसैले मानिसहरूको रूपरेखा ठम्याउन सकिंदैनथ्यो। साँझपखको अँध्यारोले गर्दा तिनीहरूको आकार-प्रकार पनि रुखहरू र झाडीहरूसित एकाकार भइरहेको प्रतीत हुन्थ्यो। माथिल्लो कुनातिर उसको दृष्टि पर्‍यो जहाँ थुम्कोको शिखरमा दुई रुखको बिचमा हातमा बन्दुक लिने मान्छे उभिइरहेको थियो। अस्ताउँदो घामले चाहिं आकाशमा उज्यालो छरिरहेको थियो।

आफू पनि त्यसै मान्छेकै बगलमै उभिएर थुम्कोको टुप्पाबाट हेरिरहेको जस्तो लिकालाई लाग्यो। सुरुमा उसले हलुका गुलाफी बादल स्पष्ट देखी। त्यस्पछि तल उपत्यकामा सहजै ठम्याउन गाह्रो पर्ने गल्लीहरूमा स-साना घरहरूसहितको सिङ्गै सहरमा उसको दृष्टि पर्‍यो।

उसले कैयौंपल्ट त्यो चित्रपट हेरिसकेकी थिई, तर त्यस सहरको भेउ पाएकी थिइन। सुरुमै मानिसहरूको ताँती हिँडिरहेको बाटोमा उसको दृष्टि पर्ने गरेको थियो। त्यसपछि मात्र त्यो हट्टाकट्टा मान्छेको आकृतिमा उसको नजर केही बेर रोकिएर अझ माथितिर अस्ताउन लागेको घाम भएको आकाशतिर पर्दथ्यो। तर उसले तल्तिर दृष्टि दिने गरेकी थिइन, यद्यपि त्यो मान्छेले भने निश्चय नै उपत्यकामा अवस्थित सहरतिर निहारिरहेको हुन्थ्यो। मानिसहरूको ताँती पनि त त्यतैबाट आइरहेको र त्यतैतिर गइरहेको थियो।

'कति चोटि हेरेर पनि कसरी सहर नदेखेकी हुँला खै ?..' – लिका आश्चर्यमा परी।

उसको चिन्तन-प्रवाहलाई एक्कासि बजेको घन्टीले बिथोलिदियो। आन्युताले फोन गरेकी रहिछ।

– तिमी तयार भइसक्यौ त ? – तिक्खर आवाज लिकाको कानमा पर्‍यो।

अब भने उसलाई सम्झना भयो। उनीहरूले रेलवे-जक्सनमा भेटेर स्लाभा ओबेरमानको जन्मदिन मनाउन उपनगरीय दाचा[1] तिर जानुपर्ने थियो। ऊ विद्यार्थी-जीवनदेखि नै उनीहरूको साथी थियो। हालसालै मात्र आन्युताले भन्ने गरेझैं ऊ 'दूर देशबाट स्वदेश फर्केको' थियो।

[1] दाचा – रूसमा सहरबाहिरको ग्रामीण इलाकातिर सहरवासीहरूले ग्रीष्मयामका घमाइला र रमाइला तीनचार महिना आराम-विश्रामका लागि फलफूल बारीसहित बनाएका निजी बङ्गला वा कटेरो।

– आन्युता ! मैले त भुसुक्कै पो बिर्सिछु ए ! काममा व्यस्त भइयो । आउँदो सोमवार नै मैले एउटा प्रोजेक्ट बुझाउनु पर्नेछ । तर मैले अझैं केही गर्न भ्याएकी छैन । – लिकाले जवाफ फर्काई ।

अनि टेबुलमा लथालिङ्ग परिरहेका कागजहरू मिलाई । चित्रपट चाहिं उसले अलग्गै एउटा पाकेटमा थन्क्याई । त्यस पाकेटमा लेखिएको थियो – 'सिकारी क्यालेण्डर' ।

'त्यति टाढा जानुछ, त्यो पनि शुक्रवारका दिन !.. उपनगरीय बिजुली रेल चढेर... नजाऊँ क्यारे ?' – यस्तो विचारले ऊ दङ्ग परी र पाहुना नजानका लागि हरेक बहाना खोज्न थाली ।

– 'अँ, हुन त हो, उससंग हाम्रो भेटघाट नभएको पनि युग बितिसक्यो, उपहार-सुपहार पनि केही किन्या छैन...'

– के कुरा गरेकी ? – आन्युताले बिचैमा भनी । – तिमीले भनेकी होइनौ र उपहार छ भनेर ? ऊ जम्मा दुई दिनका लागि मात्र आएको छ । उससँग भेटघाट नभएको जुग बितिसक्यो, फेरि कति जुगपछि आउने होला ! आफ्ना सखासङ्गाती सबैलाई बटुलेको छ । फेरि कहिले भेट होला उससँग कुन्नि ?

– हुन त हो, कहिले ? – लिकाले सहमति जनाई । – तर तिमी मलाई पर्खेर नबस ! म अर्को रेल समाउन भ्याउँछु होला ! मैले उपहार पनि किन्न बाँकी नै छ । नजिकै छ पसल । उपहार दिन लायक कुनै चीज हेरिसकेकी छु । उसलाई अवश्य मन पर्ने छ । ऊ सहनाई बजाउँथ्यो, हैन र ? सम्झेकी छयौ ?

– के त तिमीले सहनाई बाजा नै उपहार दिन चाहेकी – – आन्युताले हाँस्दै भनी । – ल, म त हिँडे । अवश्य आउनू नि !

लिकाले रिसिभर राखी । चारैतिर यसो हेरी । कोठा उज्यालो र सुनसान थियो । झ्याल बन्द गरेर पर्दा पनि तल्तिर झारी र ऊ बाहिर निस्की ।

साँझ परिसकेको थियो । घाम क्षितिजमा डुब्नै आँटेको थियो । सूर्यको अन्तिम किरण घरका झ्यालहरू र पसलका प्रदर्शन-स्थलका ऐनाहरूमा परिरहेको थियो । सहरमा सूर्यास्तको समय लिकालाई ज्यादै मन पर्दथ्यो । सूर्यास्तपूर्वको अन्तिम घडीमा सहरको रूपरङग कसरी फेरिने गर्छ भन्ने नियाल्न ऊ रुचाउँथी र अक्सर ऊ यस्तो वेला डुल्न निस्कन्थी । ग्रीष्मका साँझहरूमा यस्तो घडी निकै मनमोहक हुन्थ्यो । त्यो अनन्तसम्म नै लम्बिएको भान पर्दथ्यो । लिकाले पोक्रोभ्स्की बुल्वार्ड उद्यानपथ पार गरी र एउटा क्याफेअगिल्तिर टक्क रोकिई । त्यसको ढोकामाथिको विद्युतीय साइनबोर्डमा 'उकुलेलेश्राया' लेखिएका अक्षरहरू चम्किरहेका थिए । अज्ञात शब्दअङ्कित त्यो साइनबोर्ड पहिलोपल्ट देख्दा पढ्नै गाह्रो भएको उसलाई सम्झना भएर आयो । त्यतिखेर क्याफेहाउस खोलिने क्रममा थियो र भित्तामा ठुलाठुला अक्षरमा 'हामी छिटै खोलिंदै छौं' भन्ने लेखिएको पोष्टर टाँगिएको थियो ।

यो ‘छिटो’ कैयौं महिनासम्म लम्बिएको थियो । त्यहाँ के खोलिने हो भन्ने उत्सुकतापूर्वक लिकाले प्रतीक्षा गरिरहेकी थिई । अपरिचित शब्दले रहस्यमय पाराले आकर्षित गरेको थियो । हुन त उसले शब्दकोश पल्टाएर पनि अर्थ हेर्न सक्तथी, तर ऊ स्वयं नै त्यस शब्दको तात्पर्य पत्ता लगाउन चाहन्थी । सके यो उत्तराखण्डतिरको कुनै मिठो पकवानको नाम हो कि ? उकुलेले... उकुलेले... कहिलेकाहीं त्यस ठाउँबाट जाँदावर्दा ऊ लय समेत मिलाउने गर्दथी । आयरल्याण्डको पेयपदार्थ वा स्केडिनाभियाकै मिठाईको नाम पो हो कि ?..

अन्त्यमा क्याफेहाउस खुल्यो । तर लिकाले चाहिं त्यसको ढोका खुलेको, भित्र बजिरहेको सङ्गीतको धून बाहिरसम्मै सुनिएको, गाहकीहरू बाहिर सडकमा निस्केर चुरोट खाइरहेको देखेर क्याफे उद्घाटनको दिन छुटिसकेको भेउ पाई । ऊ सरासर भित्र पसी ।

क्याफेहाउस उति फराकिलो थिएन । अग्ला त्रिपाईहरूसहितको बार र केही मेचहरू मात्र त्यसभित्र अटाएका थिए । सामुन्नेको भित्तामा स-साना गितारहरू सजाएर राखिएका थिए । त्यस्ता गितारहरू लिकाले पहिले कहिल्यै पनि देखेकी थिइन । ऊ बारको अडेसोनेर पुगी ।

तन्नेरी बारमैनले मुस्कुराउँदै भन्यो -

– शुभसन्ध्या ! के अडर गर्नुहुन्छ -

– तपाईको क्याफे खुलेको धेरै दिन भयो कि ? मैले त उदघाटन नै छुटाइछु ! म यहाँबाट नजिकै बस्छु ।

– धेर भएको छैन । एक हप्ता पनि बितेको छैन ।

– के हो नि ‘उकुलेलेश्नाया’ भनेको ?

– ऊ, त्यहीं झुण्ड्याइएका छन् नि ‘उकुलेले’ ! – तन्नेरी बारमैनले स-साना गितारहरूतिर देखाउँदै जवाफ फर्कायो ।

लिका आश्चर्यचकित भएर हाँसी ।

– एहे ! मैले त कुनै मिठो पकवानको नाम होला पो भन्ठानेकी !?

बारमैनले पनि हाँस्तै भन्यो -

– हावाईद्वीपको गितार हो यो । उल्था गर्दा यस शब्दको अर्थ हुन्छ ‘यहाँ आइपुगेको उपहार’ ।

त्यतिखेर नै लिकालाई यस्तो गितार कसैलाई उपहार दिने विचार फुरेको थियो । स्लाभा ओबेरमान आइपुगेको छ र उसले सबैलाई आफ्नो जन्मोत्सवका दिन दाचा मा निम्त्याउन खोजेको छ भनी आन्युताले सूचित गर्नेबित्तिकै उसैलाई ‘उकुलेले’ उपहार दिने लिकाले निधो गरेकी थिई । तेस्रो वर्षमा अध्ययन गरिरहँदा स्लाभासँगै उसैको दाचामा दर्शनशास्त्रको इतिहास विषयमा ग्रीष्मकालीन परीक्षाका लागि तैयारी गरेको

उसलाई सम्झना भयो । आराम लिने वेला स्लाभाले सहनाई बजाएको थियो । कहिलेकाहीं ऊ बाँसुरी पनि बजाउँथ्यो । त्यतिखेर उसले गितार बजाउन सिक्ने पनि इच्छा जनाएको थियो.. ।

तर त्यस दिन चाहिं क्याफे बन्द थियो । 'क्या फसाद ?!' – लिकाले गमेर यसको उत्तर खोज्न चारैतिर नजर फिर्राई – 'किन क्याफे बन्द गरिएको होला ? अब 'उकुलेले' कहाँ गएर किन्ने होला ?'

पोक्रोभ्का गल्लीमा सूर्य अस्ताउने सुरमा थियो । बादलले आकाशमा गुलाफी बुट्टा कोरेको थियो । 'अझै समय छ नि !' – उसले आफैलाई सान्त्वना दिई । – 'पसलहरू चहार्दा केही उपहार कसो नपाइएला र ?!'

पोक्रोभ्का गल्लीमा उकालो लाग्दै लिका गुम्बजतिर मोडिई । निकै पर त्यहाँ एउटा छिंडीमा 'खोदासेभिचकहाँ' भनिने विरल पुस्तक पसल थियो । ऊ त्यहीं टक्क रोकिई । 'यहाँको पुस्तक स्लाभालाई सायदै मन पर्ला !' – उसले सोची र पसलको ढोकैनिरबाट फनक्क फर्किई । पोक्रोभ्का गल्लीका क्याफे र पसलहरू पार गर्दै ऊ फटाफट अगाडि लम्किई । कोल्पाच्नी गल्लीसम्म पुगेपछि उसलाई जालीले बारेको चोक नजिकै रहेको सम्झना भयो । त्यहाँ रहेको भवनमा विभिन्न संस्थाहरूले भाडामा कोठा लिएका थिए । के मात्र त्यहाँ थिएन ! फोटो-स्टुडियो, फेसनदार पोशाक सिउने आटेल्ए, टोपी पसल, चित्रशाला, उपहार पसल, गहना पसल, अझ सङ्ग्रहकर्ताहरूका लागि मोटरगाडीका नमुनाहरूको कक्ष समेत त्यहाँ थियो । एक ठाउँमा टिकट र सिक्काहरूको सङ्ग्रह पनि राखिएको थियो । त्यो भवनले एक किसिमको विशाल-बजारकै सम्झना गराउँथ्यो । सङ्ग्रहकर्ताहरू एक-आपसमा विरल वस्तुको सट्टापट्टा पनि गर्दथे । 'हुन त ढिलो भैसक्यो र पसलहरू पनि बन्द भइसकेका होलान् !' – लिकाले सोची । तैपनि सूर्यको अन्तिम किरण बिलाएर जानुअगावै ऊ गल्लीतर्फ मोडिई ।

ढोका खुलै थियो । पालेहरूले पसल बन्द गर्न हतारो गरिरहेका थिएनन् । लिका ढोकाभित्र छिरेर पसलहरू चहार्दै त्यहाँ राखिैका मालसामान हेर्न लागी । पसल चहार्न ऊ निकै रुचाउँथी र बिक्रीका लागि राखिएका मालसामान र तिनका मालिकहरूको जीवनबारे कल्पना गर्दथी । तर उसले अझैंसम्म पनि स्लाभालाई उपहार दिन लायक कुनै गतिलो माल भेट्टाएकी थिइन । अन्तिम पसल हेरिसकेपछि उसले बाटोमै पोक्रोभ्कामा रहेको इटालियन पसलमा सोमरस किनेर सोझै दाचातिर जाने विचार गरी । स्लाभा रक्सीको पनि पारखी छ भन्ने उसले सम्झना गरी । बाटो छोट्याउन ऊ एकातिर मोडिई र जालीदार पर्खालनेर पुगी । त्यहाँबाट बाहिर निस्कने ठाउँनेरै उसले शिल्पशाला, पर्यटन कम्पनी, छापाखाना र उपहार पसलका साइनबोर्डहरू देखी ।

लिकाले 'उपहार पसल' लेखिएको साइनबोर्डको छेउमै रहेको घन्टीको स्वीचमा थिचेर घन्टी बजाई । ढोका खोलिएपछि ऊ भित्र पसी र केही अँध्यारो ठाउँमा रहेको

भरेङ चढेर माथि तेस्रो तलामा पुगी। त्यहीं नै उपहार पसल थियो। लिकाले सुरुमा त ढोका घच्घच्याउन चाहेकी थिई, तर पछि किन हो कुन्नि निकै सतर्क भएर बिस्तारै ढोकाको हातो थिचेर ढोका खोली। घन्टीको लयदार टिनटिनको सुमधुर स्वर सुनियो। सूर्यास्तको प्रकाशले उज्यालिएको पसलको कोठा उसको सामुन्ने थियो। ऐनावाल ठूलो झ्यालबाट सूर्यको मधुरो किरण भित्ताभरि छतसम्म नै परिरहेको थियो।

कोठा एउटा ठूलो हलजस्तै देखिन्थ्यो। त्यो अनौठा चीजबीजहरूले भरिपूर्ण थियो। भित्ताभरि नै टन्न राखिएका दराजका तख्ताहरूमा र कुनाहरूमा समेत शोभाका लागि टाँगिएको पर्दापछाडि अनगिन्ती कसौडी आकारका वस्तुहरू, पानसहरू, मूर्तिहरू, कण्ठहार र रत्नका मालाहरू सजाएर राखिएका थिए। सूक्ष्मचित्रहरू र ऐनाहरूले भित्ताहरू सिंगारिएका थिए। कुनामा अनौठो ढङ्गले खुला तख्तावाल सानो दराज र अझ सुगासहितको एउटा पिंजडा समेत अटाएका थिए। अरू पनि यस्ता कतिपय चीजबीजहरू थिए जसको प्रयोजनबारे लिकालाई कुनै अत्तोपत्तो नै थिएन। ऊ यस्ता चित्रविचित्रका सामानहरू हेर्नमै तल्लीन थिई।

– मैंया साहेब, के किन्न चाहनुभएको ? – उसले प्रश्न सुनी।

लिका झसङ्ग भई र आवाज कताबाट आएको हो भनी हेर्न लागी। तख्तावाल दराजकै छेउमा एकजना बुढो दाह्री मुसार्दै बसिरहेको थियो। ऊ सुनौला फ्रेम हालिएको चश्माद्वारा हँसिलो पाराले लिकातिर हेर्दै थियो।

– मलाई एउटा उपहार चाहिया हो ! – त्यस बुढालाई नियालेर हेर्न खोज्दै लिकाले जवाफ फर्काई।

– उपहार कस्का लागि हो ? – फेरि प्रश्न सोधियो।

– युवावस्थाका मित्रलाई ! – लिकाले जवाफ दिई।

वास्तवमा नै ऊ स्लाभालाई सधैं युवावस्थाको मित्रकै रूपमा नै सम्झन्थी।

– ऊ त्यो तख्तामा खोज्नुस् ! त्यो काँसको फ्रेम देख्नुहुन्छ ? – बुढाले इसाराले देखायो।

लिका दराजनेर पुगी र त्यहाँ काँसको फ्रेम देखी। त्यसको ऐनाभित्र टाँसिएको चर्मपत्रमा केही लेखिराखेको थियो।

– यो लिनुस् ! यसले तपाईंको युवावस्थाको सम्झना गराउने छ उसलाई ! – बुढाले फ्रेम लियो र काँचको टल्कने कागजमा त्यसलाई बेरबार पारी पाकेटमा राखेर दियो।

– कति पर्छ नि यसको ? – लिकाले सोधी र थपी – मैले त सोध्नै बिर्सरहेको ! मसित भएको पैंसाले यो फ्रेम किन्न पुग्ला र ?..

– मैंया साहेब ! यो महँगो छैन। – चमत्कारी बुढाले भन्यो। – यस पसलमा आउने अन्तिम ग्राहकलाई मन परेको चीज सित्तैमा उपहार दिइन्छ। त्यसैले यो तपाईलाई उपहार हो। तपाईलाई मन पर्‍यो कि परेन ?..

– मन पर्‍यो ! त्यसमा के लेखिएको हो ? मैले त पढ्न समेत भ्याइन । उपनगरीय रेल भेट्टाउने हतारले गर्दा ।

– तपाईं पक्कै पनि रेल भेट्टाउनुहुन्छ ! – बुढाले भन्यो ।

– कसरी ? – लिका अचम्ममा परी ।

– कसरी भने भर्खर घाम डुब्दै छ । यो सूर्यास्तपूर्वको घडी हो ।

लिकाले सूर्य अझै नअस्ताएको स्पष्ट देखी र मनमनै सोची – 'कति समय बित्यो होला ? सूर्यास्त हुन लाग्दालाग्दै म घरबाट निस्केकी थिएँ...'

– मैयाँ साहेब ! अब पसल बन्द गरिन्छ । बिदा ! फेरि भेटौंला ! – यति भनेर रहस्यमय बुढा ढोकातिर लाग्यो ।

लिका पनि फटाफट बाहिर निस्की । घन्टीहरूको लयदार टिनटिन पनि बिस्तारै टाढिंदै गयो । ऊ भरेङबाट तल ओर्ली । सबै ढोकाहरू बन्द भइसकेका थिए । कार्यदिन समाप्त भइसकेको थियो । ऊ पोक्रोभ्का गल्लीमा हतार-हतार पाइला सार्दै कुर्स्क रेलवे-जक्सनमा पुगी । घरबाट निस्कँदा जुन रेलमा चढ्ने विचार गरेकी थिई त्यसै रेलमा चढ्न पनि भ्याई । विद्युतीय रेल झण्डै खाली नै थियो । यसबाट ऊ निकै अचम्भित पनि भई । कारण के त भने अक्सर शुक्रवारका दिन साँझपख उपनगरीय रेलमा सहरबाहिर दाचातिर जाने मानिसहरूको घुइँचो हुने गर्थ्यो । ऊ आफूलाई चाहिने चाहिं रेल-बिसौनीमा उत्रेर परिचित बाटोमा स्लाभाको दाचातिर पाइला सार्न लागी । आन्युताले भनेझैं त्यो बाटोमा नहिँडेको पनि युग बितिसकेको थियो । जे भए तापनि तेस्रो वर्षकी छात्रा छँदा दर्शनशास्त्रको इतिहासको परीक्षाका लागि स्लाभासँगै बसेर उनीहरूले तयारी गरेको समययता पनि निकै वर्ष बितिसकेको थियो । क्षितिजमा डुबिरहेको घामले गोरेटोमा प्रकाश छरिहेको थियो । स्लाभाको दाचानेर पुग्नलाग्दा सङ्गीतको लय र कल्याङबल्याङको आवाज लिकाको कानमा पर्‍यो । बङ्गलाअगिल्तिरको चहुरमा पूर्वविद्यार्थीहरूको समूह देखियो । सबैले एकै स्वरमा 'लिका !.. लिका !..' भनेर फलाक्तै उसको स्वागत गरे ।

– लिका जहिले पनि समयमै आइ पुग्छे ! कहिल्यै ढिला गर्दिन ! – एउटा यौवनावस्था पार गरिसकेको, चारपाटे बुट्टा भएको कमीज र चश्मा लगाएको, मोटाघाटो सज्जनले भन्यो । त्यो स्लाभा नै भएको थाहा पाएर ऊ निकै अचम्भित भई ।

– स्लाभ्का[1] ! – उसले उद्गार प्रकट गरी र उसको गलामा अँगालो हाल्न दगुरी ।

– तिमीलाई थाहा छ, यो के हो ?! – लिकाको अँगालोबाट मुक्त भएपछि स्लाभाले 'उकुलेले' हातमा लिएर देखाउँदै सोध्यो ।

– थाहा छ ! – गर्वपूर्वक लिकाले जवाफ दिई । – यो 'उकुलेले' हो !

– हे, भगवान् ! म तिमीलाई कति माया गर्छु... तिमीले मात्र यो के हो भन्ने बताउन

---

1 स्लाभ्का – नेपालीमा 'गौरव' भन्ने अर्थ लाग्ने रूसी नाम 'स्लाभा' को स्नेहवाचक रूप ।

सक्यौ । अरु सबैले यसलाई सानो गितार मात्र भनेका थिए ! – त्यसको नाम बताउन नसक्ने आफ्ना अन्य साथीसँगातीहरूलाई खिज्याउँदै स्लाभाले उद्गार प्रकट गर्‍यो ।

– हामीले परीक्षाको तयारी कसरी गरेका थियौं, थाहा छ के ? मैले सहनाई र बाँसुरी बजाएको त सम्झिन्छयौ ?.. स्लाभाले सोध्यो ।

– थाहा छ । सबै कुरा सम्झिराख्या छु । तिमीले गितार बजाउन सिक्ने कुरा पनि गरेका थियौं । – लिकाले भनी ।

– बुझ्यौ ? मैले उकुलेले बजाउन सिकें । त्यो बाजा त घरैमा रह्यो । मस्को आउँदा बोकेर किन आउनु र ? आज पोक्रोभ्कामा पुग्दा उकुलेले बिक्रीका लागि राखिएको पसल भेट्टाएँ । बुझ्यौ ? मेलै नकिन्ने त कुरै थिएन । किनेर ल्याएँ । चाहन्छयौ भने तिम्रो लागि बजाउन सक्छु ! – स्लाभाले उत्साहपूर्वक भन्यो ।

त्यतिखेर लिकालाई आफूले किनेर ल्याएको उपहारको पनि सम्झना भयो । काँसको फ्रेममा ऐनाभित्र चर्मपटमा के लेखिएको थियो भन्ने उसले पढ्न पाएकी नै थिइन ।

– तिम्रो लागि मैले एउटा उपहार ल्याएकी छु, तर त्यसमा के लेखिराखेको हो, मलाई थाहा भएन । – यति भनेर लिकाले ब्यागबाट पाकेट झिकी ।

उनीहरूले सावधानीपूर्वक पाकेट खोले । काँसबाट निर्मित फ्रेमको ऐनाभित्र चर्मपत्रमा केही लेखिराखेको थियो । लिकाले पढेर सुनाई -

‘जे असम्भव ठानिन्छ हुन्छ त्यो जब सम्भव,

यथार्थता अनि हुन्छ अनावश्यक नै तब !’

लिकाले पढिसकेपछि स्लाभातिर दृष्टि दिई । ऊ पनि त्यसै सुदूर अतीतको नजरले लिकालाई नियालिरहेको थियो, जतिखेर त्यसै उपनगरीय बङ्गलामा उनीहरूले परीक्षाको तयारी गरेका थिए ।

अचानक सबै कुरा बदलियो ।

– घाम डुबेछ ! – लिकाले भनी ।

– जाऊँ, ल ! – खाना तयार पार्ने ठाउँतिर लम्किंदै स्लाभाले निम्त्यायो ।

P
P

Нелли КОПЕЙКИНА

ДЕЖАВЮ

Я испытала дежавю,
Причем не раз случалось это.
Я узнавала наяву
Московских улочек приметы.

На старых улочках Москвы
Себя я ощутила дома.
Здесь не бывала я, увы!
Но улочки-то мне знакомы!

Дом трехэтажный у ручья,
За поворотом – с колоннадой.
И что там дальше, знаю я.
Не говорите мне, не надо.

Так странно мне осознавать,
Но осознанье сильно это:
Тут я могла уже бывать,
Тут я кружила по паркету.

Смотрелась в эти зеркала,
Садилась, юбки поправляя,
На пуфик. Да, я тут была!
Откуда-то я это знаю…

Вон то парадное крыльцо
Взяло в тиски мое сознанье.
Я обронила тут кольцо.
Тут было у меня свиданье.

नेल्ली कोपेइकिना

झझल्को

अनुभव गर्छु सदा झझल्को,
कहिलेकाहीं नभई, प्रतिदिन ।
यथार्थ बुझ्न म सक्तछु सहजै
मस्कोका गल्लीको लक्षण ।।

गल्लीहरूमा प्राचीन यसका
घरमै जस्तो अनुभव गर्छु,
पुगेन यद्यपि यहाँ म, आच्चे !
तर यो गल्ली परिचित ठान्छु !

खोल्सोनेरै तीनतले घर,
मोड उतातिर स्तम्भ भएको ।
त्यसको पल्तिर के छ, थाहा छ,
नभन – 'नगर्नू बयान यसको !'

यस्तो सम्झी उदेक लाग्छ,
किन्तु छ जब्बर नै अनुभूति -
यहाँ म आइसकेथें पहिले,
यहाँ म फन्फन नाचेथें कति !!

यै ऐनामा मुहार हेरें,
बसें कौचमा लुगा मिलाई ।
अवश्य पनि म यहाँ पुगेथें,
कहाँबाट भो थाहा मलाई...

भव्य द्वारको मण्डपले त्यो
मेरो चेतनलाई अँठ्यायो ।
यहीं खसेथ्यो औठी मेरो,
प्रथम भेटको थलो बन्यो यो ।।

А с кем, не помню. Вот так: ах!
Воображенье разыгралось?
Не помню лиц, а о домах
Воспоминание осталось.

Воспоминанье и при том –
В душе какое-то терзанье...
Там будет спуск, там – дом с гербом.
И это знаю я заранее.

НОЖКИ И ЛИЦО

Он шел за ней уже десять минут. Таких красивых ног он раньше не видел. Они были словно точеные: ровные, чистые, длинные, идеально красивой формы. И походка у нее тоже была красивая, даже какая-то величественная. Наконец-то она вошла в магазин. «Вот тут-то я и заговорю с ней», – решил он и юркнул следом.

Ее лицо не соответствовало его внутреннему настрою: узкий лоб, небольшие блеклые глазки, оживить которые не удалось даже густо накрашенными ресницами, ровная черта тонких губ и куцый подбородок. Ему расхотелось с ней говорить, но заготовленные заранее слова по инерции сорвались с губ.

Вечером они сидели в баре модного клуба и пили коктейль. Она сидела в пол-оборота к стойке, изящно скрестив красивые длинные ноги – так, что на них проходящие мимо обращали внимание. Ему нравилось это, нравилось, как она одета, как держится, держит бокал, нравилась ее аккуратная

छैन सम्झना, कोसँग – कुन्नि !
खेल मच्चियो भावलहरको -
व्यक्तिहरूको रहेन याद,
रह्यो सम्झना बाँकी घरको ॥

मात्र झझल्को ! तर त्यो कस्तो -
भाव अनौठो मनमा फुर्दछ...
याद छ – त्यहाँ भिरालोनेरै
राजचिन्हअङ्कित त्यो घर छ ॥

अनु. ०३.०३.२०२० (सोमवार)

गोडा र मुहार

झण्डै दश मिनट जति उसको पछिपछि हिँडिरह्यो ऊ। उसको जस्तो सुडौल गोडा उसले पहिले कहित्यै देखेको थिएन । दुवै गोडा शिल्पकारले मिलाएर बनाएजस्तो चिटिक्क परेका थिए – सुडौल, लामा, चिल्ला र अत्यन्त सुन्दर ! हिँडाइ पनि उसको निकै सौम्य खालको थियो। साँच्चे भन्ने हो भने परमसुन्दरी परीकै जस्तो !

अन्त्यमा ऊ एउटा पसलभित्र पसी। 'अब त उससित पक्कै पनि कुरा गर्न पाइने भयो !' – यस्तो सोच्दै तुरुन्तै युवतीकै पछि लागेर ऊ पनि सट्ट पसलभित्र पस्यो।

उसको मुहार भने जिउडालजस्तो हिसी परेको भन्न सकिंदैनथ्यो – स-साना चिम्से आँखा, खुम्चो निधार, थेप्चो नाक, बान्की नपरेको पातलो ओंठ र अलि उप्केको चिउँडो ! परेलाभरि गाँजल पोतेर टल्काइराखेको भए तापनि आँखामा कुनै चमक देखिंदैनथ्यो। त्यस्ती युवतीसित कुरा गर्न समेत उसलाई मन लागेन, तर पहिलेदेखि भन्न तयार पारिएको वाक्य भने उसको मुखबाट अनायासै फुत्त बाहिर निस्किइहाल्यो।

साँझपख दुवैजना एउटा अत्याधुनिक क्लबको क्याफेमा दाखिल भए र कक्टेल अडर गरे। ऊ त्रिपाइमा छडके परी मजासित उपरखुट्टी लगाएर बसेकी थिई। बगलबाटै जाने मान्छेहरू उसका सुलुत्त परेका लामा गोडाहरूतिर कर्के नजर लगाउँथे। उसको लवाइ, बोल्ने ढङ्ग, कक्टेलको गिलास लिएको छाँटकाँट, उसले चिटिक्क पारेर कोरेको केश, बान्की परेको घाँटी सबै नै निकै मनमोहक थियो। युवती भनेको हिसीदार हुनु स्वाभाविक हुन्छ र उसले रोजेकी युवती त निश्चयै पनि सुन्दरी हुनुपर्दछ। कम्तीमा पनि

прическа, тонкая шея, но лицо не нравилось. Девушка в его понимании должна быть красивее, уж его-то девушка точно. То ли дело Лелька, с которой он сидит на лекциях. На ее лицо просто хочется смотреть. Но вот ноги у Лели, конечно, совсем не такие, даже далеко не такие. Обычно Леля ходит в брюках, а как-то они вместе пошли на пляж, так он просто потом жалел об этом. На ее ноги не то что руку положить, а даже смотреть-то не хотелось. Белые, с бугристыми коленями, с ярко выраженными икрами и вообще какой-то мужской формы, даже с волосяным покровом. Было видно, что Лелька и сама стеснялась своих ног, она прикрывала их то широко развернутой газетой, то полотенцем. После этого он перестал смотреть на Лелю как на свою девушку. Его девушка должна быть с красивыми, ну хотя бы не со страшными ногами. Вот если б Лельке ноги Тони, а лучше, наоборот, Тоне – Лелькино лицо. Тоня и в общении оказалась интересной. Она окончила отделение сценарного искусства ВГИК, работала в крупной компании по кинопроизводству, где, как понял он, некую важную должность занимал ее отец. Тоня рассказывала веселые истории, приключавшиеся с ней, причем в этих ее рассказах прозвучало несколько иностранных городов, из чего он сделал вывод, что она много путешествует. Поднятую им «невзначай» тему о поэзии серебряного века она тоже с удовольствием поддержала. Были даже моменты, когда он переставал замечать, что у нее страшненькое лицо, и все же лицо у Тони в его понимании было страшненьким.

Возвращался домой в полупустом вагоне. С отдалением от центра вагон становился все более пустым. На станции «Владыкино» вошла девушка и села напротив. Погруженный в свои мысли, он не сразу обратил на нее внимание, наконец праздно

व्याख्यानकक्षमा सँगै बस्ने गरेकी ल्योन्का जस्ती ! उसको हिसीदार मुहारमा मुग्ध भएर हेर्न कति मजा आउँछ ! तर उसका गोडा भने अवश्यै पनि उति सुन्दर छैनन् । सामान्यतया ल्योन्का पैन्ट लगाउँछे । एकपल्ट उनीहरू दुवैजना नदी किनारमा घाम ताप्न गएका थिए, तर पछि यसबाट उसलाई निकै पछुतो भएको थियो । ल्योन्काका गोडा यस्सो हातले मुसार्न त परै जाओस्, हेर्न समेत लायक थिएनन् । सेता घुँडा कुप्रिएझैं बाङ्गा थिए र झुसले छोपेझैं खस्रो छालाले गर्दा लोग्नेमान्छेकै जस्ता लाग्दथे । ल्योन्का पनि आफ्ना गोडाको गति देखेर स्वयं लजाइरहेझैं प्रतीत हुन्थ्यो । ऊ आफ्ना नाङ्गा गोडा कहिले अखबारले छोप्थी त कहिले तौलियाले ढाक्तथी । त्यस दिनदेखि ल्योन्कालाई उसले आफ्नी गर्ल-फ्रेण्डको रूपमा हेर्न समेत छाडिदियो । उसकी गर्ल-फ्रेण्डका गोडाहरू यस्तो कुरूप होइन कि कम्तीमा पनि बान्की परेको हुनुपर्दथ्यो । ल्योन्कासित तोन्याको जस्तो गोडा भएको भए... अझ साँच्चै भन्ने हो भने त यसको उल्टो तोन्याले ल्योन्काको मुहार पाएकी भए कति राम्रो हुने थियो । बोलीवचनमा चाहिं तोन्या निकै रूचिकर छे । उसले राजकीय चलचित्र संस्थानको नाट्यकला विभागको पढाइ पूरा गरेकी छे र प्रसिद्ध चलचित्र कम्पनीमा काम समेत गर्दैछे । स्वाभाविकै हो, त्यहाँ उसका बुवा महत्त्वपूर्ण पदमा थिए । तोन्याले आफ्नो जीवनमा घटेको रोचक र रमाइला परिघटनाहरूबारे बताएकी थिई । उसको वर्णनमा कतिपय विदेशी सहरहरूको नाम पनि गाँसिएको थियो । यसबाट तोन्या खूब यात्रा गर्दिरहिछ भन्ने पनि निष्कर्ष निकालिएको थियो । रजतयुग[1] को काव्यको विषयमा प्रसंगवश कुरा चल्दा पनि उसले सहर्ष समर्थन जनाएकी थिई । त्यसपछि त तोन्याको मुहार हिसीदार छैन भन्ने समेत उसलाई नलाग्न थालिसकेको थियो । जे भए तापनि उसको धारणाअनुसार तोन्याको मुहार चाहिं वास्तवमै सुन्दर भन्न सकिने खालको थिएन ।

भूमिगत मेट्रो-रेलको आधा जति खाली डब्बामा बसेर ऊ घरतिर जाँदै थियो । केन्द्रबाट जति टाढा पुगिन्थ्यो, डब्बा पनि त्यसै अनुपातमा खाली हुँदै गइरहेको थियो । भ्लादिकिनो मेट्रो-बिसौनीमा एउटी युवती डब्बाभित्र पसी र उसको ठीक सामुन्नेको सीटमा बसी । आफ्नै विचारमा डुबिरहेको हुनाले उसले शुरुमा युवतीतिर ध्यानै दिएन । अन्त्यमा यताउति नजर दौडाउँदै उसले विज्ञापनका सबैजसो पोष्टरहरूको अध्ययन गर्‍यो र अन्त्यमा उसको दृष्टि युवतीमा पुगेर टक्क रोकियो । त्यहाँ सामान्य युवती बसिराखेकी थिई । उसलाई सुन्दरी नै त भन्न सकिंदैनथ्यो, तर निकै हिसी परेकी चाहिं अवश्य थिई । उसको मुहारको रूप निकै मिलेको थियो र कपाल पनि सुहाउँदिलो नै थियो । तर गोडाहरू ?.. लामो जम्फर लगाइराखेकी हुनाले उसका गोडाहरू चाहिं देख्न सकिंदैनथ्यो ।

[1] रजतयुग – उन्नाइसौं शताब्दीको अन्त्य र बीसौं शताब्दीको प्रारम्भको समयावधिमा रचित रूसी काव्यधाराको प्रतीकात्मक नाम । रूसी दार्शनिक निकोलाइ बेर्द्याएभले सर्वप्रथम यो पारिभाषिक शब्द प्रयोग गरेको मानिन्छ ।

блуждающий взгляд, изучив все рекламные плакаты, остановился на ней. Обычная девушка, красавицей не назовешь, а впрочем, вроде даже красива: правильные черты лица, пышные волосы. А ножки? Ноги ее были скрыты под длинной юбкой.

На следующей станции объявили, что поезд дальше не идет. Первой поднялась и пошла к выходу девушка. В прорезь юбки он успел заметить ее ногу. Нормальная, по крайней мере, женственная нога.

В ожидании следующего поезда стояли рядом. Она смотрела в сторону ожидаемого поезда, он, делая вид, что тоже, рассматривал ее. Прошла минута, пошла вторая. «Чем черт не шутит, попробую познакомиться», – решил он.

Через пару лет по телевидению в одной их многочисленных увеселительных передач он увидел телеведущую, очень напомнившую ему Тоню: та же фигура, те же ноги, тот же голос, но лицо было не её. Несколько удачных операций до неузнаваемости изменили лицо Тони. До неузнаваемости.

अर्को मेट्रो-बिसौनीमा पुगेपछि 'रेल अगाडि जाँदैन' भन्ने सूचना दिइयो। युवती जुरुक्क उठी र डब्बाबाट बाहिरतिर लागी। अब भने जम्फरको चिराबाट उसको गोडा छर्लङ्ग देखियो। सामान्य, तर कम्तीमा पनि नारीसुलभ गोडा उसको दृष्टिमा पर्‍यो। बाहिर निस्केर अर्को रेलको प्रतीक्षा गर्दा दुवैजना सँगसँगै उभिन पुगेका थिए। युवतीले रेल आउने सुरुङतिर नजर फिराई। उसले पनि त्यतैतिर दृष्टि दिएझैं गरेर उसलाई नियालेर हेर्‍यो। एक-एक मिनेट गर्दै रेल पर्खंदा-पर्खंदै समय बितिरहेको थियो।

'जे-जसो भए पनि चिनापर्ची गर्ने प्रयास गर्छु पर्ला !..' – उसले अठोट गर्‍यो।

यो घटना घटेको दुई-अढाई वर्षजति पछि टेलिभिजनको एउटा मनोरञ्जनात्मक कार्यक्रममा उसले तोन्याको सम्झना गराउने एउटी युवतीलाई पर्दामा देख्यो – उस्तै जिउडाल, उस्तै हाउभाउ, उस्तै स्वर र गोडाहरू पनि हूबहू उस्तै ! तर मुहार चाहिं तोन्यासित मिल्दोजुल्दो थिएन। केही पटक सर्जरी गरेपछि तोन्याको मुहार चिन्नै नसकिने गरी बदलिएको थियो। तसर्थ उसले टेलिभिजनकी युवतीलाई चिन्नै सकेन !..

Владислав ЛАРИН

ДВА ГОГОЛЯ

В Москве стояла осень. Начинался октябрь. Мелкий дождь смывал последние краски с пестрого одеяния деревьев на бульваре. Серые тучи низко плыли над городом, задевая верхушки деревьев. Вечером они опускались на землю. Звуки становились глуше, а вокруг фонарей загоралось мутное сияние. В резиновых галошах по мокрому асфальту шлепали троллейбусы и брызги от них разлетались далеко вокруг. Они деловито спешили в разные стороны, высматривая дорогу желтыми глазами и слегка подрагивая длинными усами. На город незаметно наползали осенние сумерки.

Гоголевский бульвар был почти пуст. Ветер срывал с тополей и кленов оставшиеся листья и бросал их на асфальт, раскидывая по всему бульвару. Листья гонялись друг за другом между деревьями, иногда замедляя полет и задумчиво опускаясь в лужи. Лужи темнели на асфальте, как ночные зеркала, вставленные в оправу из желтых и красных листьев. Листья падали в лужи и старались побыстрее доплыть до края, чтобы присоединиться к своим.

Мокрые лавки пустовали. Только около одной несколько стариков молча стояли над шахматной доской, повыше подняв воротники своих еще довоенных пальто. Хотя чуть дальше, на другой лавке, сидели еще двое под одним зонтом. Они не замечали дождя и ветра, пытавшегося унести их легкую крышу. Они вообще ничего не замечали. Они просто смотрели друг на друга.

Редкие прохожие старались скорее добраться до дома. Они торопливо шли по мокрому асфальту, по осеннему золоту, по темным зеркалам луж, и те разлетались брызгами у них под ногами. Негромко роптали тополя, роняя капли с голых ветвей. На детской площадке тихо стояли деревянные звери, брошенные своими друзьями. В гости их никто не пригласил. Ветер обдавал их брызгами налетавшего дождя, и звери испуганно жались друг к другу. Поскрипывали качели, на которых качался ветер. А осень смотрела на все это и ей было немного грустно. Ведь у осени тоже бывают грустные дни.

Вдоль чугунной ограды пробежала небольшая серая собачка. Она была вся мокрая, а ее хвост мелко дрожал. Ее тоже никто не взял с собой в домашнее тепло, и она казалась очень одинокой. В такую погоду это чувствуется особенно сильно.

Ветер пытался сорвать мокрую газету, но ее утром крепко приклеила к доске женщина с толстой сумкой и ведерком клея, из которого торчала кисточка. Газета билась на ветру, но улететь не могла. Быть может, ей хотелось стать птицей. А может быть, надо было освободить место для свежей утренней прессы.

В конце бульвара в серых сумерках темнела фигура каменного человека, стоявшего спиной к бульвару своего имени. Он взобрался на высокий камень и улыбался всем оттуда. Его окружали фонари, под которыми свернулись львы. Наверное, так было надо, чтобы человек мог им улыбаться, когда последний прохожий уйдет с бульвара. А может быть, он очень любил львов, когда был не каменным, а таким, как все. Улыбка этого высокого человека с длинным носом и длинными волосами казалась слегка иронической. Наверное, он прочитал надпись на камне перед тем, как на него подняться.

Там было написано: «Великому русскому художнику слова Н.В. Гоголю от правительства Советского Союза».

Ему было чем гордиться...

Человек стоял лицом к площади, смотря на потоки людей и машин, бегущие у его ног, и улыбался. Он не знал, что если перейти эту площадь и свернуть налево во двор, то он встретит своего двойника – человека с тем же именем и такой же фамилией. Только этот двойник выглядит старым, усталым и больным, он глубоко сидит в кресле, запахнувшись в халат, и, кажется, не может согреться даже когда на бульваре лето. Его маленькая сгорбленная фигура вызывает жалость. Он не похож на своего знаменитого двойника. Он даже ничего не знает о нем, и ему кажется, что все, кто когда-то почитали его и восхищались его талантом, теперь отвернулись от него, больного старика.

Его кресло стоит на камне, на котором написано только одно слово. Это его фамилия. Гоголь. А ниже тянется вереница фигур. Это его дети, его герои, которым он когда-то дал жизнь. Быть может, он думает о них в такие грустные осенние вечера, когда на бульваре не его имени шумит в ветвях деревьев ветер, а дождь одевает на фонари мутные желтые колпаки. Он был так же одинок и никому не нужен в этот вечер, как и те редкие прохожие, что торопливо шли под мелким дождем мимо мокрых пустых лавок и голых деревьев.

29 сентября 1982 г.

Публикуется впервые

भ्लादिस्लाभ लारिन

दुईजना गोगोल

मास्कोमा शरद् ऋतु चलिरहेको थियो । सिमसिम झरीवर्षाले उद्यानपथमा उभिइरहेका रूखहरूको चम्किलो पहिरनबाट आखिरी रङ्ग पनि पखाल्दै थियो। खैरा बादलका ढिकाहरू रूखका माथिल्ला हाँगाहरूलाई स्पर्श गर्दै शहरमाथिको आकाशमा निकै तल तैरिरहेका थिए। साँझपख त ती ढिकाहरू जमीनसम्म नै झरेका थिए। आवाज मधुरो हुँदै गइरहेको थियो । एकाएक खम्बाका बत्तीहरूले झलमल्ल बलेर धूमिल उज्यालो छर्न थाले । ट्रलिबसहरूले रबरका आफ्ना गमबुटहरू भिजेको अलकत्रामा बजारेर छप्ल्याङछुप्लुङ आवाज निकाल्दै बाछिटाहरू निकै परपरसम्म हुर्याइरहेका थिए। ती ट्रलिबसहरू कहिलेकाहीं आफ्ना लामा जुँगा झटकार्दै पहेंला आँखाले बाटोतिर हेरेर विभिन्न दिशाहरूतिर हतारिंदै दगुरिरहेका थिए । चाल मारेर बिस्तारै शहरमा शरदीय साँझ पस्रिंदै थियो।

गोगोल उद्यानपथ प्रायः निर्जनजस्तै भइसकेको थियो । बतासको झोक्काले बनपिप्पल (पोपलर) र कुट्टिम (मैपिल) का बोटहरूबाट पातहरू चुँडेर उद्यानपथभरिका अलकत्रामाथि फाल्दै थिए । रूखमुन्तिर झरेका पातहरू पनि एक-दोस्रालाई उछिन्दै कहिले तँछाड्-मछाड् गर्दै त कहिले चाल मार्दै जमेको पानीका खालहरूमा थुप्रिंदै थिए। अलकत्रा माथि जमेका खालहरू पहेंला र राता पातहरूबाट निर्मित फ्रेम हालिएका रातका ऐनाझैं काला देखिन्थे । खालमा झरेका पातहरू सकभर चाँडो आफ्ना दौंतरीहरूसित एकाकार हुन त्यसको किनारातिर तैरने जमर्को गर्दै थिए।

भिजेका बेञ्चहरू एकदमै खाली थिए। एउटा बेञ्चनिर युद्धपूर्व सिलाइएका आफ्नो ओभरकोटको कलर निकै माथि सारेर केही बृद्धहरू बुद्धिचालको फलकमाथि चूपचाप उभिइरहेका थिए । अनि केही पल्तिरको एउटा बेञ्चमा चाहिं अन्य दुईजना एउटै छातामुनि ओत लागेर बसिरहेका थिए । उनीहरूलाई न झरीको वास्ता थियो, न त बतासको झोक्काले उनीहरूको हलुका छानो नै पल्टाइदेला भन्ने चिन्ता थियो । उनीहरूलाई कुनै कुराको पनि चासो थिएन । उनीहरू एक अर्कालाई एकटक लगाएर हेर्नमै तल्लीन थिए । विरलै देखापर्ने बटुवाहरू छिटो घर पुग्न हतारिएका देखिन्थे । उनीहरू शरदीय सुनौला पातहरू बिछ्याइएको धूमिल ऐनाझैं प्रतीत हुने भिजेको कालोपत्रे बाटोमा छिट्छिटो पाइला चाल्दै थिए। उनीहरूको गोडाको चालसँगै खालमा जमेका पानीका बाछिटाहरू छ्याल्लब्याल्ल उफ्रिँदै थिए। वनपिप्पल-वृक्षहरू आफ्ना

नाङ्गा हाँगाबाट पानीका अश्रुबिन्दुहरू झार्दै बिस्तारै सुसाइरहेका थिए। केटाकेटी खेल्ने ठाउँमा यत्रतत्र फालिएका काठका पशुपन्छीहरू झोक्र्याएर चूपचाप बसिरहेका थिए। त्यहाँ तिनलाई कसैले पनि खेल्नका लागि निम्त्याइरहेको थिएन। हावाले तिनमा पानीका बाछिटाहरू छर्किरहेको थियो र पशुपन्छीहरू तर्सेर एक अर्कासित टाँसिइरहेका थिए। बतास मानौं पिङमा बसेर मच्चिंदै थियो। शरद् चाहिं यो सब दृश्य हेर्दै केही दिक्क भएजस्तो लाग्दथ्यो। शरद्को पनि त नरमाइला दिनहरू हुन्छन् नि !

फलामको दण्डीले लगाइएको बारहुँदै एउटा सानो खैरो कुक्कुर खुर्र दौडिएको देखियो। त्यो निथ्रुक्कै भिजेको थियो र उसको पुच्छर समेत जाडोले बिस्तारै कामिरहेको थियो। उसलाई पनि कसैले न्यायो घरमा लिएर गएन। ऊ निकै एक्लो प्रतीत हुन्थ्यो। त्यस्तो मौसममा एक्लोपनको निकै प्रखर अनुभव हुन्छ।

बतासको झोक्काले सूचनापाटीबाट भिजेको अखबार हटाउने जमर्को गरिरहेको थियो। एकाबिहानै बडेमानको झोला झुन्ड्याएर बुरुसको बींड बाहिर निस्केको गुँदको बाल्टी लिएकी एउटी अँधबैसे आईमाईले त्यो अखबार त्यहाँ टाँसिदिएकी थिई। त्यो अखबार त्यहाँबाट त्यत्तिकै निस्केर जान नचाहेझैं गरी हावामा फटफट गर्दै हल्लिरहेको थियो। सके त्यो चराजस्तै उड्ने चाहना राख्तथ्यो होला। जे भए पनि भोलिपल्टको नयाँ अखबारको लागि त उसले ठाउँ छोडिदिनै पर्दथ्यो।

उद्यानपथको पुछारमा गोधुली साँझपख मान्छेको आकृति ठम्याउन हम्मे पर्दैनथ्यो। त्यो प्रस्तर-मानव उसैको नामले सुपरिचित उद्यानपथतिर पीठ फर्काएर उभिइरहेको थियो। ऊ एउटा अग्लो चट्टानमाथि उक्लेको थियो र त्यहाँबाट बटुवाहरूलाई हेर्दै मुस्कुराइरहेको थियो। उसको वरिपरि बत्तीका स्तम्भहरू थिए जसको मुन्तिर बेरिएर बसेका सिंहहरू थिए। उद्यानपथबाट अन्तिम बटुवा गइसकेपछि पनि त्यो मान्छे तिनलाई हेरेर मुसुक्क मुस्कुराओस् भनेर पनि यस्तो गरिएको हुन सक्छ। अहिलेझैं ढुङ्गाको नभई अन्य सबैजस्तो हुँदाखेरि त्यो मान्छे सिंहहरूलाई निकै मन पराउने पनि हुनु सम्भव छ। लामो नाक र लामै केश भएको त्यस अग्लो मान्छेको मुस्कान अलि व्यङ्ग्यमय नै प्रतीत हुन्थ्यो। चट्टानमाथि उक्लनुभन्दा पहिले त्यस मान्छेले शिलामा कुँदिएको अभिलेख स्वयं आफैले पढेको पनि हुन सक्छ। त्यहाँ लेखिएको थियो – 'सोभियत संघको सरकारको तर्फबाट रूसी वाङ्मयका महान् शिल्पी निकोलाई भासिल्येभिच गोगोलप्रति' !

यस्तो अभिलेखबाट उसले गर्वको अनुभूति गर्नु स्वाभाविकै हो...

त्यो मान्छै फराकिलो चोकतिर मोहडा पारेर उभिएको थियो र त्यहाँ उसकै गोडामुन्तिरबाट हिँडेर जाने मानिसहरू र गुडेर जाने गाडीहरूको लस्कर नियालेर मुस्कुराउँथ्यो। त्यो चोक पार गरेर बायाँतिर लाग्दै नजिकैको आँगनमा उसको जस्तै नाम र थर भएको आफ्नो प्रतिमूर्तिस्वरूप अर्को मान्छे पनि भेटिने छ भन्ने उसलाई अत्तोपत्तो

नै थिएन । तर उसको त्यो प्रतिमूर्ति बृद्ध, थकित र रोगी देखिन्थ्यो । ऊ त्यहाँ एउटा उपर्ना पहिरेर मेचमा बसिराखेको थियो । उद्यानपथमा ग्रीष्मको न्यानो हुँदा पनि उसलाई चिसो नै लागिरहेझैं प्रतीत हुन्थ्यो । उसको सानो कुप्रे शरीर देखेर दया जाग्दथ्यो । आफ्नो ख्यातिप्राप्त प्रतिमूर्तिसँग उसको जिउडाल पटक्कै मिल्दैनथ्यो । उसलाई आफ्नो प्रतिमूर्ति पनि छ भन्ने थाहा नै छैन । उसलाई के लाग्छ भने उहिले जो उसको लेखोट पढेर उसको प्रतिभाबाट मुग्ध भएका थिए ती सबैले अब रोग र बुढ्यौलीले थलिएको उसलाई सम्झन समेत छोडिसकेका होलान् !

एउटै मात्र शब्द कुँदिएको ढुङ्गामाथि ऊ बसेको मेच राखिएको छ । त्यसमा अङकित छ उसको थर – 'गोगोल' ! त्यसभन्दा मुन्तिर लहरै विभिन्न आकृतिहरू रहेका छन् । ती उसका बालबच्चाहरू हुन् – उसका कृतिमा उल्लिखित पात्रहरू, जसलाई उसले कुनै जमानामा जीवन्त तुल्याइदिएको थियो ! हुन सक्छ, ऊ त्यतिखेर तिनको बारेमा सोच्न थाल्छ जब शरद्का उराठिला साँझहरूमा उसको बेनामी आँगनमा पनि रूखका हाँगाहरू बतासको झोक्काको पिटाइले सुसाउँछन् र झरीवर्षाले बत्तीका लट्ठालाई धूमिल पहेंला ढकनीहरू पहिराइदिन्छ ! त्यस साँझ पनि ऊ एक्लो नै थियो र कसैले पनि उसको वास्ता गरेको थिएन । ती विरलकोटिका बटुवाहरू जस्तै जो सिमसिम झरीवर्षा भइरहँदा नाङ्गा रूखहरूमुन्तिर भिजेका रित्ता बेञ्चहरूनेरैबाट हतारिंदै लम्किरहेका थिए ।

२९ सेप्टेम्बर १९८२,
(अद्यापि अप्रकाशित)

Александр ЛОЗОВОЙ

ПАЦИЕНТЫ

ИГОРЬ ПО ПРОЗВИЩУ «СКОРОХОД» (28 лет)

Из анамнеза: «По словам больного: мать нормальная, папа – олигофрен».

Примечание лечащего врача: «Я, как психиатр с многолетним стажем, могу констатировать, что довольно редко встречаются случаи, когда умная женщина выходит замуж за недалекого мужчину, и, как правило, такие браки распадаются. Значительно чаще и повсеместно – умный, образованный мужчина женится на симпатичной дуре и такие браки устойчивы».

Продолжение анамнеза: слова пациента: «Папа олигофрен вдруг начинал ходить безостановочно кругами по комнате. Тогда приезжала карета скорой помощи и забирала папу олигофрена».

Троллейбусами Игорь не пользовался – только автобусами. Троллейбус считал – «рогатым».

Как-то Игорь узнал, что Москва состоит из нескольких колец, окружностей вокруг центра города. Он решил это проверить и пошел по Бульварному кольцу. От Гоголевского бульвара он спустился вниз, а там оказалась река, и никакого продолжения кольца не было.

Игорь пошел по кольцу в противоположную сторону. От Покровских ворот спустился вниз по кольцу и опять оказался обман, снова вода.

От Яузских ворот Игорь пошел вверх по Яузе. Там была небольшая плотина с перекатом воды.

Долго он стоял и смотрел на воду, а рядом с грохотом мчались по набережной автомобили. Из шума машин до Игоря доносились звуки похожие на слова. Сначала неразборчивые, но Игорь попытаться их все-таки уловить и, наконец, женский голос явственно произнес: «Обойди Садовое кольцо!».

Садовое, действительно, оказалось кольцом.

– За какое время ты его обходил? — поинтересовался Аркадий.

– Точно не могу сказать, но, если начинать с шести утра, то до одиннадцати вечера я обходил его три раза.

Затем Игорь стал проверять кольцевую автодорогу (МКАД). Это тоже оказалось не обманом. Обошел Игорь ее за два дня. Утром он приехал к пересечению Можайского шоссе и кольцевой и пошел по ней на восток до Ярославского шоссе, потом вернулся домой переночевать. На следующее утро он приехал к этому же месту и дошел по кольцу до первоначальной точки, до пересечения с Можайским шоссе.

Потом кто-то надоумил Игоря прогуляться по окружной железной дороге, которая находится между Садовым кольцом и кольцевой автодорогой.

Игорь пошел проверять это кольцо и оказался у моста через реку около Кутузовского проспекта. На мосту стоял часовой, который преградил Игорю путь, но он все-таки пытался прорваться через мост. Его забрали в милицию, а потом доставили в лечебницу.

ВИТАЛИЙ-ШАТУН (42 года)

Виталий ездил на работу на метро. И там ему пришла мысль сравнивать встречавшихся на пути

женщин со своей женой: «Сколько из них лучше моей жены, чтобы и лицом, и фигурой одновременно?» – задался он вопросом

Но была зима, и о фигурах женщин сделать заключение было сложно. Так что Виталий решил пока ограничиться только лицами. По дороге на работу он насчитал девяносто шесть женщин лучше, чем его жена, а на обратном пути – сто четырнадцать. Войдя в квартиру, он запрезирал жену.

В течение нескольких следующих дней цифры существенно не менялись. На выходные дни он решил специально поездить в метро. Женщин он считал и на встречном эскалаторе, и на переходах между станциями, и на входах и выходах из метро.

В вагоне за один раз ему никак не удавалось насчитать больше пяти (вне часов пик). Обходить все вагоны в поезде не имело смысла, проще было стоять на переходе. В субботу он насчитал за весь день чуть более пятисот лучше своей жены, и, вернувшись вечером домой, еще более ее запрезирал.

Детей у Виталия с женой не было. Жена предлагала завести кошку, но Виталий категорически отказывался. Объяснял это тем, что люди очень привязываются, любят своих животных, а потом приходится их терять и это вызывает большое переживание. На самом деле это была лишь отговорка – он никогда не любил животных.

В течение нескольких месяцев цифры особо не менялись, но приближалось лето, когда можно было уже оценивать и фигуру, но одновременный учет по двум показателям зачастую противоречивому результату.

К этому времени Виталий уже знал, где лучше считать. На станциях метро около железнодорожных вокзалов — смысла не имеет. Там зачумленные женщины спешат на электрички. Более или менее

симпатичные уже пристроились в столице, на своих родных наплевали и на электричках к ним не ездят, а молодые и красивые в их областях еще только подрастают.

На станциях метро, которые расположены в спальных районах, тоже был плохой подсчет. Утром и вечером народу много, а днем — небольшой пассажиропоток. У метро «ВДНХ» много пенсионеров, приезжих и детей.

Наиболее оптимальными станциями для подсчета, по наблюдениям Виталия, были: «Площадь Революции», «Парк Культуры» (Кольцевая), «Университет», но лучше всего ему считалось на станции «Арбатской» (не Филевской, а Арбатско-Покровской линии). Виталий объяснял это не близостью Старого и Нового Арбата, магазинами, кафе, ресторанами, а неким энергетическим полем, притягивающим приятных женщин.

Виталий взял отпуск и стал приходить в вестибюль станции «Арбатской». Чтобы не сбиться, он вел записи, где нумеровал женщин по пятьдесят штук, а потом к концу дня суммировал. Надо отдать Виталию должное, он не делал приписок, а объективно осматривал женщин, выявляя их недостатки и преимущества, по сравнению с женой, но ему никак не удавалось преодолеть за день тысячный рубеж, который он себе определил. После нумерации до девятисот, он свою жену уже просто возненавидел.

В вестибюле «Арбатской» милиция заметила Виталия с первого же дня, но забрали его позднее. Присматривались. Три дня его продержали в милиции, пока не убедились, что он только маньяк-теоретик, и на него нельзя повесить не раскрытые дела. Из милиции Виталия отправили в лечебницу.

Жена регулярно навещала Виталия в больнице. Ранее ее всегда интриговала и привлекала его

таинственность. Она как-то обнаружила в записной книжке Виталия непонятные вычисления и предположила, что это расчеты о предстоящих семейных доходах, и это ее очень окрылило. Она решила, что Виталий готовит ей большой денежный сюрприз.

Поскольку он таинственно улыбался-скалился и отмалчивался в ответ на все ее вопросы, то она пошла к гадалке и рассказала ей про вычисления. Гадалка ответила, что когда расчеты приблизятся к тысяче, то надо ждать сюрприза.

В лечебнице жене так и не раскрыли врачебную тайну Виталия.

अलेक्सान्द्र लोजोभोइ
बिरामीहरू

'द्रुतगामी स्कोरोखोद' उपनामधारी इगोर (२८ वर्ष)

बिरामीको कथ्य-टिपोटबाट – 'बिरामीको बयान अनुसार आमा सामान्य, तर बाबु चाहिं अल्पबुधिपीडित'।

उपचारकर्ता चिकित्सकको टिप्पणी – 'म निकै वर्षअनुभवप्राप्त एक मनोवेत्ताको हैसियतले के निचोड निकाल्न सक्छु भने एउटी बुद्धिमती महिलाले अल्पबुद्धि पुरुषसँग विवाह गरेको घटना विरलै देख्न पाइन्छ। सामान्यतया त्यस्तो वैवाहिक सम्बन्ध दिगो हुँदैन। प्रायशः र सर्वाधिक रूपमा बरु बुद्धिवान् पुरुषले मूर्ख आईमाईसित नै विवाह गरेको देखिन्छ र यस्तो विवाह दिगो समेत रहने गरेको छ'।

बिरामीको कथ्य-टिपोटबाट क्रमशः – बिरामीको भनाइ – 'अल्पबुद्धि बुवा कोठामा एक्कासि नरोकिएर हिँड्न लाग्नुभयो। त्यतिखेर प्राथमिक उपचारको एम्बुलेन्स आइपुग्यो र अल्पबुद्धि बुवालाई लिएर गयो'।

इगोर ट्रलिबसमा कतै जाँदैनथ्यो। कतै जान परे बस नै हुनुपर्दथ्यो। ऊ ट्रलिबसलाई 'सिङधारी' मान्दथ्यो।

एकपल्ट इगोरले मास्को कतिपय चक्रपथको घेराभित्र रहेको छ। यी चक्रपथहरूले शहरको केन्द्रलाई वरिपरिबाट घेरेको छ भन्ने थाहा पायो। यसको परीक्षा गर्ने उसले अठोट गर्‍यो र बुल्वार्ड-चक्रपथमा गयो। गोगोल बुल्वार्ड-उद्यान-पथबाट ऊ ओरालोतिर लम्कियो र नदीसम्म पुग्यो। त्यसपछि बुल्वार्ड-उद्यान-पथलाई चक्राकार रूपमा जोड्ने कुनै बाटो पनि अगाडितिर तन्किएको देखिएन।

अनि इगोर फनक्क फर्केर विपरीत दिशातिर लम्कियो। पोक्रोभ्स्की ढोकाबाट बुल्वार्ड-चक्रपथ हुँदै तल्तिर लाग्यो र फेरि पनि ऊ हिस्सियो। त्यहाँ पनि नदी नै पायो।

याउज्स्की ढोकाबाट ऊ याउजा नदीको तीरैतीर उकालोतिर लम्कियो। त्यहाँ उसले सानो बाँध बाँधेर पानीको सतह बढाइएको पायो। निकै बेर उभिएर उसले पानीलाई नियालेर हेर्‍यो। नदीको किनारामा रहेको सडकबाट गाडीहरू घुइँकिंदै गुडिरहेका थिए। गाडीको गड्गडाहटमा मिसिएर शब्दजस्तो लाग्ने केही कल्याङकुलुङ स्वरहरू उसको कानभित्र घुसिरहेका थिए। शुरुमा त्यो आवाज बोधगम्य थिएन, तर इगोरले ध्यानपूर्वक सुनेर अर्थ बुझ्ने प्रयास गर्‍यो। अन्त्यमा नारी स्वरमा भनेको स्पष्ट वाक्य उसले सुन्यो – 'सादोभोए-कल्चोको चक्रपथ हुँदै जाऊ न!'

‘सादोभोए-कल्चो’ चक्रपथ चाहिं वास्तवमै बाटुलो भेट्टियो ।

– यो सादोभोए-कल्चो-चक्रपथ पार गर्न तिमीलाई कति समय लाग्यो हँ ? – आर्काडीले जिज्ञासा पोख्यो ।

– ठीकसित त भन्न सक्तिनँ, तर बिहान ६ बजे हिँड्न शुरु गरेको थिएँ, बेलुकी ११ बजेसम्ममा पूरा तीन चक्कर लगाउन सकियो ।

त्यसपछि इगोरले मस्को महानगरीलाई घेर्ने गरी बनाइएको छोटकरीमा ‘मकाद’ भनिने ‘मोटर-सडक-चक्रपथ’ को समेत लेखाजोखा गर्ने विचार गर्‍यो । त्यो चक्रपथ पनि बाटुलो नै पायो । त्यो चक्रपथमा भने एक चक्कर लगाउन नै उसलाई पूरै दुई दिन लाग्यो ।

बिहानपख ऊ मोजाइस्की मार्ग र मोटर-सडक-चक्रपथ जोडिने ठाउँमा पुगेर यस चक्रपथमा पूर्वतिर लम्कँदै यारोस्लाभ्स्की मार्ग जोडिने ठाउँनेर पुगेपछि राति सुत्न भनी घर फर्कियो । भोलिपल्ट बिहानै ऊ फेरि त्यसै ठाउँमा पुगेर ‘मकाद’ चक्रपथमा हिँड्दै अन्त्यमा जहाँबाट उसले यात्रा शुरु गरेको थियो त्यसै मोजाइस्की मार्ग जोडिने ठाउँमा ऊ आइपुग्यो ।

पछि कसैले इगोरलाई पहिले मालगाडी हिँड्ने तर हाल नगर-यातायातको रेल गुड्ने चक्रपथ पनि हिँडेर पार गर्ने सुझाव दियो । यो रेल-चक्रपथ चाहिं सादोभोए-कल्चो-चक्रपथ र ‘मकाद’ मोटर-सडक-चक्रपथको मध्यभागमा अवस्थित छ ।

इगोरले यस रेल-चक्रपथको पनि जाँच गर्ने निर्णय गरेर कुतुजोभ्स्की मार्गनेर नदीमाथि हालेको पुलको छेउमै पुग्यो । त्यहाँ पुलको सुरक्षार्थ खटिएको चपरासी-पालेले इगोरको बाटो छेकिदियो, यद्यपि उसले पुल पार गरेर रेल-चक्रपथको यात्रा गर्ने विचार साकार तुल्याउने प्रयत्न नगरेको होइन । उसलाई पुलिस-चौकीमा सुम्पियो । त्यहाँबाट ऊ सरासर अस्पतालमा पुर्‍याइएको थियो ।

भिताली-शातुन (४२ वर्ष

भिताली भूमिगत मेट्रो-रेल चढेर काममा जान्थ्यो । त्यहाँ उसमा भेटे जति महिलाहरूसित आफ्नी पत्नीको तुलना गर्ने विचार सुझ्यो । उसले मनमनै प्रश्न गर्‍यो – ‘यिनीहरूमध्ये जिउडाल र मुहार दुवै कुरामा मेरी पत्नीभन्दा उत्तम कति जना होलान् ?’

त्यो हिउँदको समय थियो । त्यतिखेर महिलाहरूको जिउडालबारे यसै हो भन्ने ठम्याउन गाह्रै थियो । भितालीले मुहारसित मात्र तुलना गर्ने निधो गर्‍यो । घरबाट काम गर्ने ठाउँसम्म पुग्दा उसले बाटोमा ९६ जना र घर फर्कने क्रममा चाहिं ११४ जना आफ्नी पत्नीभन्दा बढी हिसीदार महिलाहरू भेटेको थियो । घर पुगेपछि उसले आफ्नी पत्नीलाई हेय दृष्टिले हेर्‍यो ।

त्यसपछिका केही दिनसम्म माथिको संख्यामा उतिसारो फरक आएको थिएन। बिदाका दिनहरूमा उसले विशेष रूपमै मेट्रो-रेलमा सफर गर्ने निर्णय लियो। उसले यसपटक अर्कोतिरबाट आइरहेको स्वचालित सोपानमा रहेका मात्र नभई मेटो-बिसौनीको प्रवेशद्वार र भित्रको हलमा समेत एउटा रेलबाट अर्को रेल चढ्नका लागि उभिएका महिलाहरूको गन्ती गरेको थियो।

अचाक्ली घुइँचो हुने पिक-आवर नभएको वेला उसले रेलका डब्बामा यस्ता छ जनाभन्दा बढीको गन्ती गर्न सकिरहेको थिएन। रेलका सबै डब्बाहरू चहार्नुको कुनै अर्थ थिएन। बरु मेट्रो-बिसौनीको करिडोरमा रेल चढ्न आवत-जावत गर्ने ठाउँमा उभिएर निरीक्षण गर्नु बढी सार्थक हुन्थ्यो। शनिवारको विदाको दिनभरिमा उसले ५०० जनाभन्दा बढी महिलालाई आफ्नी पत्नीभन्दा हिसीदार पायो। साँझपख घर फर्केर त उसले आफ्नी पत्नीलाई अझ बढी हेय दृष्टिले हेर्‍यो।

भितालीकी पत्नीले बच्चा जन्माइसकेकी थिइन। उसले घरमा बिरालो पाल्ने सुझाव राखी, तर भिताले इन्कार गरिदियो। मान्छेहरू आफ्ना घरपालुवा जीवजन्तुहरूलाई बढी माया गर्न थाल्छन्, तर जब तिनीहरू मर्दछन् त निकै बढी पीर अनुभव हुन्छ भन्ने उसको तर्क थियो। वास्तवमा भने यो बहाना मात्र थियो। जीवजन्तुलाई उसले कहित्यै पनि मन पराएको थिएन।

केही महीनासम्म निरीक्षण गर्दा उसको गणनामा उतिसारो फरक देखिएको थिएन। तर बिस्तारै गर्मीयाम शुरु भएको हुँदा महिलाहरूको जिउडालको पनि मूल्याङ्कन गर्न सकिने भयो। एकै पटकमा मुहार र जिउडालको निरीक्षण गर्ने सम्भावना भएपछि अक्सर नतीजा विरोधाभासपूर्ण आउन थाल्यो।

त्यतिञ्जेलसम्म भितालीले कहाँ उभिएर निरीक्षण गर्नु राम्रो हुन्छ भन्ने पनि पत्ता लगाइसकेको थियो। रेलवे जङ्कसननेर रहेको मेट्रो-बिसौनीहरूमा यो काम गर्नु निरर्थक थियो। त्यहाँ थकित नारीहरू उपनगरतिर जाने रेल समात्न हतारिएका हुन्छन्। थोर-बहुत हिसीदार महिलाहरू राजधानीतिरै रहन्छन्। उनीहरू गाउँघरतिर बस्ने आफ्ना नातेदारहरूलाई एक त वास्तै गर्दैनन्, दोस्रो – उनका गाउँघरतिर हिसीदार नवयुवतीहरू अझै हुर्किसकेका पनि थिएनन्।

शहरका तथाकथित आरामदायी इलाकातिरका मेट्रो-स्टेशनहरूमा पनि निरीक्षणको नतीजा उति राम्रो हुँदैन। बिहान र साँझ मानिसहरूको हुल भए तापनि दिउँसो फाटफुट मात्र महिलाहरू देखिन्छन्। छोटकरीमा 'भदएनखा' (अखिल रसियाली जन-अर्थतन्त्र विकास प्रदर्शनी) भनिने मेट्रो-बिसौनीनेर अधिकांश पेन्सनवालहरू र केटाकेटी साथमा लिएर आउने अँधबैंसेहरूको बाहुल्य रहन्छ।

भितालीको निरीक्षणअनुसार गणनाका लागि सबभन्दा उपयुक्त मेट्रो-बिसौनी हुन् – 'प्लोश्श्याद रेभोल्युत्सिई' ('क्रान्ति चोक'), 'पार्क कुल्तुरी' (साबोभोए-कल्चो-उद्यान-

चक्रपथनेर), 'उनिभेर्सितेत' ('युनिभर्सिटी मेट्रो') । उसले मेट्रो-बिसौनी 'आर्बात्स्की' (फिलेभ्स्की लाइन होइन कि आर्बात्स्को-पोक्रोभ्स्की लाइनमा पर्ने चाहिं) सर्वोत्तम ठहर्याएको थियो । भितालीको व्याख्या के थियो भने पसलहरू, क्याफे र रेष्टुराँहरूको प्रचूरता भएको पुरानो र नयाँ आर्बात मार्गको निकटताले गर्दा नभई महिलाहरूलाई आकर्षित गर्ने कुनै अवर्णनीय शक्तिको कारणले गर्दा यस्तो भएको हो ।

भितालीले घरबिदा लिएर समेत दिनहुँ 'आर्बात्स्काया' मेट्रो-बिसौनी धाउन थाल्यो । गणनामा गडबढी नहोस् भनेर उसले नोटबुकमा लेख्ने गर्‍यो । त्यहाँ ऊ हरेक दिन पचास-पचासको दरले महिलाहरूको सिलसिलेवार नम्बर टिपोट गरेर दिनको अन्त्यमा हिसाब लगाउँथ्यो । यस कार्यमा भितालीको लगनशीलताको तारीफ गर्नै पर्दछ । उसको काममा कुनै खोट लगाउन सकिने ठाउँ नै थिएन । ऊ महिलाहरूको वस्तुपरक निरीक्षण गर्दथ्यो, उनीहरूमा भएको खोट र उत्कृष्टता तड्कारै पहिल्याउँथ्यो र आफ्नी पत्नीसँग यसको तुलना गर्दथ्यो । तर उसले कसै गरेर पनि आफ्नो लागि लक्ष्य निर्धारित गरेअनुसार एक दिनमा एक हजारको संख्या पुर्याउन सकिरहेको थिएन । जे होस्, सिलसिलेवार नम्बर नौ सय जति पुगेपछि नै उसले आफ्नी पत्नीलाई सबभन्दा कुरूप ठानेर घृणा गर्न थालिसकेको थियो ।

'आर्बात्स्की' मेट्रो-बिसौनीभित्र हरेक दिन आएर नोटबुकमा केही टिपोट गरिरहने मान्छे प्रहरीको आँखामा नपर्ने त कुरै थिएन । प्रहरीले उसलाई पहिलो दिन नै देखिसकेको थियो, तर निकै दिनपछि मात्र ऊ पक्रियो । उसको निगरानी भइरहेकै थियो । तीन दिनसम्म ऊ प्रहरी हिरासतमा राखियो । तर उसउपर न कुनै आपराधिक किसिमको मुद्दा चलाउन सकिन्थ्यो, न त जेलचलान नै गर्न सकिन्थ्यो । अन्त्यमा ऊ सन्के-सिद्धान्तकार हो भन्ने निष्कर्ष निकालियो र भितालीलाई अस्पताल भर्ना गरियो ।

उसकी पत्नी दिनका दिन अस्पताल धाउँथी । पहिलेदेखि नै भितालीको रहस्यमय चालामालाबाट ऊ छक्क परिरहेकी थिई । एकपल्ट उसले भितालीको नोटबुकमा बुझिंदै नबुझिने गणनाको सूची देखेकी थिई र यो पारिवारिक आम्दानी-खर्चको हिसाबकिताब होला भन्ठानेकी थिई । उसको यस्तो हिसाब राख्ने बानी देखेर ऊ प्रफुल्लित नै थिई । भितालीले कुनै दिन ठूलै रकमको मोटो पोको आश्चर्यजनक उपहारको रूपमा दिन चाहेको होला भन्ने उसको ठम्याइ थियो ।

जे सोधे पनि भिताली रहस्यमय मुस्कान भरेर मौन धारण गर्दथ्यो । एकपल्ट उसकी पत्नी भविष्यवक्ताकहाँ जोखना समेत देखाउन गई र भविष्यवक्तालाई गणनाको सूचीमा क्रमिक बृद्धि भइरहेको कुरा पनि बताई । भविष्यवक्ताले गणनाको सूचीमा एक हजार नाघेपछि आश्चर्यको प्रतीक्षा गरे फरक पर्ने छैन भन्ने भविष्यवाणी गरेको थियो ।

अस्पतालमा चाहिं भिताली कुन रोगको बिरामी हो भन्ने चिकित्सकीय गोप्यता उसकी पत्नीलाई समेत कसैले बताएन ।

Татьяна МИХАЙЛОВСКАЯ

МОСКВА СНЕЖНАЯ

Зимняя радость – чистый снег,
ныряет в сугробы веселая лайка.
Прохожие удивляются,
говорят: «Смотри, собаке нравится!»
И мне завидно, думаю, дай-ка
и я нырну в снег – и ныряю во сне.
Просыпаюсь наутро, спокойная, нежная...
Здравствуй, Москва снежная!

ЗИМНЯЯ ЭЛЕГИЯ

Зима, мой друг! Таинственное время года –
на всем покров лежит, все скрыто, смягчено...
Холмом покажется и старая колода –
не сразу под ногой почувствуешь бревно.
Сон, будто смерть, но исподволь жива природа,
тая в груди волшебное зерно.

Но вдруг оно не порастет в свой час и сгинет,
раздавленное сапогом свинцовых туч?
Навеки стекла оплетет морозный иней,
и город превратится в цепи снежных круч,
и ветер заскользит по льду наклонных линий...
Больная мысль, не мучь меня, не мучь!

Пускай метет – на лето солнце повернуло!
Порядок в мирозданье все же есть пока.
Пока? Увы, людскую дурь, как пену, вздуло,

ताच्याना मिखाइलोभ्स्काया

हिमाच्छादित मस्को

हिउँदको आनन्द हो – स्वच्छ हिउँ, मित्र !
मेरो लाइका रमाउँदै घुस्छ हिउँभित्र ।
चकितभै बटुवाले भन्छन् – 'हेर, भाइ !
हिउँ मन पर्दो रै'छ यो कुकुरलाई' ॥
सोच्छु डाहा गर्दै – 'अब लौ, म हिउँ खेल्छु',
घुस्छु हिउँभित्र त म – सपना पो देख्छु ।
सखारै म उठ्छु, देख्छु – सेताम्य र शान्त...
ढाकिएको हिउँले छ । मस्को, सुप्रभात !

हिउँदको पिरलो

यो शीतऋतु, हे मित्र ! रहस्य वर्षकै पूरा !
ढाकिएको छ सर्वत्र, छिपेको छ सबै कुरा...
थुम्को नै हो कि झैं लाग्छ पुरानो त्यो कुवा अनि
देखिन्न काठको मूढो पैतलामुनिकै पनि,
मृत हो वा निदाएको – ज्यूँदै छ प्रकृति तर
छातिभित्र लुकेझैं छ अन्नगेडा निरन्तर ॥

गर्ने के नटुसाएर कुहियो त्यो यदि भने,
च्यापिए छ तुवाँलोको फलामे बूटले भने ?
कठ्याङ्ग्रिने गरी बेर्‍यो ऐनाले बर्फको भने,
पुर्‍यो सहर नै सारा ढिकाले हिउँको भने,
हावा चल्यो भिरालोमा जमेको बर्फमै भने...
यस्तो विचारले नै हो मलाई झन् सताउने !

बढारोस् बरु आँधीले – ग्रीष्ममा घाम लाग्दछ !
अझैं नियम लागू नै विश्वब्रह्माण्डमाझ छ ।
अझैं... मानिसमा देख्छु मूर्खताको बढोत्तरी,

и понесло ее со скоростью плевка...
И вот уже из непроглядного загула
грозит звездам похабная рука.

Прощай, мой друг! Мы свидимся нескоро,
далекий зимний путь меня уводит прочь
от коллективного не разума, а вздора...
Я прибавляю шаг, судьбы престрогой дочь,
смотрю вперед уже без боли и укора -
вот вспыхнет утро и растает ночь.

ОТТЕПЕЛЬ

Среди зимы такое небо,
как будто наступает март!
И снег январский будто не был,
в душе – беспечность и азарт.

Легко дышать! И с уст, оттаяв,
спорхнув, подобно воробью,
несется песенка простая:
не забываю и люблю!

Мы слишком связаны с природой,
во всем мы с нею заодно -
ее любое время года
в крови у нас растворено.

Ее капризы – нам законы,
ее законы – нам юдоль.
И сердце бьется учащенно,
в себя вбирая эту боль.

र त्यो बढ्दै छ बाढीझैं उर्लेर उधुमै गरी...
अदम्य दूरताबाट दुष्ट हात फिजाउँछ,
पार्न ताराहरूलाई त्रस्त त्यो तम्तयार छ।

बिदा, मित्र ! छिटै हाम्रो अब हुँदैन भेट ता,
हिउँदे पथले लामो कुन्नि पुर्याउला कता ?
विवेक नभनौं, सामूहिक दुर्बुद्धिबाट नि...
म बाटो लाग्छु टाढाकै, पुत्री म भाग्यको बनी,
अगाडि हेर्छु त्यागेर गुनासो र व्यथा सब -
रात पग्लेर जानेछ, बिहान उघ्रला जब ॥

न्यानोपना

मध्य हिउँदमा नभ यस्तो छ,
मानौं महिना मार्च उदायो !
थिएन हिउँ पनि जनवरीमा झैं
हर्षित मनमा उमङ्ग छायो।

सास ग्रीष्मले फेर्दा मानौं
मुखका न्याना चरा उडे ती।
सुनिन्छ अति नै सुमधुर गीत -
सक्तिन बिर्सन मायापिर्ती !

अन्योन्याश्रित हामी र प्रकृति,
उससित हामी – एकाकार !
हाम्रो रक्तप्रणालीमा छ
मिश्रित हरेक ऋतुको सार।

कोप प्रकृतिको – हाम्रो ऐन,
उस्को विधि – हाम्रो आदर्श।
मुटुको धड्कन बढ्छ र त्यस्ले
साम्य तुल्याउँछ सब दुःखदर्द ॥

Но мы кромсаем наше тело
и мнем природу, точно воск.
Нам не поставлено предела –
мы моделируем свой мозг.

Так, может, мы – ее стихия?
Как буря, снег или туман,
как жаркие пески сухие,
в которых тонет караван?..

Но есть иная точка зренья:
природа сочиняет нас
в слепом порыве вдохновенья,
как фантастический рассказ!

* * *

По первому снегу, легкому, чистому,
листая на бегу минувшую неделю ноября,
зря
спешу беспечно навстречу любви
невечной, забытой в далеком прошлом,
как невещий сон...
Зачем она мне, метельная, вьюжная?
Сверну с пути,
и пусть мои следы замрут, оледенев.

* * *

Зимой спокойно жить –
снег душу охлаждает,
поземки белой нить
от резкой боли ограждает
и тайную уверенность дает,
что все когда-нибудь пройдет.

स्वयं थिल्थिलो पाछौँ देह,
प्रकृति निचोछौँ मैन सरी।
हाम्रो सामु सीमान्त छैन,
ढाल्छौं मगज स्वयं यसरी॥

सायद हामी – उस्कै अंश –
आँधी, हिउँ वा मेघ सरी,
तातो, सुक्खा बालुकणझैं
भासिन्छ जहाँ गह्रौं गठरी...

दृष्टिकोण तर अर्को पनि छ -
हाम्रो गर्छ प्रकृतिले रचना,
कपोलकल्पित कथासरी नै
फुर्दा अन्धाधुन्ध कल्पना !!

ooo

पहिलो हिउँमा टेक्दै हलुका अनि निर्मल,
पल्टाउँदै हतारोमै गतः हप्ता नोभेम्बर।
त्यसै हतारिएँ भेट्न प्रेमलाई म व्यर्थमा,
विस्मृतिमै बिलायो जो सुदूरको अतीतमा।
अनित्य सपना जस्तै रहेछ क्षणभङ्गुर...
मुटु कठ्याङ्ग्रिने आँधी, चिसो स्याँठ भयङ्कर
किन भौंतारिनु व्यर्थ, खाँचो मलाई के छ र ?
बरु फनक्क फर्कन्छु यात्रा रोक्ने निधो गरी,
पदचिन्हहरू मेरा जमून् हिउँ जमेसरी !!

ooo

बाँच्नु सहज नै हुन्छ हिउँदमा,
ठण्डा पार्दछ हिउँले आत्मा।
हिमकण सेतो रेखा बन्छ,
त्यसले असह्य पीडा रोक्छ।
आखिर दैन्य कुनै दिन हट्छ –
गूढ आत्मबल यसले दिन्छ॥

* * *

Белое на белом
черное на черном
белое на черном
черное на белом

Четыре версии зимы,
перебираю их, пытаюсь угадать:
которую увижу теперь?!

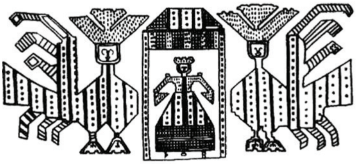

०००

सेतोमाथि सेतो
कालोमाथि कालो
कालोमाथि सेतो
सेतोमाथि कालो

हिउँदका जम्मा विकल्प छन् चार,
छानबीन गर्छु र गर्छु विचार -
अड्कल गर्दा देख्छु अब कुन ?!

Андрей ЦУКАНОВ

НА МОСКВЕ
(в не очень давние времена)

Как по Красной, по Красной площади
Ходят-бродят иностранные люди,
Мавзолей фотографируют «Кодаком»
И подходят к Лобному с трепетом.

А на ГУМ совсем не глядят.

А потом к «России» спускаются,
Выпивают виноградного сока,
Натурального сока с Кипра,
И заходят они в «Березку».

А в «Зарядье» совсем не заходят.

Из «России» они чемоданы выносят,
И садятся с ними в «Икарусы»,
На «Икарусах» в Шереметьево» едут,
И оттуда они улетают.

Вспоминают теплые встречи.

Прилетают они домой,
Приезжают к себе на квартиру,
Проявляют из «Кодака» пленку.
Гасят свет, садятся и смотрят
Мавзолей и Лобное место.

А на ГУМ совсем не глядят.

आन्द्रेइ त्सुकानोभ

मस्कोमा
(धेरै पहिले होइन)

सुन्दर चोकमा, लाल मैदान मा
घुमफिर गर्छन् विदेशीहरू,
'कोडाक' ले समाधिगृह खिच्छन्
र स्तब्ध भई 'लोब्नी' डबली पुग्छन्।

तर विशाल पसल 'गुम' हेर्दैनन्॥

अनि 'रसिया' तिर ओर्लन्छन्,
पिउँछन् रस अङ्गुरको,
साइप्रसबाट आएको शुद्ध रस,
र घुस्छन् 'बिर्योजा' पसल।

तर 'जाराद्ये' मा पस्दै पस्दैनन्॥

'रसिया' बाट सुटकेश निकाल्छन्,
हामीसँगै बस्छन् 'इकारुस' मा,
त्यसै बसमा 'शेरेमेत्येभो' पुग्छन्,
र त्यतैबाट उडान भर्छन्।

न्याना भेटघाटको सम्झना गर्छन्॥

आकाशमा उडेर स्वदेश पुग्छन्,
लाग्छन् आ-आफ्नो घरद्वारतिर,
'कोडाक' बाट रिल झिकेर धुन्छन्,
बत्ती निभाएर बस्छन् र हेर्छन्,
'समाधिगृह' र 'लोब्नी-डबली'।

तर विशाल पसल 'गुम' देख्दैनन्॥

* * *

Как всегда, я выйду из дома,
Прибреду на автобусный пункт,
Сяду там на маршрутный автобус
И доеду до «Октябрьского поля».

Там я выйду, перейду по переходу,
Прибреду на автобусный пункт,
Сяду там на маршрутный автобус
И поеду назад – домой.

Я вернусь домой и сяду – с наслажденьем.
Включу и слушать буду,
Что мне скажет оттуда несчастный
Про тоску по родному дому,
Что в гостях хорошо, а дома...

Хорошо дома – очень уютно,
Особенно, если можно
Выйти, когда захочешь...

ПЬЯНЫЙ ИДИОТ,
или МОСКОВСКИЙ АВТОБУС № 21

из мерцающей мглы
выплывает автобус № 21
застывшая остановка превращается в стан
где много племен перегоняют стада
к водопою двери
врата рая узки
в таре много разбитых сердец

○ ○ ○

निस्कन्छु घरबाट सधैं र
बस-चौकीमा पुग्छु हिँडेर।
हुन्छु बसमा विराजमान,
'अक्त्याबरुर्की पोले' जान॥

निस्की बाहिर, बाटो काट्छु,
बस-चौकीमै फेरि पुग्छु।
बिहानजस्तै बसमा बस्छु,
फर्की आखिर घरमै पुग्छु॥

घरमा हुन्छु विराजमान,
बज्दछ घन्टी, फोन म लिन्छु।
घरको पिरले दुःखी छ बिचरो,
पीडित स्वरमा बयान सुन्छु॥

बन्नु पाहुना राम्रो हो, तर...
बेस हुन्छ है आफ्नो नै घर।
आफ्नै घरमा सुविधा हुन्छ,
मन लागेको गर्न सकिन्छ...

सन्के जँड्याहा
वा १२ नम्बरको बस

मधूरो गोधुलिबाट झिलिक्क
झुल्केथ्यो बस नम्बर बाह्र।
जागृत भो चकमन्न बिसौनी,
विविध जातिको बथान उर्ल्यो,
द्वार खुल्यो जब भयो बिहानी।
हुन्छ स्वर्गको द्वार साँगुरो
टन्न छ आरी आहत मुटुको।

так начинается пытка поездки
к дому
я еду
неравновесно сдавливаемый в срединной точке
дорога восьмерит в бесконечность
я сам – масса этой дороги
я сам – скорость автобуса
остановка в точке перекрестия
верхняя половина опустела
я перевернулся
а автобус № 21 вошел пьяный идиот
пристал к женщине с ребенком
трогал ее руками
ведал ли он что творил
но автобус мчался со скоростью света
и ряд молодых людей
словно род защищая свой
выкинул его во вне вен
сплющенного пространства
асфальт расплавился
под пентаграммой пьяного идиота
ловя колеса
видел затылком лишь крестовину вала
остановился над телом
племя замахало руками
поплыл далее
набирая лады света
таща черные крылья
разорванного плюща
через полчаса
по просьбе женщины
автобус остановился
на нужной большинству пассажиров остановке
сошли по ступеням
на поле плаща
постепенно рассредоточились

हुन्छ यातनाबाट थालनी
घरतिर जाने यात्रापथको ।।
मध्य बिन्दुमा थिचिई-मिचिई
गुमाई सन्तुलन जाँदैछु ।
लाग्दछ बाटो लम्बेतान,
पथको आयत स्वयं म बन्छु,
बसको गति पनि स्वयं म हुन्छु ।।
दोबाटोमा पर्छ बिसौनी,
खाली भो माथिको आधा,
अनि म मोडिएँ,
आयो भित्र
बसमा नम्बर एक्काइसको
टन्न पिएर सन्क्याहा त्यो
जिस्किन लाग्यो महिलासित नै
थियो काखमा बालक जसको ।
महिलालाई छोयो उसले,
'के गर्दैछु ?' भन्ने कत्ति
थाहा थिएन कि क्या हो रत्ति !
प्रकाश-गतिमा हुइँक्यो गाडी
युवाहरू क्यै बढे अगाडि,
मानौं आफ्नो वंश बचाउन
फ्याँकिदिए बाहिर नै उसकन
दिग्दिगन्तको परिधिसम्म ।
अनि अलकत्रा त्यहाँ पग्लियो
जहाँ जँड्याहा पछारिएथ्यो
देखिन्थ्यो पाङ्ग्राको डोब
रौं-प्रमाणले मात्र नछोई
शरीरनेरै टक्क रोकियो ।
हल्लाएर हात सबै जन
सुस्त अगाडि बढे तैरदैं
बटुली करमा प्रकाशपुञ्ज
तृणको कालो पंख लतार्दै ।

автобус № 21
продолжил бесконечный маршрут
к конечной остановке

ЛЯГУШКА

В зоопарке у Баррикадной
Долгие годы
Сидит на камне
Царевна-лягушка

Никто не пошлет ей стрелу
Вокруг зоопарка высокие стены
А с луком и стрелами
На территорию вход воспрещен

В зоопарке много народу
Ходит-бродит вокруг лягушки
Точно знают: она царевна
Но никто ее не целует

Слишком сложно теперь с царевной
А Иван-дурак подметает землю в вольерах
Он глупец, говорит лягушка,
Продолжая сидеть на камне.

आधा घन्टा समय बितेपछि
महिलाको अनुरोध सुनेर
टक्क रोकियो बस तत्कालै,
पायक पर्ने थियो बिसौनी
बहुसंख्यक यात्रुकै निम्ति ।
उत्री बसको भरेङबाट
सबै खेतमा झटपट लागे,
बिस्तारै जब सबै भित्रिए
एक्काइस नम्बरको बस त्यो
अनन्त यात्रापथमा दगुर्‍यो
लक्ष लिई अन्तिम बिसौनी ।।

भ्यागुती-मैयाँ

चिडियाखाना मस्कोको छ
बार्रिकादनी मेट्रोनेर,
राजकुमारी भ्यागुती-मैयाँ
बसिन् बेञ्चमा छक्क परेर ।

त्यहाँ पुगेन वाण कसैको,
बार छिचोली वरिपरि अग्लो ।
चिडियाखानाभित्र त लान
मनाही नै छ धनुष र वाण ।।

घुम्छन् चिडियाखानाभित्र
मान्छेसंगै भ्यागुती-मैयाँ ।
‘हुन् ती राजकुमारी’ भन्छन्,
चुम्न त क्वै पनि तयार हुन्नन् ।।

दुःखी राजकुमारी अहिले,
फुर्सद पाउँछ इभान कहिले ?
‘मूर्ख-इभान छ व्यस्त काममा’
भन्छिन् मैयाँ बसी बेञ्चमा ।।

БОРОДИНО

Москва
Так много
Или мало

Москва тихохонько лежала
Москве буквально не спалось
В ней сердце булькало
Дрожало
Над площадью из трех вокзалов
Летало брызгало визжало
И землю видело насквозь

Москва невольно повернулась
Понтонами мостов прогнулась
И сердце ей отозвалось.

बोरोदिनो

मस्को !..
धेरै हो कि थोरै !

मस्को बस्थ्यो चुप्प भएरै ।
मानौं सुत्दै सुतेन मस्को
मुटु धुक्धुक भै काम्यो उस्को ।।

तीन रेलको जङ्सनमाथि
गुडुडुडु गर्दै उडेर आयो ।
जमीन स्वाट्टै मुन्तिर देख्यो
मस्कोले तब कोल्टे फेर्‍यो ।।

पुलको नौका-सेतु उफ्रियो ।
तुरुन्त मुटुको उत्तर आयो ।।

लाल मैदान – रूसको राजधानी मस्कोको केन्द्रमा क्रेमलीनअगाडि अवस्थित ढुङ्गा छापिएको विशाल चोक । रूसी भाषामा 'क्रास्नी' को अर्थ 'रातो' मात्र होइन, 'राम्रो' पनि हुन्छ । तसर्थ रूसी भाषामा 'क्रास्नी प्लोश्श्याद' भनिने केन्द्रीय मैदानको सही नाम 'सुन्दर चोक' हो ।

समाधिगृह – लालमैदानमा सन् १९१७ को समाजवादी क्रान्तिका नेता र सोभियत संघका संस्थापक भ्लादिमिर इल्यिच लेनिन (वास्तविक थर पल्यानोभ) को सन् १९२४ मा देहान्त भएपछि उनको शव सुरक्षित राख्न बनाइएको 'माब्जोलेइ' । लेनिनको शव अद्यापि त्यहाँ सुरक्षित राखिएको छ र देशविदेशका मानिसहरू त्यसको अवलोकनार्थ त्यहाँ पुग्दछन् ।

लोब्नी – लालमैदनको एक कुनामा रहेको गोलाकार डबली । जारको आदेश सुनाउन बनाइएको यो डबली रूसी भाषामा 'लोब्नोय मेस्तो' भनिन्छ । त्यहाँबाट सुनाइएको जारको आदेश 'पक्रेर' घोडचढी हुलाकीले विशाल रूस साम्राज्यका विभिन्न इलाकाहरूमा पुर्‍याउने हुनाले डबलीले 'पक्रने ठाउँ' भन्ने अर्थ लाग्ने नाम पाएको हुनुपर्दछ ।

गुम – रूसी भाषामा 'राजकीय विभागीय पसल' भनिने लालमैदानको अर्को किनारामा जारकालीन रूसमै निर्मित तीनतले विशाल भवनमा रहेको पसलको छोटकरी रूसी नाम ।

रसिया – सोभियतकालमा हाल जाराद्ये पार्क रहेको स्थानमा 'रसिया' भनिने चारखाले होटल रहेको थियो । त्यस विशाल भवनमा दुइटा चलचित्रकक्ष, एउटा विशाल कन्सर्टहल, केही रेष्टुरा र प्रत्येक दोस्रो तलामा क्याफेसहित ६ हजार मानिस बस्ने क्षमता भएको त्यो होटल भत्काएर हाल पार्क बनाइएको छ ।

बियौंजा ('भोजपत्रवृक्ष') – सोभियत कालमा परदेशीहरूलाई मात्र विदेशी मुद्रामा मालसामान बेच्नका लागि खोलिएको पसलको नाउँ ।

जाराद्ये – लालमैदाननेरै रहेको मस्कोको प्राचीन इलाका । हाल त्यहाँ कन्सर्टहल आदि भएको आधुनिक पार्क बनाइएको छ ।

शेरेमेत्येभो – मस्कोको चार नागरिक विमानस्थलमध्ये एउटा अन्तर्राष्ट्रीय विमानस्थल । त्यसलाई हालसालै जनमतको आधारमा मस्कोमा जन्मेका रूसी महाकवि अलेक्सान्द्र पुश्किनको नामले विभूषित गरिएको छ ।

भ्यागुती-मैयाँ – नेपाली दन्त्यकथाकी बाँदर्नी-मैयाँ जस्तै रूसी लोसकथाकी नायिका ।

Лариса ЧЕРКАШИНА

ПЛАЧ ПО ПУШКИНСКОЙ МОСКВЕ

Давным-давно нет дома на Большой Никитской, где жила невеста Пушкина юная Натали Гончарова и куда приходил свататься поэт. Старинный дом снесен еще в конце позапрошлого века за ветхостью, а на его месте выстроен изящный каменный особняк. Ныне в нем – посольство Королевства Испании.

Знаю, что нет ныне и дома Екатерины Ушаковой, московской красавицы с темно-голубыми глазами и пепельными косами, страстно влюбленной в Пушкина, – светская молва нарекла ее невестой русского гения. И все же еду на Пресню, хоть взглянуть, ради чего стоило разрушать (если вообще уместно об этом говорить!) одно из достопамятных мест столицы, так прочно соединенным с именем Пушкина.

Адрес несуществующей ушаковской усадьбы известен: улица Заморёнова, дом 16, – всего в пяти минутах ходьбы от метро «Краснопресненская».

...Типовая кирпичная «пятиэтажка», не отмеченная даже скромной архитектурной мыслью. Нет поблизости ни вековых лип, ни старинных особняков – ничего, чтобы хоть чем-то напоминало о давно ушедшей жизни. Все обычно: цветочные горшки на подоконниках, развешенное на балконах белье, белые тарелки антенн...

Во дворе судачат на лавочке престарелые приятельницы. Обращаюсь к ним с вопросом:

– А не припомните ли двухэтажного дома с колоннами?

– Так ведь тут по всей улице сплошь барские дома стояли…

Конечно же, ни о доме Ушаковых, ни о его былых хозяевах обитательницы «пятиэтажки» и не слышали. Но в том, не столь уж далеком 1964-м, должны же были знать «отцы города», подписывая смертельный приговор старинному особняку, что за необычный был тот дом! И сколько же можно насчитать в те годы подобных невосполнимых потерь…

Осталась лишь фотография старого дома, вероятно, одна из последних, – перед самым его сносом. Уцелел и хранящийся в московском архиве план ушаковской усадьбы.

Двухэтажный особняк своим парадным фасадом – шестиколонным портиком – выходил на Среднюю Пресню, вход же был со двора. За домом начинался небольшой, но прекрасный сад, посередине которого высился каменный грот, а в дальнем углу сада – беседка.

В 1821 году статский советник Николай Васильевич Ушаков перебрался со своим семейством из Тверской губернии в Москву, где и поселился на Пресне. Тогда Пресня, считавшаяся городской окраиной, была одним из любимых мест прогулок москвичей, так называемых «Пресненских гуляний».

Здесь были насажены великолепные цветники, сооружены водопады, построены затейливые беседки, и дважды в неделю играл оркестр. На Пресненских гуляньях москвичи не раз встречали и Пушкина вместе с очаровательной Катенькой Ушаковой.

По счастью, сохранились старинные литографии, где Пресненские пруды представлены во всей их красе; с горбатыми мостиками, соединявшими их берега. Когда-то, чтобы добраться до Ушаковых,

Пушкин, – то в экипаже, а то верхом, – должен был обязательно проехать по одному из них...

От былого великолепия остались ныне лишь небольшие пруды в зоопарке, густо заселенные птичьим народом. И даже историческое название улицы, которая так много значила в жизни поэта, – Средняя Пресня – не уцелело: она переименована в честь рабочего-большевика Трофима Заморёнова.

Было грустно бродить вкруг безликих «пятиэтажек», – почти машинально я свернула в первый же переулок. И была щедро вознаграждена!

Малый Предтеченский, так он назывался, вел к храму. Храм был красив и величественен, весь он словно сиял – и первозданной белизной стен, украшенных небесно-голубыми медальонами с ликами святых, и золотом крестов. От собора отходил еще один переулок – Большой Предтеченский, по обеим сторонам которого выстроились аккуратные деревянные домишки. Каким чудом уцелели они здесь, в самом сердце Москвы? Разгадка оказалась проста: в одном из них, сплошь в резном деревянном кружеве, как свидетельствовала мемориальная доска, располагался когда-то ревком, в другом – «питательный пункт восставших» дружинников. А вот храм Рождества Св. Иоанна Предтечи (отсюда и название здешних переулков) счастливо уцелел в смутные годы безвременья. И даже службы в нем так ни разу не прекращались с самого начала его основания – семнадцатого столетия!

Известно имя архитектора – Федор Шестаков. Но именно он возглавлял и строительство храма Большого Вознесения, приходского храма семьи Гончаровых, того самого, где в феврале 1831-го венчался поэт.

И над головой невесты, Натали Гончаровой, держали брачный серебряный венец, украшенный образком-медальоном... Святой Екатерины! Имена

двух соперниц каким-то причудливым образом соединились...

Вот удивительно – домов, родовых гнезд двух известных московских семейств давным-давно нет и в помине, а храмы, ревностными прихожанами которых были члены этих семей, стоят и поныне.

Бывал ли в Предтеченском храме Александр Сергеевич? Неужели он и впрямь ни разу не заглянул в старинный храм на Пресне, что всего-то в нескольких минутах ходьбы от ушаковского дома?!

Вернемся в самое счастливое время для Екатерины Ушаковой – в весну 1827 года. Тогда она любила и была любимой.

Когда я вижу пред собой
Твой профиль и глаза, и кудри золотые,
Когда я слышу голос твой
И речи резвые, живые –
Я очарован, я горю...

Под стихотворными строками рукою Пушкино проставлена дата: «3 апреля 1827». В тот день Катеньке исполнилось восемнадцать лет! И по счастливой случайности семейное торжество совпало с величайшим православным праздником – Светлым Воскресеньем!

И можно с уверенностью предположить, что поэт, приехавший к Ушаковым в гости, прежде со всем семейством побывал на утренней пасхальной службе, а после уж приглашен был и на праздничный обед, данный в честь именинницы. Что косвенно подтверждает и упоминание в поэтическом посвящении Катеньке, пусть и в полушутливом контексте, слов молитвы, произносимых в конце церковной литургии.

И, вне всяких сомнений, храм на Пресне навеки соединил имя одной из прихожанок, Екатерины Ушаковой, с именем русского гения Александра Пушкина. Нет, не венчальным обрядом. Памятью сердца.

लरिसा चेर्काशिना
पुश्किनेली मस्कोको सम्झना

बल्साया निकित्स्काया सडकमा त्यो घर नभएको धेरै भइसक्यो जहाँ पुश्किनकी दुलही नवयुवती नातालिया गोन्चारोभा बस्तथिन्। पुश्किन मगनीको निम्ति त्यसै घरमा आएका थिए। परारौं शताब्दीको अन्त्यतिर नै त्यो पुरानो घर जीर्ण भइसकेको भनेर भत्काइएको थियो। त्यसको ठाउँमा चिटिक्क परेको ईंटको पक्की बङ्गला बनाइएको थियो। हाल त्यस भवनमा स्पेनको राजदूतावास रहेको छ।

मलाई थाहा छ, अहिले त खरानी रङ्गको केश भएकी गाढा नीलो नयनकी मस्कोकी परम्सुन्दरी एकातेरिना उशाकोभाको घर पनि छैन। उनी पुश्किनप्रति अत्यन्त आसक्त थिइन्। उनी नै रूसी प्रतिभाकी दुलही हुन् भन्ने निकै गाइँगुइँ चलेको थियो। जे होस्, मस्कोको एउटा दर्शनीय स्थलमा पुश्किनको नामसित सम्बन्धित यस्तो ऐतिहासिक घर किन भत्काइएको होला भनी सोच्दै यसो हेर्न भनी म प्रेस्न्यामा पुग्ने गर्दछु।

अब अस्तित्वमा नरहेको उशाकोभ परिवारको बङ्गलाको ठेगाना हो – '१६ नम्बरको घर'। भूमिगत रेलबिसौनी 'क्रास्नोप्रेसेन्स्काया' बाट हिँडेर ५ मिनटमै त्यहाँ पुगिन्छ।

...सामान्य पाँचतले ईंटको घरमा वास्तुकलाको सानो झल्को समेत पाइँदैन। त्यसको आसपासमा न युगौं पुराना लाइमका रूखहरू छन्, न त पुराना बङगलाहरू नै छन्। विगत जीवनको किञ्चित् सम्झना गराउने कुनै कुरा पनि त्यहाँ देख्न पाइँदैन। झ्यालको तख्तामा राखिएका फूलका गमलाहरू, बार्दलीमा झुण्ड्याइएका लुगाफाटाहरू, टेलिभिजन एन्टेनाका सेता रिकापीहरू त्यहाँ सबै कुरा सामान्य खालका छन्...।

आँगनमा रहेको बेञ्चमा बसेर अँधबैंसे संगिनीहरू गफ गर्दै थिए। मैले उनीहरूतिरै प्रश्न तेर्स्याएँ -

'तपाईंहरूलाई स्तम्भदार दुईतले बङ्गलाको सम्झना छ कि ?'

'उहिले यहाँ सडकभरि नै धनीमानीहरूका बङ्गलाहरू नै त थिए नि...'

उनीहरूलाई न उशाकोभ परिवारको बङ्गलाको हेक्का थियो, न त पाँचतले घरमा बस्ने सुन्दरीकै बारेमा सुनेका थिए। यो धेरै पहिलेको कुरा थिएन। सन् १९६४ मा त हो, नगर-प्रशासनले पुरानो बङ्गलालाई 'मृत्युदण्ड' दिने फैसला गरेको ! के 'नगरपिता' भनाउँदाहरूलाई त्यस असाधारण घरको बारेमा थाहा थिएन होला र ? ती वर्षहरूमा

यस्ता अपूरणीय क्षति कति भए होलान्, कसलाई के पत्ता !..

अब त पुरानो घरको फोटो मात्र बाँकी रहेको छ। त्यो पनि घर भत्काइनुभन्दा केही समय पहिले खिंचिएको हुनुपर्दछ। मस्कोको अभिलेखागारमा उशाकोभ परिवारको बङ्गलाको खाकाचित्र पनि सुरक्षित रहेको छ। मध्य प्रेस्न्यातर्फ छवटा स्तम्भयुक्त आकर्षक मोहडासहितको दुईतले बङ्गलाको मूल ढोका चाहिं आँगनतिर थियो। बङ्गलाको पछाडि सानो तर चिटिक्क परेको बगैंचाको बीचमा ढुङ्गाको कृत्रिम ओढार र बगैंचापल्तिरको कुनामा चाहिं खुला आरामघर। राजकीय सल्लाहकार निकोलाइ भासिल्येभिच उशाकोभ सन् १८२१ मा त्वेर गुभेर्नियाबाट सपरिवार मस्को आएर प्रेस्न्यामा घरजम गरेर बसे। त्यतिखेर प्रेस्न्या मस्को नगरको काँठ मानिन्थ्यो र मस्कोवासीहरू त्यहाँ पुगेर डुल्न रुचाउँथे। यस्तो घुमघामलाई 'प्रेस्न्याको घुमफिर' भनिन्थ्यो।

त्यहाँ क्यारीहरूमा राम्रा राम्रा फूलका बोटहरू रोपिएका थिए, कृत्रिम झरनाहरू बनाइएका थिए, आराम गर्ने नाना थरीका हावाघरहरू ठड्याइएका थिए, हप्ताको दुईपटक त ब्याण्डबाजा टोलीको कार्यक्रम पनि आयोजना गरिन्थ्यो। प्रेस्न्याको घुमफिरमा वेलाबखतमा मनमोहिनी एकातेरिना उशाकोभलाई साथमा लिएर डुल्न आएका पुश्किनसँग समेत मस्कोवासीहरूको जम्काभेट हुने गरेको थियो।

सौभाग्यवश पुराना लिथोग्राफीहरू सुरक्षित रहन गएका छन्। तिनमा गुम्बजाकार पुलहरूसहितका प्रेस्न्याका पोखरीहरूको मनोरम दृश्यहरू अङ्कित छन्। कुनै समयमा उशाकोभ-परिवारको घरसम्म पुग्न बग्गीमा चढेर होस् वा घोडामा सवार भएर होस् पुश्किनले ती पुलहरूमध्ये कुनै न कुनै पुल अवश्य नै पार गर्नुपर्दथ्यो...। उहिलेको भव्यताको चिन्हस्वरूप केही साना पोखरीहरू अहिले पनि मस्कोको चिडियाखानाको हातामा रहेका छन् र त्यहाँ थरीथरीका जलचरीहरू देख्न पाइन्छ। रूसी महाकविको जीवनमा निकै महत्त्व राख्ने मध्य प्रेस्न्या सडकले चाहिं बल्शेभिक मजदूर त्रोफिम जामोरेनोभको नाम पाएको छ।

उहिले 'पाँचतले घरहरू' रहेको ठाउँवरिपरि घुम्दा निकै नरमाइलो लागेर म थाहै नपाई नजिकैको गल्लीमा छिर्न पुगें। यसबाट मलाई राम्रै भयो !

मालिइ प्रेद्तेचेन्स्की भनिने त्यस गल्लीले मलाई एउटा चर्चनेर पुर्‍यायो। चर्च निकै सुन्दर र भव्य थियो। सन्तहरूको मुहारअङ्कित आकासे रङ्गका वृत्ताकार चित्र र सुनौला क्रसहरूले सिंगारिएको त्यसको सेतो भित्ता प्रारम्भिक चहकले झकमक्क चम्किरहेझैं प्रतीत हुन्थ्यो। त्यस चर्चबाट बोल्सोइ प्रेद्तेचेन्स्की नामक अर्को एउटा गल्ली पनि तेर्सिरहेको थियो। त्यसको दुवै बगलमा चिटिक्क परेका काठका घरहरू लाम लागेर उभिइरहेका थिए। मस्कोको मुटुनेरै ती कसरी सुरक्षित रहन गएका होलान् ? यसको रहस्य ठम्याउन गाह्रो परेन। काष्ठकलाको नमूनाझैं लाग्ने एउटा घरको भित्तामा

सांस्कृतिक स्मारकको प्रमाणपत्रको रूपमा एउटा स्मृतिपट टाँगिएको थियो । त्यसबाट कुनै समयमा त्यस घरमा क्रान्तिकारी समिति रहेको प्रष्ट भयो भने अर्को घर चाहिं 'विद्रोही स्वयंसेवकहरूको भोजनालय' रहेछ । क्रान्तिका वर्षहरूको अन्योलबाट समेत नमासिएका त्यहाँका गल्लीहरूको नाम चाहिं सन्त इओआन्न प्रेद्तेच मन्दिरबाट रहेको थाहा पाइयो । सत्रौं शताब्दीमा त्यस मन्दिरको स्थापना भएदेखि यता कहिल्यै पनि त्यसमा पूजापाठ रोकिएको रहेनछ !

त्यस मन्दिरका वास्तुकार फ्योदोर शेस्ताकोभको नाम सुप्रसिद्ध छ । उनले नै बोल्शोया भोज्नेसेनिया मन्दिरको निर्माणको समेत नेतृत्व गरेका थिए । गोन्चारोभ परिवार त्यसै मन्दिरको यजमान थियो र सन् १८३१ को फेब्रुअरी महिनामा त्यसै मन्दिरमा महाकविको विवाहाभिषेक पनि भएको थियो ।

पुश्किनकी दुलही नातालिया गोन्चारोभाको शिरमाथि विवाहको शुभमूहुर्तमा प्रयोग गरिने वृत्ताकार देवप्रतिमाले सिगारिएको चाँदीको मुकुट राखिएको थियो... त्यस मुकुटमा एकातेरिना देवीको चित्र अङकित थियो । आश्चर्यजनक रूपमा वरका लागि दुई प्रतिद्वन्दीको नामको मिलन हुनु संयोग नै भन्नुपर्दछ !..

आश्चर्य नै हो !.. मस्कोका दुई सुपरिचित परिवारको पुर्खेउली घरहरू उहिले नै विस्मृतिको गर्भमा विलीन भइसके, तर उनीहरूको पारिवारिक यजमानी मन्दिरहरू भने अद्यापि ज्यूँका त्यूँ खडा छन् !

के अलेक्सान्द्र सेर्गेइभिच पुश्किन प्रेद्तेचेन्स्की गल्लीमा अवस्थित मन्दिरमा पसेका थिए होलान् ? के उनले एक पटक पनि उशाकोभ परिवारको घरनजिकै प्रेस्न्यामा अवस्थित प्राचीन मन्दिरको अवलोकन नगरेको हुन सक्छ ?!

एकातेरिना उशाकोभको निम्ति अत्यन्तै सुखद समय सन् १८२७ को वसन्ततिर फर्कौं । त्यतिखेर उनी प्रेमपाशमा बाँधिएकी थिइन् र प्रेमिका पनि बनेकी थिइन् ।

आफ्नो सामु देख्छु म जहिले
मुहार, नेत्र र बुल्बुली तिम्रो,
सुन्दछु तिम्रो स्वर पनि जहिले
सजीव मीठा कुरा म तिम्रो,
मुग्ध म हुन्छु, पागल बन्छु...

यस कविताका पंक्तिहरूमुन्तिर पुश्किनको हस्ताक्षरमा मिति लेखिएको छ – '३ अप्रील १८२७' । त्यस दिन एकातेरिनालाई १८ वर्ष पूरा भएको थियो ! अनि पारिवारिक उत्सवकै दिन अर्थाडक्स चर्चको स्वेत्लिइ भस्क्रेसेन्ये ('पवित्र जन्म') भनिने महान पर्व समेत पर्नु सुखद आकस्मिकता नै हो भन्नुपर्दछ !

उशाकोभ परिवारको घरमा पाहुना बन्न पुगेका महाकवि पक्कै पनि परिवारका सबै सदस्यहरूको साथमा सर्वप्रथम इस्टरपर्वको प्रातःकालीन पूजापाठमा सरीक भएपछि

एकातेरिनाको जन्मोत्सवको उपलक्ष्यमा आयोजित उत्सवीय भोजका लागि निम्त्याइएको अनुमान गर्नु एकदमै सही हुनेछ । परोक्ष रूपमा यस अनुमानको पुष्टि एकातेरिनाप्रति समर्पित कविताबाट पनि हुन्छ, यद्यपि त्यसमा चर्चको प्रार्थनाको समाप्तिपश्चात् अन्त्यमा पाठ गरिने स्तोत्रका शब्दहरूको सन्दर्भमा किञ्चित् व्यङ्ग्य झल्केको छ ।

निसन्देह नै प्रेस्न्यामा रहेको मन्दिरले त्यसको एक नारी यजमान एकातेरिना उशाकोभालाई रूसी काव्यका विभूति अलेक्सान्द्र पुश्किनको नामसित जोडिदिएको छ । अहँ, विवाहाभिषेकको मुकुटले होइन, हृदयको भावनाले ।

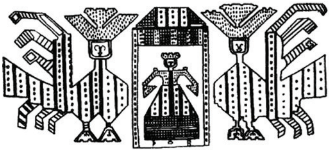

नेपाली स्रष्टा-परिचय

अधिकारी, दिनेश (पूरा नामः दिनेशहरि, जन्मः ०७.१२.१९५९, बानेश्वर, काठमाडौं) – कवि, गीतकार। कानूनमा स्नातक र राजनीतिशास्त्रमा स्नातकोत्तरको डिग्री प्राप्त। सन् १९८१ देखि नेपाल सरकारको सेवामा प्रवेश गरी सन् २०१४ मा सचिवको पदबाट सेवा निवृत्त। सन् १९७६ बाट प्रकाशन प्रारम्भ गरी 'अन्तरका छिटाहरू' (१९८०), 'धर्तीको गीत' (१९८७), 'आदिम आवाज' (१९८८), 'अतिरिक्त अभिलेख' (१९९९) र 'सीमान्त सपना' (२०१०) कविता सङ्ग्रहहरु र 'अविराम यात्रा' (१९९१), 'आफ्नै मनः आफ्नै आँगन' (१९९७), 'मन र मोडहरू' (२००६) र 'म बिर्सूं कसोरी' (२०१८) गीत सङ्ग्रहहरुका साथै 'इन्द्रजात्रा' (१९९४) र 'भरियाको भूगोल' (२०१७) खण्ड काव्यहरु र 'जङ्गलको कथाः जङ्गलको व्यथा' (२००६) गीति-नाटक प्रकाशित। संस्मरणात्मक कृति 'तस्बिरको कथा' (२०७४) का अतिरिक्त गीत र कविताका १६ वटा एल्बमहरूको प्रकाशन तथा करिब ५०० गीतहरु प्रसारित। उनका कविताहरूको अनुवाद अङ्ग्रेजी भाषामा 'Mode of Life' (२००९) र हिन्दीमा 'सम्वेदना के स्वर' (२०१५) शिर्षकका दुई सङ्ग्रहहरूमा प्रकाशित छन्। उनका सिर्जनाहरू विभिन्न तहका पाठ्यपुस्तकमा समाविष्ट छन्। प्रतिष्ठित साहित्यक पुरस्कारमध्ये 'मोती पुरस्कार' (१९९२), 'साझा पुरस्कार' (१९९४), 'मदन पुरस्कार' (१९९९), 'छिन्नलता गीत पुरस्कार' (२००२) एवं गीत लेखनका लागि 'बिन्ध्यवासिनी लाइफ टाइम अचिभमेन्ट अवार्ड' (२०१४) आदिका साथै 'सर्वनाम सम्मान' (१९९९), 'नारायणगोपाल स्मृति सम्मान' (२०१८), 'नातिकाजी विशेष सङ्गीत सम्मान' (२०१५), 'गोपालप्रसाद रिमाल काव्य-सम्मान' (२०१९) आदिबाट सम्मानित कवि अधिकारीलाई 'सम्मानित श्रेणीको गीतकार' को मान्यता समेत प्राप्त छ। राजकीय विभुषणमध्ये उनी 'सुप्रवल गोरखादक्षिणबाहु' (१९९८), 'विख्यात त्रिशक्तिपट्ट' (२००३), 'सुप्रवल जनसेवाश्री' (२०१४) तथा राष्ट्रपतिबाट हस्तान्तरण गरिने 'सुकीर्तिमय राष्ट्रदीप' (२०१९) बाट विभूषित छन्।

आचार्य, प्रभा (जन्मः २४.०६.१९६२, दार्जीलिङ्ग) – कवयित्री र गीतकार, नेपाली साहित्यमा स्नातकोत्तर, विभिन्न सामाजिक संस्थाहरूमा संलग्नता। प्रकाशनः दमक (झापा स्थित 'हिमा-ज्योति' विद्यालयको छात्रा छँदै प्रथम कविता (१९७७), गीत-अल्बम 'तिम्रो पर्खाइमा' (१९९४), कवितासङ्ग्रह 'परदेशबाट' (२००५), 'असह्य पीडा'

(२०१२), ‘छहारी’ चलचित्रका लागि गीत-रचना आदि। सम्मानः ‘नजकविता सम्मान’ (१९९७), साहित्य-कला सङ्गम’ (२००१), ‘नवरङ्ग साहित्यक प्रतिष्ठान’ (२००३) आदि।

आचार्य, चन्द्रकान्त (जन्मः १५.०५.१९५१, वाङ्गला, अर्घाखाँची) – साहित्यकार, सामाजिक कार्यकर्ता, मस्को गेओदेजी, आएरोफोटोग्राफी एण्ड कार्टोग्राफी इन्जिनियरिङ्ग इन्स्टीच्युटबाट इन्जिनियरको डिग्री (१९७३) प्राप्त विशेषज्ञ। नेपाल-रूस साहित्य समाजका उपाध्यक्ष, रूसबाट उच्चशिक्षाप्राप्त विशेषज्ञहरूको संस्था ‘मित्रकुञ्ज’ का अध्यक्ष (२०१३-२०१४) समेत रही यस सङ्गठनको कार्यमा सकृय संलग्नता, सरकारी सेवाबाट अवकाशपश्चात् Masina Continental Associates (P) Ltd का निर्देशक । प्रकाशित कृतिः उपन्यासहरूमा ‘ज्वाला’ (२०००), ‘मित्रता’ (२००५, अङ्ग्रेजीमा पनि अनूदित), ‘दास-मुक्ति” (२००७), न्युयोर्क सुन्दरी’ (२०११), नियात्रा-सङ्ग्रहः ‘सम्झनाको क्षितिजबाट’ (२००४), ‘कल्पनाको देशमा यात्रा’ (२०११)। उनका कथा र उपन्यासबाट केही अंश रूसी भाषामा पनि प्रकाशित छन्।

गिरी, बानिरा (जन्मः ११.०४.१९४६, खर्स्याङ्ग, दार्जिलिङ्ग) – कवयित्री, आख्यानकार, त्रिभुवन विश्वविद्यालयबाट गोपालप्रसाद रिमालको काव्यसम्बन्धी शोधका लागि विद्यावारिधिको प्राज्ञिक उपाधि प्रदान । कृति-प्रकाशनः १० ओटा पुस्तकहरूमध्ये कवितासंग्रहहरूमा ‘एउटा जिउँदो जङ्गबहादुर’ (१९७४), ‘जीवन थायमरु’ (१९७८), ‘काठमाडौं – काठमाडौं’ (२०११), आत्म-काव्य ‘मेरो आविष्कार’ (१९९६, अङ्ग्रेजीमा पनि प्रकाशित), उपन्यास ‘कारागार’ (१९७९, अङ्ग्रेजी र हिन्दीमा पनि प्रकाशित) र ‘निर्बन्ध’ (१९८६), निबन्ध सङ्ग्रह ‘पर्वतको अर्को नाउँ पार्वती’ (२०११), जङ्गल जङ्गल’ (२०१२), नियात्रा ‘रोकिनेले आकार दिन सक्दैन’ (२०१४) आदि। अङ्ग्रेजी भाषामा पनि २ ओटा कवितासङ्ग्रह प्रकाशित। पुरस्कारः Japan Foundation Asia Center बाट जापानका तीन सहरहरूमा एक कविको कविता-वाचनका लागि “Takeshi Kaiko Memorial award” (१९९७), काव्यात्मक उपन्यास ‘शब्दातीत शान्तनु’ का लागि ‘साझा पुरस्कार’ (२०००), ‘राष्ट्रिय कला-श्री पुरस्कार’ (२०१४), ‘महाकवि देवकोटा पुरस्कार’ (२०१७) आदि। सम्मानः विभिन्न अभिनन्दनका साथै ‘नेपाली साहित्यका विश्व नारी रत्न’ उपाधि (२०१४) र प्रधानमन्त्री सुशिल कोइरालासहितको सहभागितामा ‘डा. बानिरा गिरी रथारोहण समारोह’ (३०.०५.२०१४) सम्पन्न। राजकीय पदक ‘सुप्रवल गोर्खा दक्षिण बाहु’ (१९८५) बाट विभूषित। ताशकन्द (उज्बेकिस्तानको राजधानी) मा आयोजित अफ्रो-एशियाली लेखक सम्मेलन (१९७६) मा सहभागितापश्चात् त्बिलिसी (जर्जिया), लेनिनग्राद (सेन्ट-

पिटर्सबुर्ग) र मस्को यात्रा । उनका कविताहरू हिन्दी, उर्दु, जापानी र अङ्ग्रेजीमा प्रकाशित छन् ।

लामिछाने, जीबा (जन्मः १३.०२.१९६७, पद्मपुर, चितवन) – उद्यमी, सामाजिक कार्यकर्ता । मस्को निर्माण इन्जिनियरिङ्ग शिक्षण संस्थानबाट निर्माणकर्ता इन्जिनियरको डिग्रीप्राप्त (१९९२), नेपाल सीआईएस रूस उद्योगवाणिज्य संघको कोषाध्यक्ष (१९९५ देखि) र उपाध्यक्ष (२००१ देखि), गैरआवासीय नेपाली संघ अन्तर्राष्ट्रिय समन्वय परिषद्को अध्यक्ष (२०११-२०१३) र हाल यस संस्थाका संरक्षक, रूस-नेपाल सहयोग तथा मैत्री समाजको संरक्षण परिषद्को सदस्य, नेपालका प्रधानमन्त्रीका आर्थिक सल्लाहकार (२०१२-२०१३ र २०१८ देखि), साहित्यिक पुरस्कार 'पद्म-श्री' का संस्थापक, 'खेमलाल हरिकला लामिछाने सामाजिक कल्याण कोष' का संस्थापक । दुई ओटा नियात्रा-सङ्ग्रह प्रकाशनः 'सरसरती संसार' (२०१६) र 'देश-देशावर' (२०२०) । नेपालको राजकीय आभूषण 'प्रबल जनसेवा-श्री पदक' बाट विभूषित ।

मल्ल, अशेष (जन्मः ०३.०४.१९५५, धनकुटा) – कवि, नाटककार, कलाकार, सडक नाटकका अभियन्ता, 'सर्वनाम् नाट्यसमूहका संस्थापक-निर्देशक। त्रिभुवन विश्वविद्यालयमा साहित्यका प्राध्यापक र नेपाल टेलिभिजन ब्युरोका सदस्य (सन् १९९० को दशक) । प्रकाशनः 'अज्ञात प्रदेशहरूमा', 'निरन्तर-निरन्तर', 'एक्लो एकान्त' (कवितासङ्ग्रह), तुवाँलोले ढाकेको वस्ती', 'कालो आकाश', 'सडकदेखि सडकसम्म', 'अनादि क्रम' (नाटकहरु), 'तेस्रो आयामः सैद्धान्तिक चिन्तन र विवेचना', 'सडक नाटकः सिद्धान्त, सिर्जना र प्रस्तुति', 'सडक नाटक' (सैद्धान्तिक ग्रन्थ), 'दयावीरसिंह कंसाकार' (जीवनी), 'समकालीन नेपाली नाटक' (सम्पादन) । पुरस्कार र सम्मानः 'साझा पुरस्कार', 'युवा वर्ष मोती पुरस्कार', 'मुस्याचु पुरस्कार', 'गोपीनाथ अर्याल पुरस्कार', 'मनश्री पुरस्कार', सिर्जनशिल पुरस्कार', 'उत्कृष्ट नाटककार पुरस्कार', उत्कृष्ट निर्देशक पुरस्कार' ।

सुब्बा, बिक्रम (वास्तविक नामः डिल्लीबिक्रम इङ्गवाबा, जन्मः ०३.०१.१९५३, फिदिम, पाँचथर) – कवि, किरात संस्कृतिका अनुसन्धेता । प्रकाशनः (१९६९ देखि), 'शान्तिको खोजमा' (खण्डकाव्य), 'कविको आँखाः कविको भाका', 'सगरमाथा नाङ्गै देखिन्छ' (कवितासङ्ग्रह), 'सुम्निमा-पारुहाङ्ग' (मुन्धुम काव्य), 'बिक्रम सुब्बाका कविता र गीतहरू' आदि। सबै प्रकारका पुरस्कार र सम्मान ग्रहण नगर्ने निर्णय ।

श्रेष्ठ, बालगोपाल (जन्मः १५.०६.१९६०, साँखु, काठमाडौं) – कवि, नेपाली संस्कृतिका अन्वेषक, त्रिभुवन विश्वविद्यालयबाट राजनीतिशास्त्रमा स्नातकोत्तरपश्चात् नेपाल-एशिया अनुसन्धान केन्द्रमा प्राध्यापन, लेइडेन विश्वविद्यानयबाट मानवशास्त्रमा विद्यावारिधिको प्राज्ञिक उपाधि प्राप्तिपश्चात् त्यसै विश्वविद्यालयमा राजनीतिशास्त्रका प्राध्यापक, लेईडेन (नीदरल्याण्ड) स्थित अन्तरराष्ट्रीय एशिया अनुसन्धान संस्थानका वैज्ञानिक कार्यकर्ता र नेपाल, भारत, बेलायत र अमेरिकामा क्षेत्रगत अध्ययनका साथै अक्सफोर्ड विश्वविद्यालय (बेलायत) अन्तर्गत नृवंश सङ्ग्रहालय र मानजशास्त्र स्कूलमा अनुसन्धानरत। नेवारी, नेपाली र अङ्ग्रेजीमा कृति प्रकाशनः नेवारीमा 'हालिमालि' (निबन्ध सङ्ग्रह), 'कुलामय् थ्वयाच्वङ्गु सः' ('नेपथ्यमा घन्केको आवाज', कवितासङ्ग्रह), 'थ्व बाखँ खः, थ्व बाखँ मखु' ('यो कथा हो, यो कथा होइन', कथासङ्ग्रह), 'सक्वःदेया देवी प्याखँ' ('साँखुको देवी-नाच'), 'झीगु सक्वःदेः नेवा समाजया संस्कार, संस्कृति व धर्मकर्म मानवशास्त्र' ("The Sacred Town of Sankhu: The Anthropology of Newar Rituals, Religion and Society in Nepal", २०१२), 'सिक्किमया नेवात' ("The Newars of Sikkim: Reinventing Language, Culture and Identity in the Diaspora", २०१५), 'ख्वपः जुजुपिनि वंशावली' (इतिहास), 'बहुप्रतिभाशाली कवि गिरिजाप्रसाद जोशीया बचाहाकगु जीवनी', 'श्रीलङ्काया न्यःखँ बाखँ' ('श्रीलङ्काका दन्त्यकथा') आदि । पुरस्कार र सम्मानः केम्ब्रिज विश्वविद्यालय पुरस्कार "Frederick Williamson Memorial Fund" (२००३)।

श्रेष्ठ, तेजप्रकाश (०६.०१.१९४७, बैतडी) – साहित्यकार, त्रिभुवन विश्वविद्यालयबाट नेपाली साहित्यमा स्नातकोत्तर (१९८१), ३१ वर्षसम्म सरकारी सेवा र लेखा उपसचिवपश्चात् अवकाश, 'रामबहादुर-तेजकुमारी श्रेष्ठ स्मृतिकोष' (अध्यक्ष, २००८ देखि), 'रमेश विकल साहित्य प्रतिष्ठान' (संस्थापक-सचिव, २००६ देखि), 'नेपाल बालसाहित्य समाज' (अध्यक्ष, २०१६-२०१७), 'बालसंसार प्रा.लि.' (अध्यक्ष, २०१४ देखि), 'नेपाल लोकवार्ता तथा संस्कृति समाज' (कोषाध्यक्ष, २००४ देखि), 'सार्क लेखक तथा साहित्य संस्थापन, नेपाल च्याप्टर' (कोषाध्यक्ष, २००८ देखि), 'सुनकोशी साहित्य प्रतिष्ठान' (कार्यकारी सदस्य, १९९७ देखि), 'शोणितपुर साहित्य, संगीत तथा कला समाज' (कार्यकारी सदस्य, २००३ देखि), 'नेपाल नियात्रा समाज' (संस्थापक सदस्य, २०१५) आदि संस्थाहरूमा संलग्नता। प्रकाशनः 'बाँचेका क्षणहरु", 'हाटबजार', 'अनुभूत सत्यहरू', 'तेजप्रकाशका छानिएका कथाहरू' (कथासङ्ग्रह), 'प्रेमको स्मारक", 'संकल्प जिउँदो रहने छ' (उपन्यास), 'मात्र कवितामा बोल्छु' (कवितासङ्ग्रह), 'पाइलाका डोबहरु', 'दौडाहा घुमाउरा बाटाहरूमा', 'साँ-ग्रिला

पछ्याउँदै', 'बुर्कुसीमा रम्छ मन' (यात्रा-संस्मरण), 'अछामी लोकसाहित्य", नेपाली लोक संस्कृति, सम्पदा र परम्परा', 'नेपाली लोकवार्ताः विविध सन्दर्भ' (लोकसाहित्य), 'सिम्रौनगढ', 'शोणितपुर हो प्राचाान नाम', 'नेपाल परिचय' आदि ग्रन्थहरूका साथै नेपाली र नेवारीमा बालसाहित्यका दशौं पुस्तक । पुरस्कार र सम्मानः 'साझा बालसाहित्य पुरस्कार" (२००४), 'मैया वासु पन्त स्मृति सम्मान पुरस्कार' (२००९), 'इलोहँ ज्ञानज्योति सिरपा' (२०११), 'रमेश विकल बालसाहित्य पुरस्कार' (२०१५) आदि र 'तन्नेरी प्रतिभा सम्मान' (२००४), 'सुनकोसी सिर्जना सम्मान' (२००८), 'साहित्यकार सम्मान' (२०११), 'कविताराम बालसाहित्य सम्मान' (२०१५) आदि)। रुसी भाषामा पनि केही कृति प्रकाशित छन्।

श्रेष्ठ, कृष्णप्रकाश (जन्मः ०७.११.१९३८, चुनिखेल, शोणितपुर, थान्कोट, काठमाडौं) – साहित्यकार, पटना विश्वविद्यालयबाट स्नातक (१९५९), मस्को राजकीय विश्वविद्यालयबाट पत्रकारितामा स्नातकोत्तर (१९६६), रेडियो मस्कोबाट नेपालीमा कार्यक्रम संचालक रही प्राच्यविद्या संस्थानमा विद्यावारिधिका लागि 'नेपाली साहित्यक चिन्तन' विषयमा शोधकार्य र पछि यसै संस्थानमा वैज्ञानिक कार्यकर्ता (१९९९ देखि)। सोभियत-नेपाल मैत्री समाजको स्थापनादेखि (१९६३) सहभागिता र पछि 'नेपाल-रूस मैत्री तथा सहयोग समाज' को उपाध्यक्ष (१९९८-२००५), 'विश्वसाहित्य अनुवाद संस्थान' को संस्थापक-सम्पादक (१९६९-१९८५), 'रूस लेखक संघ' को सदस्य (१९९९ देखि), विश्व नेपाली साहित्य महासंघको केन्द्रीय सल्लाहकार (२०१४ देखि), नेपाल बालसाहित्य समाजको मानार्थ सदस्य (२००५ देखि), रसियाली हिमालय तथा तिब्बत अनुसन्धानकर्ता संघको सदस्य (२०१८ स्थापनाकालदेखि) । नेपालीमा मौलिक कृतिहरूः 'उषा-अनिरुद्ध मिलन' (नाटक), 'रूसमा नेपालको अध्ययन' (लेखसङ्ग्रह), 'रूसमा नेपालको छवि', 'स्थाननामकोष' (दुई संस्करण), 'नेपालभाषा साहित्य', नेपाली समालोचक र समालोचना' (दुई संस्करण), 'नेपाली किम्बदन्ती माला' (छन्दोबद्ध), 'सृष्टिवर्णन' (छन्दोबद्ध), 'रूसमा नेपाली वाङ्गयको विकास र महाकवि लक्ष्मीप्रसाद देवकोटाको देन', 'रसियामा नेपाली भाषासाहित्यः हिजो, आज, भोलि', 'हिन्दु अधिराज्यबाट धर्मनिरपेक्ष गणतन्त्रतिर' (लेखसङ्ग्रह), 'चुनीखेलदेखि धुलिखेलसम्म' (नियात्रा सङ्ग्रह), 'स्थाननामकोश' आदि । रूसी भाषामा मौलिक ग्रन्थहरूः 'नेपालमा पशुपक्षीको पूजा', 'नेवारी साहित्य', नेपालको साहित्यः परम्परा र आधुनिकता', 'इतिहासको परिप्रेक्ष्यमा नेपालका किम्बदन्ती र उत्सवपर्व' (शोधखोज), 'मित्रता र सहयोगको गाँठो' र 'रूस-नेपालः व्यक्ति, घटना, दस्तावेज' (नेपाल र रूसबीचको सम्बन्ध), 'रेलगाडीमा हिमालयतिर' (लेखसङ्ग्रह), 'नेपालका पुराकथा र किम्बदन्ती' (ग्रन्थ)। रूसी भाषाबाट नेपालीमा सोझै अनुवादको थालनी गर्दै अलेक्सान्द्र

पुश्किनकृत 'जिप्सी' (१९६८), इभान तुर्गेनेभको कथासङ्ग्रह 'गद्यमा कविता' (१९७०) र इभान मिनाएको 'नेपाल' (१९७१), ल्युदमिला आगानिनालिखित 'नेपालका महाकविको कथा' लगायत रूसी साहित्यका दशौं काव्य र आख्यान कृतिहरूका साथै 'राज्य र क्रान्ति' (लेनिन), 'दर्शनशास्त्रको प्रारम्भिक ज्ञान', 'राजनीतिक आर्थशास्त्र' आदि कृतिहरूसहित दशौं साहित्येतर कृतिहरूको नेपालीमा र दशौं नेपाली लेखक-कविका कृतिहरूको रूसीमा अनुवाद। नेपालीका साथै रूसी भाषामा पुस्तक सम्पादनः 'रुसी-नेपाली शब्दकोश' (१९७५), 'लक्ष्मीप्रसाद देवकोटाः सङ्कलित रचना' (सन् १९९९), 'नेपाल दुई सहस्त्राब्दीको सङ्घारमा' (लेखसङ्ग्रह, सन् २००१), प्रतिष्ठित साहित्यक पुरस्कार र सम्मानः 'जगदम्बा-श्री' (सन् २००३), 'नइ देरुनिख' (सन् २०११) र 'टेलिभिजन र रेडियोका उत्कृष्ट कार्यकर्ता', 'मैत्री कार्यमा योगदानवापत्' रूस परराष्ट्र मन्त्रालयको पदक आदि नेपाल र रूसका विभिन्न स्रष्टा-सम्मानबाट विभूषित।

НЕПАЛЬСКИЕ АВТОРЫ

Адхикари Динеш (Полное имя: Динешхари, р. 07.12.1959, Банешвар, Катманду) – поэт. Бакалавр юриспруденции и магистр искусств в области политики. Поступил на госслужбу в 1981 г. и, достигнув поста секретаря Министерства здравоохранения, вышел в оставку в 2014. Публикуется с 1976. Автор сборников стихотворений «Брызги души» (1980), «Песня земли» (1987), «Первобытный звук» (1988), «Лишние надписи» (1999), «Приграничный сон» (2010), сборников песен «Непрерывное путешествие» (1991), «Собственная душа: собственный двор» (1997), «Желания и повороты» (2006) и «Как же могу забыть» (2018), поэм «Праздник Индры» (1994) и «География носильщика» (2017), оперы «Лесной рассказ: лесная боль» (2006) и мемуаров «Повесть фотографии» (2017). Вышли 16 альбомов песен и стихов, записаны на радио более 500 песен. Издан сборник стихов «Mode Of Life» (2009, *англ. яз.*) и сборник «Голос сочувствия» (2015, *хинди*). Лауреат престижных литературных премий «Мотипураскар» (1992), «Саджха-пураскар» (1994), «Мадан-пураскар» (1999), «Чхинналата-гитпураскар» (2002) и «Bindhyavasini Life Time Achievement Award» за сочиненные им песни. Обладатель почетных грамот «Сарванам-самман» (1999), «Особый музыкальный почет им. Натикаджи» (2015), «Почет памяти Нараянгопала» (2018), «Почет поэзии им. Гопалпрасада Римала» (2919) и т.д. Награжден государственными орденами «Суправал горкха дакшин баху» («Сильнейшая правая

рука Горкхи», 1998), «Викхьят Тришактипатта» («Орден славы трехкратной силы», 2003), «Суправал Джан-сева-шри» («Высочайшее почтение за служение народу», 2014), а также вручаемым лично Президентом страны наивысшим государственным орденом «Сукиртимайя Раштра-дип» («Яркий блеск национального прославления», 2019).

Ачарья Прабха (девичья фамилия Бхаттараи, р. 24.06.1962, Дарджилинг, Индия) – поэтесса, сочиняет также песни, получила диплом магистра искусств по непальской литературе, принимает активное участие в работе общественных организаций. Первое стихотворение «Неисполненные мечты» опубликовано в 1977 г., когда она училась в школе «Хима-джоти» в Дамаке (Джхапа). Автор альбома песен «Ожидая тебя» (1994), сборников поэзии «С чужбины» (2005), «Невыносимое страдание» (2012) и др., а также песен для кинофильма «Чхахари». Лауреат национальной премии «Нава кавита самман» (1997), награждена почетными грамотами и дипломами «Сахитья-кала сангам» (2001), «Наваранга сахитьик пратиштхан» (2003) и др.

Ачарья Чандра Кант (р. 15.05.1951, Вангла-2, Аргхакханчи) – прозаик, общественный деятель, вице-президент Общества непало-российской литературы, принимает активное участие в работе организации выпускников вузов СССР (России) Митракунджа (Клуб друзей), где занимал пост президента этой организации (2013-2014). Окончил Московский институт инженеров геодезии, аэрофотосъемки и картографии (МИИГАиК), получил диплом инженера (1973). После работы в госсекторе возглавляет консультативную фирму *Masina Continental Associates (P) Ltd.* в качестве директора.

Занимается литературной деятельностью: автор романов «Пламя» (2000), «Дружба» (2005), «Освобождение от рабства» (2007), «Нью-йоркская красавица» (2011), «Оазис» (2016) и сборников эссе о путешествиях «Из горизонта воспоминаний» (2004), «Путешествие по стране мечты» (2017) и др. Некоторые его рассказы и отрывки из романов опубликованы на русском языке.

Гири Банира (р. 11.04.1946, Кхарсьянг, Дарджилинг) – поэтесса, получила ученую степень кандидата филологических наук в Трибхуванского университете за исследование поэзии Гопала Прасада Римала. Автор 10 поэтических и прозаических книг, среди которых сборники стихов: «Один живой Джангабахадур» (1974), «Жизнь без места» (1978), «Катманду – Катманду» (2011), автобиографическая поэма «Мое открытие» (1996, переведена на английский), романа «Тюрьма» (1979, переведен на английский и хинди), сборников эссе «Парвати – другое имя горы» (2011), «Джунгли и джунгли» (2012), записок о путешествиях «Не может дать форму тот, кто останавливается» (2014) и др. Лауреат «Takeshi Kaiko Memorial award» Japan Foundation Asia (1997), престижной литературной премии Непала «Саджха-пураскар» за поэтический роман «Невысказанный Шантану» (2000), «Национальной премии изящного искусства» (2014), «Премии великого поэта Девкоты» (2017) и др. Среди множества почетных наград самыми престижными являются титул «Бриллиант непальской литературы среди женщин мира» (2014) и грамота организации «Праздника шествия на колеснице» (30.05.2014) Награждена правительственным Орденом «Суправал Горкха Дакшин Баху» («Сильнейшая правая рука Горкхи», 1985). Стихи переведены

на хинди, урду, японский и английский языки. После участия в «Конференции писателей афро-азиатских стран» в Ташкенте (Узбекистан, 1976) посетила Тбилиси (Грузия), Ленинград (ныне Санкт-Петербург) и Москву.

Ламичхане Джиба (р. 13.02.1967, Падмапур, Читаван) – предприниматель, инженер-строитель. Окончил Московский инженерно-строительный институте им. В.В. Куйбышева (1992); казначей (с 1995) и вице-президент (с 2001) Организации непальских предпринимателей в странах СНГ; президент Международного координационного совета Ассоциации нерезидентов Непала (2011–2013), ныне патрон этой организации; член Попечительского совета Общества сотрудничества и дружбы с Непалом, советник премьер-министра Непала по экономике (2012–2013 и с 2018). Учредитель литературной премии «Падма-шри», основатель благотворительного фонда поддержки нуждающимся в Непале «Khemlal Harikala Lamichhane Social Welfare Foundation». Автор двух сборников путевых заметок «Бегло по миру» (2016) и «По разным странам» (2020). Награжден высшим государственным орденом Непала «Правал джана-сева-шри падак» («За выдающиеся заслуги перед народом»).

Малла Ашеш (р. 03.04.1955 г., Дханкута) – поэт, драматург, актер, пионер непальского уличного театра, автор научной монографии «Уличный театр: теория, создание и постановки». Основатель, режиссер и драматург театральной группы «Сарванама». Преподавал литературу в Трибхуванском университете (Катманду), работал в Бюро телевидения Непала (1990-е годы). Автор сборников поэзии «По неизвестным местам», «В одиночестве» и

др. Пожизненный член Академии Непала, награжден престижными литературными премиями за вклад в развитие литературы и театра Непала: «Саджха-пураскар», «Мусячу-пураскар», «Моти-пураскар», «Сирджаншил-пураскар» и др. Автор более 25 книг, включая сборники стихов, пьес и т.д.

Субба Бикрам (настоящее имя: Дилли Бикрам Ингваба, р. 03.01.1953, Пхидим, Панчатхар) – поэт, исследователь киратской культуры, публикует стихи с 1969 г. Автор поэм «В поисках мира», «Сумнима и Паруханг», сборников стихов и поэм «Глаза поэзии, ритм поэзии», «Сагарматха выглядит обнаженной», «Стихи и песни Бикрамы Суббы» и др. Отказывается от получения любых премий и наград.

Шрестха Бал Гопал (р. 15.06.1960 г., Санкху, Катманду) – поэт, исследователь непальской культуры, магистр искусств в области политологии (Трибхуванский университет), работал преподавателем в Центре исследования Непала и Азии при ТУ, получил ученую степень кандидата антропологических наук в Университете Лейдена, где в настоящее время работает доцентом политологии. Научный сотрудник Международного института азиатских исследований (Лейден, Нидерланды), ведет исследовательскую работу в Школе антропологии и музее этнографии при Оксфордском университете (Великобритания). Проводил полевую работу в Непале, Индии, Великобритании и США. Написал множество статей по религиозным ритуалам индуизма и буддизма на языках невари (непал-бхаша), непали и английском. Автор нескольких научных трудов. На языке невари изданы: сборник эссе «Халимали», сборник стихов

«Голос за сценой», сборник рассказов «Эти сказки, эти не сказки», «Танец богини Санкху», «Хроника правителей Бхактапура», «Наш город Санкху: антропология ритуалов, культуры, религии общины неваров» (*на англ.* «The Sacred Town of Sankhu: The Anthropology of Newar Rituals, Religion and Society in Nepal», 2012 г.), «Невары в Сиккиме» (*на англ.* «The Newars of Sikkim: Reinventing Language, Culture and Identity in the Diaspora», 2015 г.), «Сказки Шри-Ланки» и др. Лауреат премии Университета Кембриджа «Frederick Williamson Memorial Fund» (2003).

Шрестха Тедж Пракаш (р. 06.01.1947, Баитади) – исследователь непальской культуры и фольклора, получил диплом магистра искусств по непальской литературе в Трибхуванском университете (Катманду, 1981). Свыше 30 лет состоял на госслужбе, президент АО «Бал-сансар». Бывший президент Общества детской литературы Непала, председатель «Мемориального фонда Рамбахадур-Теджкумари Шрестха» (с 2008 г.) и литературной фирмы «Бал-сансар» (с 2014), казначей Общества фольклора и культуры Непала (2004), секретарь-основатель литературного объединения «Рамеш Бикал Сахитья Пратиштхан» (с 2006). Пишет на языках непали и невари. Исследователь фольклора Непала, среди его научных трудов «Фольклор района Ачхама» (1995), «Фольклор, традиция и культурное наследство Непала» (2003), «Непальский фольклор: разные аспекты» (2018), «Шонитпур – древнее название» (2006), «Знакомство с Непалом» и т.д. Автор романа «Мечта живет вечно» (1995), сборника стихов «Пытаюсь поговорить в форме поэзии» (2009), сборников рассказов «Рынок» (1987) «Истина впечатлений» (2003),

«Избранные рассказы» (2010), многочисленных книг для детей и др. Награжден литературными премиями «Саджха бал-санитья пураскар» (2004), «Илохан Гьян-джоти пураскар» (2011), «Рамеш Бикал Бал-санитья пураскар» (2015), «Девкумари Тхапа Кавита бал-сахитья пураскар» (2016), «Нур-Ганга Бал-сахитья пратибха пураскар» (2016), «Сасанк Ятри Бал-сахитья пураскар» (2018), «Харикала Гунакар даитва рачана татха пураскар» (2018) и др.

Шрестха Кришна Пракаш (р. 07.11.1938, Чуникхел, Шонитпур, Катманду) – член Союза писателей России, советник Глобальной федерации непальской литературы, почетный член Общества детской литературы Непала, научный сотрудник Центра индийских исследований при Институте востоковедения РАН, бакалавр искусства (Патна, Индия, 1959), магистр наук (Факультет журналистики МГУ, 1966). Составитель-редактор научных трудов, а также сборников рассказов, сказок, легенд, стихов, на языках непали и русском: «Словарь топонимии Непала» (1987), «Русско-непальский словарь» (1975), «Непал на рубеже тысячелетий» (2002), «Рощица непальской поэзии» (2017), «Альманах непальской литературы» (2019) и др. Автор трудов по литературе, культуре, фольклору. На языке непали: «Изучение Непала в России» (1980), «Литература на языке невари» (1997), «Образ Непала в России» (2000), «Непальские литературоведы и литературная критика» (2001), «Гирлянда непальских легенд» (в стихах, 2006), «От индуистского королевства к светской республике» (2015), «Повествование о сотворении мира» (в стихах, 2016), и др. На русском языке: «Культ животных в Непале: Жизнь народа и древние легенды» (1993), «Неварская литература» (1995),

«Традиция и современность в литературе Непала» (2001), «Узы дружбы и сотрудничества» (2006), «Непальские легенды и традиционные праздники в контексте истории» (2008), «На поезде в Гималаи» (2009), «Россия – Непал: Люди. События. Документы» (2018), «Мифы и легенды Непала» (2019) и др. Перевел на непали десятки произведений русской классической литературы (от А.С. Пушкина до Расула Гамзатова), труды по непаловедению, к примеру, «Непал И.П. Минаева» (1971), «Минаев и Непал» (2010), «Рассказ о великом поэте Непала» (2011), а также десятки книг детской литературы, например, «Как человек стал великаном» (1990), «Русские сказки» (1997), «Русские богатыри» (2001) и т.д. Переводил на русский язык произведения непальских литераторов (Бхану Бхакта Ачарья, Лакшми Прасад Девкота, Читтадхар Хридай и др.). Лауреат престижных литературных премий Непала «Джагадамба-Шри» (2003) и «Наи Деруникха» (2011). Награжден многочисленными почетными дипломами, нагрудным знаком Гостелерадио СССР «Отличник телевидения и радио» (1988), почетным знаком Росзарубежцентра при МИД РФ «За вклад в дело дружбы» (2005) и др.

РУССКИЕ АВТОРЫ

Виноградова Татьяна Евгеньевна (настоящая фамилия Смирнова, род. 15.01.1965 г. в Москве). Поэт, литературовед, критик, редактор, переводчик, график, книжный дизайнер, член Московского союза литераторов с 2017 г., Союза писателей Москвы с 2002 г, Творческого Союза художников России с 1996 г. Окончила редакционно-издательское отделение факультета журналистики МГУ им. М. В. Ломоносова (1990) и аспирантуру филологического факультета МГУ (1997). Кандидат филологических наук. Автор 8 поэтических сборников и 2 альбомов графики: «Я не умею рисовать» (2000) и «Цифранима» (2020, в печати). Произведения опубликованы в журн., альм., газ.: «Арион», «Кольцо “А”», «Плавучий мост», «Дискурс», «Inspirational», «Юность», «Журнал ПОэтов», «Дети Ра», «Зинзивер», «Другое полушарие», «Среда», «45-я параллель», «Артикуляция», в «НГ-Ex Libris», «Литературной газете», в ант. «Il Cammino di Santiago. La giovane poesia d’Europa nel 1997» (Рим), «Согласование времен 2010. Поэзия третьего тысячелетия» (Берлин), «Певчий ангел» (СПб, 2015), «Современный русский свободный стих» (2019) и др. Переводила стихи с английского, болгарского, немецкого, армянского языков. Курировала и организовывала фестивали, поэтические вечера и другие литературные акции. Лауреат конкурса «Tivoli Europe Giovani» (Рим, 1997). Лауреат журнала «Дети Ра» (2011). Победитель I и II Фестивалей Литературного Эксперимента (Москва, 2019,

2020). Стихи переведены на английский, итальянский, болгарский, армянский, японский языки.

Вязмитинова Людмила Геннадьевна (род. 25.08.1950 г. в Москве) – поэт, литературный критик, культуртрегер, окончила Литературный институт им. А. М. Горького. Первая публикация – 1985 год, первая книга – 1992 год, лауреат II Филаретовского конкурса религиозной поэзии (2001), финалист и специальный дипломант – «За открытие новых культурных контекстов в современной поэзии» Международной премии имени Фазиля Искандера (2018), член Союза писателей Москвы, Московского союза литераторов, в котором является председателем секции поэзии, и русского ПЕН-центра, куратор «LitClub ЛИЧНЫЙ ВЗГЛЯД», автор трех книг стихов, более 200 статей о современной литературе, опубликованных в журналах «Новое литературное обозрение», «Знамя», «Новый мир», «Дружба народов», «Крещатик», «Урал», интернет-журналах «Топос», «Лиterraтура» и «Textura», газете «НГ» (приложение «НГ-Ex Libris») и др., и двух книг критики – сборника эссе о современной литературе «Tempus deliberandi. Время для размышлений», изданного по материалам выступлений на Радио России (1998, в соавторстве с Андреем Цукановым) и книги избранных статей «Тексты в периодике. 1998-2015» (2016). Член жюри многих литературных конкурсов и ведущая литературной мастерской при МСЛ «Для тех, кто пишет или хочет начать писать стихи».

Галечьян Валерий Абгарович (род. 10.07.1947 г. в Ленинграде (ныне Санкт-Петербург). Председатель Московского союза литераторов, член Международной академии русской словесно-

сти. Закончил Ленинградский Инженерно-экономический институт им. П. Тольятти и очную аспирантуру. Кандидат экономических наук. В 1980–1990 гг. вышли 4 книги, 5 брошюр (в основном в соавторстве) и десятки статей по экономике и управлению. За достижения в экономике награжден серебряными медалями ВДНХ СССР в 1986 и 1989 гг. Литературной деятельностью занимается с 1970 г. Поэт, прозаик, драматург, график, издатель, автор 8-ми книг стихов, 3-х романов и 2-х повестей (в соавт. с В. Ольшанецким), сборника пьес и 13-ти альбомов графики. В последние годы выступал на в различных поэтических фестивалях в Москве, Санкт-Петербурге, Твери; печатался в журналах «Арагаст» («Парус»), «Дети Ра», «Другие», «Меценат», «Слово», в антологиях, альманахах и сборниках произведений российских писателей, в редактировании и оформлении многих из которых принимал непосредственное участие. В 1995–2020 гг. на персональных и коллективных выставках в Санкт–Петербурге и в Москве представил более 600 произведений, выполненных в традиционной и компьютерной графике.

Кемельбекова Умут Бейсенбаевна (род. в 1956 г. в гор. Намангане Узбекской ССР в составе СССР, ныне – государство Узбекистан). Прозаик, поэт, член Московского союза литераторов с 2017 г. Закончила философский факультет МГУ им. М.В.Ломоносова. Кандидат социологических наук. В 1992 г. выступила соучредителем Фонда содействия развитию науки, культуры и образования «Новое тысячелетие». Является бессменным президентом Фонда. Первая книга стихов и притч «Шелковый путь» вышла в 1992 г. Переведена на английский, итальянский и нидерландский языки.

Автор восьми книг фантастических рассказов и повестей, в т. ч. «Дневник контактера» (в соавторстве с Я.В. Сиверц ван Рейзема). Президент Клуба любителей фантастики «Остров Беляева». Клуб совместно с МСЛ проводит конкурсы фантастических рассказов среди учащихся московских школ. Лучшие рассказы публикуются.

Копейкина Нелли Григорьевна (род. 03.03.1959 г., в гор. Фурманове). Автор прозаических и поэтических произведений для взрослых и детей, пьес, сценариев, переводов; член Союза писателей России; Российского Союза писателей; Союза писателей XXI века; Региональной общественной организации «Клуб писателей» ЦДЛ; Интернационального Союза писателей, драматургов и журналистов; Московского союза литераторов; Академии российской литературы и Международной академии русской словесности; Московского литфонда; Союза журналистов России; резидент Национального агентства по печати и СМИ «Русский литературный центр». Издано более 50-ти книг, в числе которых методические пособия по изучению языков. Регулярно публикуется в журналах, антологиях, сборниках, альманахах и на различных интернет-сайтах. Произведения переведены на несколько языков мира. Главным в своем творчестве считает произведения для детей. По мотивам своих детских сказок написала семь музыкальных пьес и мюзикл, постановки вошли в репертуар театров России. Пишет тексты песен для детских спектаклей. Учредитель благотворительного общества. Организатор и член жюри детских литературных конкурсов. Лауреат нескольких литературных конкурсов и премий. Номинант на Премию Президента России за произведения в об-

ласти литературы и искусства для детей и юношества. Регулярный номинант на премии «Писатель года» и «Поэт года». Кавалер нескольких медалей за успехи в литературе.

Ларин Владислав Иванович (род. 11.09.1960 г. в Москве), член Московского Союза литераторов с 2006 г., Союза журналистов Москвы, Географического общества РФ). Окончил географический факультет Московского государственного педагогического института им. В.И. Ленина. Магистр по специальности «география и биология», Москва, СССР, 1983 г., также Master of Science, Environmental Sciences and Policy, Diploma of Manchester University, UK and Central European University, Hungary, 1998. Первый рассказ опубликовал в 1979 г., тогда же вступил в Географическое общество СССР. Участвовал в океанографической экспедиции к берегам Антарктиды и в международных экспедициях на русском Севере, консультировал правительства Великобритании и Норвегии по вопросам охраны природы в России. Участник программы Leadership for Environment and Development (LEAD Program), fellow Cohort 7. Сотрудничал с Central European University, Department Environmental Sciences & Policy (Будапешт, Венгрия), готовил исследовательские и аналитические публикации о состоянии окружающей среды на территории бывшего СССР и современной России. Работал в датском Nordic Folkecenter for Renewable Energy, готовил публикации о возобновляемой энергетике Дании, там же снял образовательный документальный фильм на эту тему. Работал в журнале The Bulletin of the Atomic Scientists (Чикаго, США), выступал в Европарламенте с докладом о применении атомных технологий военного назначения для добычи нефти и

газа на шельфе морей российского Заполярья. Тридцать три года был научным редактором и обозревателем отдела экологии в единственном научно-популярном журнале Президиума Российской Академии наук «Энергия: экономика, техника, экология». Автор стихов, очерков, рассказов, преимущественно в сфере документальной литературы (non-fiction), научно-популярных статей, докладов и книг. Написал и опубликовал более десяти научно-популярных книг, в основном посвященных проблемам, связанным с безумным развитием разрушительных технологий – преимущественно военного и энергетического назначения – на русск. и англ. языках. Перевел с англ. на русск. яз. и подготовил к публикации по заказу WWF России ряд международных докладов, посвященных экологическим проблемам. Общее число публикаций на темы экологии, экономики, истории, нравственности и развития общества превышает 500 наименований; опубл. в России, Франции, Германии, Бельгии, США, Англии, Швеции, Израиле и др. странах. Недавно начал новый проект, посвященный жизни на природе и дизайну, близкому к природе, не разрушающему окружающую среду. Автор и ведущий канала на YouTube «Native Home Design» и «Vladislav Larin. Live».

Лозовой Александр Николаевич (род. в 1949 г. в гор. Сухуми Абхазской АССР), член Московского союза литераторов с 2015 г., прозаик, художник, кандидат педагогических наук, автор монографий по изобразительному искусству: «Варвара Бубнова», «Ошибки великих мастеров», учебных пособий, сатирической повести «Балканский коллаж» (2015 г.) и телевизионных фильмов: «Театр одного художника», «Япония и русский

авангард». С 2014 систематически публикуется в литературном альманахе «Клуб N». Картины Лозового находятся в собраниях Государственного Русского музея (Санкт-Петербург), Музея изобразительных искусств имени А. С. Пушкина (Москва), Московском музее современного искусства и др.

Михайловская Татьяна Георгиевна (род. 03.12.1943 г. в Баку – тогда столица Азербайджанской ССР в составе СССР, ныне столица государства Азербайджан). Поэт, прозаик, литературный критик, издатель, редактор-составитель. Заслуженный работник культуры Российской Федерации. Член Московского союза литераторов с 1983 г. С 2004 по 2020 гг. избиралась председателем Российского союза профессиональных литераторов. Закончила филологический факультет МГУ, Государственные Курсы информатики и прикладной лингвистики. Занималась научной работой в области создания информационно-поисковых систем и информационно-поисковых языков. С 1971 г. полностью перешла на литературную работу. Работала редактором в издательствах «Советский писатель», «Текст», журн. «Литературное обозрение», «Октябрь», «Новое литературное обозрение», «Меценат и мир», «Чаша». Создала и возглавила лучший в свое время журнал о книгах «Библио-Глобус». Являлась редактором и составителем книг многих известных писателей XX века: А. Сергеева, Г. Сапгира, И. Холина, Д. Пригова, Д. Авалиани, Г. Балла и других. Автор 5 книг стихов, сборника коротких рассказов «Ерундопель»(2012) и романа «Дама у окна» (2017). Критические статьи публиковались в журн. «Арион», «Крещатик», «Меценат и мир», газ. «Русское слово» (Париж) и «Культура». В 1990 г. был написан сценарий, посвящен-

ный известному альманаху «Тарусские страницы», по которому был снят документальный телевизионный фильм с участием Булата Окуджавы, Николая Панченко и современных поэтов. Фильм много раз был показан по каналу «Культура» и другим телевизионным каналам. От издательства «Советский писатель» организовывала экспозицию на Первой московской международной книжной выставке-ярмарке в 1977 г. и продолжала эту деятельность на последующих крупнейших форумах на ВДНХ и Красной площади. Представила проекты «Стихи на открытках» в Музее В.В. Маяковского в 2001 г. и «Дом со стихами» в Музее декоративно-прикладного искусства в 2004 г. Лауреат премий «Отметина имени отца русского футуризма Давида Бурлюка» и «Серебряный фрегат».

Цуканов Андрей Львович (род. 30.08.1966 г. в Москве) – поэт, прозаик, эссеист, переводчик. Окончил филологический факультет МГУ и аспирантуру ИМЛИ. Председатель Российского союза профессиональных литераторов. Автор книг стихов «Акт» (1992), «Тридцать три» (1996), «Тотемы» (2018). Стихи, рассказы и эссе публиковались в газ. «НГ-Ex Libris» и журн. «Арион», «Новое литературное обозрение», «Знамя», «Среда», «Клуб N», «Журнал ПОэтов», ант. «Современный русский свободный стих» (2019) и др. Автор учебника по истории философии для школьников (1999, переиздание в 2017). Перевел с английского несколько книг американских авторов, в том числе 1-й том двухтомника Ричарда Пайпса «Петр Струве, биография». На основе цикла совместных выступлений на «Радио России» в передаче Дмитрия Воденникова «Своя колокольня» в соавторстве с Людмилой Вязмитиновой выпустил сборник эссе

о современной литературе «Tempus deliberandi. Время для размышлений» (1998).

Черкашина Лариса Андреевна (род. 20.08.1949 г. в гор. Волковыске Белорусской ССР, ныне государство Белоруссия). Член Союза писателей России и Московского Союза литераторов с 1987 г. С 1970 г. публиковалась в различных журналах и газетах. Тема ранних публикаций – искусство и фольклор. С 1985 г. занимается изучением наследия русского гения Александра Пушкина. Автор 15 книг об А.С. Пушкине, его предках и потомках, книги о четвероногих друзьях человека «Любимцы царей и президентов. От Петра I до Владимира Путина», а также многих газетных и журнальных публикаций, посвященных истории пушкинского рода, судьбам потомков поэта, семейным преданиям и фамильным реликвиям. Сценарист семи художественно-документальных фильмов о судьбах потомков Пушкина в разных странах (ВГТРК, телеканал «Культура»). В марте 2014-го в театре «Благодать» (город Кисловодск) состоялась премьера пьесы Л. Черкашиной «Моя мадонна» о судьбе избранницы поэта. Вместе с отцом Андреем Черкашиным, известным генеалогом, написана книга «Тысячелетнее древо А.С. Пушкина: корни и крона», получившая всероссийское и международное признание. (Авторы – лауреаты Всероссийской историко-литературной премии Святого Александра Невского. 2010 г.). Книга «Тайны пушкинского древа» (издательство «Лазурь») удостоена премии «Лучшие книги и издательства года – 2007» в номинации «Детская литература». За книгу «Пушкин и Романовы. Великие династии в зеркале эпох» (издательство «Вече») отмечена дипломом литературно-общественной премии «Лучшая книга

2011-2013». Лауреат премии Гомера 2017 г. Международного творческого фестиваля в Греции. Участвовала в юбилейных пушкинских торжествах и конференциях в России, Японии, Дании, Черногории, на Кубе, во Франции, на Мальте, в Афинах и на Крите; в пушкинских праздниках поэзии в Михайловском (Псковская обл.), а в июне 2009 года – в открытии Первого Всемирного съезда потомков А.С. Пушкина. Инициатор Всероссийского праздника «Натальин день» в честь жены и музы поэта Наталии Гончаровой и в память ее небесной покровительницы Святой мученицы Наталии. В юбилейном 1999 году – двухсотлетия со дня рождения поэта – в номинации «За вклад в российскую культуру» награждена Золотой Пушкинской медалью, а в 2002 г. Указом Президента РФ В.В. Путина – государственной наградой Российской Федерации «Медаль Пушкина». В 2012 г. получила «Благодарность Министра культуры Российской Федерации» «за большой вклад в развитие российской литературы, многолетнюю плодотворную работу».

रूसी स्रष्टा-परिचय

भिनोग्रादोभा ताच्याना एभ्गेनेभ्ना (वास्विक थर स्मिर्नोभा, जन्मः १५.०१.१९६५, मस्को) – कवयित्री, साहित्यविद्, समालोचक, सम्पादक, अनुवादक, चित्रशिल्पी, पुस्तक डिजाइनकर्ता, मस्को साहित्यकार सङ्घ, मस्को लेखक सङ्घ, रूस सिर्जनशील चित्रकार सङ्घकी सदस्य। मस्को राजकीय विश्वविद्यालय पत्रकारिता संकायबाट सम्पादन र प्रकाशनको विषयमा उच्चशिक्षा प्राप्ति (१९९०) र यसै विश्वविद्यालयको साहित्यशास्त्र संकायबाट विद्यावारिधिको प्राज्ञिक उपाधि प्राप्त (१९९७)। प्रकाशनः आठओटा कविता सङ्ग्रह र 'म चित्र कोर्न सक्छु' (२०००) र 'संख्यात्मा' ('त्सिफ्रानिमा', २०२०) दुईओटा चित्र-अल्बम। विभिन्न सावधिक पत्रपत्रिका 'आरिओन', 'चक्र 'अ', 'तैरने पुल', 'डिस्कुर्स', 'Inspirational', 'युवा पत्रिका', 'रा सन्तति', 'जिन्जिभेर', 'अर्को गोलार्ध' र 'परिवेश', 'पैंतालिसौ समानान्तर', 'सन्धान', 'साहित्यिक समाचारपत्र', 'НГ-Ex Libris', 'Il Cammino di Santiago. La giovane poesia d'Europa nel 1997' (रोम) आदि तथा 'समय सहमति २०१०. तेस्रो सहस्त्राब्दीको काव्य' (बर्लिन), 'लयात्मक देवदूत' (सेन्ट-पिटर्सबुर्ग, २०१५), 'आधुनिक रूसी मुक्त शैली' (२०१९) आदि सङ्कलनहरूमा कृति प्रकाशित। अङ्ग्रेजी, बोल्गारियाली, जर्मन, अर्मेनियाली भाषाहरूबाट कविताको अनुवाद। कविता महोत्सव र काव्य-सन्ध्याहरूको संयोजन। 'Tivoli Europe Giovani' (रोम, १९९७), 'राका सन्तति' पत्रिका (२०११), 'प्रथम साहित्यिक महोत्सव' (मस्को, २०१९) प्रतियोगिता विजेता। अङ्ग्रेजी, इटालियन, बोल्गारियाली र अर्मेनियाली भाषाहरूमा उनका कविताहरूको अनुवाद प्रकाशित छन्।

भ्याजिमतिनोभा, ल्युदमिला गेन्नाद्एभ्ना (जन्मः २५.०८.१९५०, मस्को) – कवयित्री, साहित्य समालोचक, ठेटर समीक्षक, गोर्की साहित्यिक संस्थानबाट स्नातकोत्तर दिग्री प्राप्त। सन् १९८५ मा प्रथम प्रकाशन र सन् १९९२ मा प्रथम पुस्तक प्रकाशन। मस्को लेखक सङ्घकी सदस्य, मस्को साहित्यकार सङ्घको काव्य विभाग तथा रूसी पेन-सेन्टरकी अध्यक्ष, 'निजी दृष्टिकोण साहित्यक क्लब' की संयोजक।

द्वितीय फिलारेतोभ धार्मिक काव्य प्रतियोगिता विजेता (२००१), 'आधुनिक काव्यमा नवीन सांस्कृतिक सन्दर्भ आविष्कारका लागि" फाजिल इस्कान्देर अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारकी सहभागी र विशेष डिप्लोमाबाट विभुषित (२०१८)। तीनओटा कविता पुस्तककी रचयिता, 'नवीन साहित्यक पर्यवेक्षण', 'ध्वजा', 'नयाँ संसार', 'जनमित्रता', 'क्रेश्यातिक", 'उराल' का साथै 'तोपोस', लितेर्रातुरा', र 'टेक्स्टतुरा' इन्टरनेट पत्रिकाहरू तथा 'НГ-Ex Libris' अखबारको परिशिष्टाङ्क आदिमा आधुनिक साहित्यबारे २०० भन्दा बढी लेखहरूको प्रकाशनका अतिरिक्त रेडियो रूसबाट प्रसारित वक्तव्यहरू (आन्द्रेइ त्सुकानोभको समेत सहभागितामा) 'Tempus deliberandi चिन्तनका क्षणहरू' (१९९८) शीर्षकमा आधुनिक साहित्यबारे निबन्ध सङ्ग्रह र 'सावधिक पत्रपत्रिकाका सामग्रीहरूः १९९८-२०१५' सहित दुई साहित्यालोचनाविषयक पुस्तकको प्रकाशन। काव्य, गद्य र साहित्यालोचनासम्बन्धी प्रतियोगिताहरूको परीक्षक-मण्डलकी सदस्य र कार्यशालाहरूकी संयोजक।

गालेच्यान भालेरी अब्गारोभिच (जन्मः १०.०७.१९४७, लेनिनग्राद (हाल सेन्ट-पिटर्सबुर्ग) – कवि, गद्यकार, नाटककार, खाकाचित्रकार, प्रकाशक, मस्को साहित्यकार सङ्घका अध्यक्ष, अन्तर्राष्ट्रिय रूसी वाङ्मय प्रज्ञाप्रतिष्ठानका सदस्य। लेनिनग्रादस्थित तोल्यात्ती इन्जेनेर्नो-इकोनोमिचेस्की इन्स्टिच्युटको अध्ययनपश्चात् काम गर्नुका साथै शोधार्थी रही अर्थशास्त्रमा विद्यावारिधिको प्राज्ञिक उपाधि प्राप्त। सन् १९८०-१०९० का दशकमा ४ पुस्तक र ५ पुस्तिका (मुख्यतः सहलेखनसहित) तथा अर्थतन्त्र र व्यवस्थापन विषयका दशौं लेख प्रकाशन। अर्थतन्त्रमा प्रगतिवापत् 'भदएनखाको रजत पदक' प्रदान (१९८६ र १९८९)। सन् १०७० देखि साहित्यिक क्रियाकलापमा संलग्न। प्रकाशित कृतिः ८ कविता सङ्ग्रह, ३ उपन्यास र २ लघुउपन्यास (भी. ओल्शानेत्ससँग सहलेखन), नाटक सङ्ग्रह र १३ ओटा खाकाचित्र एल्बमहरू। पछिल्ला वर्षहरूमा मस्को, सेन्ट-पिटर्सबुर्ग, त्वेरमा आयोजित विभिन्न काव्य-महोत्सवहरूमा सहभागिता, 'आरागास्त" ('त्रिपाल'), 'रा सन्तति', 'अन्य', 'दातव्य', 'शब्द' पत्रिकाहरू र साहित्यक सङ्कलन, रूसी लेखकका कृतिहरूको सङ्ग्रह आदिमा रचना प्रकाशन तथा यस्ता कतिपय सङ्कलन र सङ्ग्रहहरूको सम्पादन, सज्जा एवं डिजाइन तर्जुमा। सन् १९९५-२०२० को समयावधिमा सेन्ट-पिटर्सबुर्ग र मस्कोमा आयोजित एकल र सामूहिक प्रदर्शनीहरूमा ६०० भन्दा बढी परम्परागत तथा कम्प्युटरकृत खाकाचित्रात्मक कृतिहरूको प्रदर्शन।

केमेल्बेकोभा उमुत बेइसेन्बाएभ्ना (जन्मः १९५६, नामान्गान, उज्बेकिस्तान) – कवयित्री, गद्यकार, मस्को साहित्यकार सङ्घकी सदस्य (२०१७ देखि)। मस्को

राजकीय विश्वविद्यालयको दर्शनशास्त्र सङ्कायबाट स्नातकोत्तर र समाजशास्त्रमा विद्यावारिधिको प्राज्ञिक उपाधि प्राप्त; विज्ञान, संस्कृति तथा शिक्षा विकास सहयोग कोष 'नयाँ सहस्त्राब्दी' को सहसंस्थापिका (१९९२) र अद्यापि यस कोषकी अध्यक्ष। प्रथम प्रकाशनः कविता एवं किस्साहरूको पुस्तक 'रेशमको बाटो' (१९९२) अङ्ग्रेजी, इटालियाली र निदेर्ल्यान्डी भाषाहरूमा अनूदित । काल्पनिक कथाहरू र लघुउपन्यासहरू (या.भि.स्विरेत्स भान रेइजेमासँगको सहभागितामा लिखित 'सम्पर्ककर्ताको दैनिकी' लगायत) आठ पुस्तकहरूका लेखक । सौकिन काल्पनिक आख्यानकारहरूको क्लब 'बेल्याएभ-द्वीप' का अध्यक्ष। यस क्लबले मस्को साहित्यकार सङ्घको सहभागितामा मस्कोका स्कुले छात्रछात्राहरूको माझमा काल्पनिक कथा प्रतियोगोताहरूको आयोजना गर्दै उत्कृष्ट कथाहरूको प्रकाशन पनि गर्दै आएको छ।

कोपेइकिना नेल्ली ग्रिगोरेभ्ना (जन्मः ०३.०३.१९५९, फुर्मानोभ) – गद्य र कविता, नाटक र बालसाहित्य, पटलेख र अनुवाद कृतिहरूकी स्रष्टा। रूस लेखक सङ्घ, रसियाली साहित्यकार सङ्घ, एक्काईसौं शताब्दीय लेखक सङ्घ, प्रादेशिक सामाजिक संस्था 'लेखक क्लबः केन्द्रीय साहित्यकार गृह', अन्तर्राष्ट्रीय लेखक, नाटककार तथा पत्रकार सङ्घ, रूसी साहित्य प्रज्ञाप्रतिष्ठान तथा अन्तर्राष्ट्रिय रूसी वाङ्मय प्रज्ञाप्रतिष्ठान, मस्को साहित्यकार कोष, रूस पत्रकार सङ्घकी सदस्य, राष्ट्रीय प्रेस तथा सञ्चार माध्यम एजेन्सी 'रूसी साहित्य केन्द्र' की आवासीय सदस्य । भाषाहरूको अध्ययनसम्बन्धी पाठ्यविधिका पुस्तकहरू लगायत ५० भन्दा बढी पुस्तकहरूको प्रकाशन । पत्रपत्रिका र सङ्कलनहरूका साथै विभिन्न इन्टरनेट पत्रिकाहरूमा नियमित रूपमा कृतिहरूको प्रकाशन। विश्वका विभिन्न भाषामा कृतिहरू अनूदित। मुख्यतया बालसाहित्यका कृतिहरूको लेखनमा संलग्न। बाललोककथाविषयक आफ्ना कृतिहरूमा आधारित ७ सङ्गीत नाटकहरूको रूसका ठेटरहरूमा मञ्चन । बाल-नाटकहरूका लागि पटलेखन र गीत रचना । लोक कल्याणकारी समाजकी संस्थापिका, बालसाहित्य प्रतियोगिताहरूको आयोजना र परीक्षक-मण्डलकी सदस्य। कतिपय साहित्यिक प्रतियोगोतामा सहभागिता तथा पुरस्कारहरूकी विजेता । बालबालिका तथा किशोरकिशोरीहरूका लागि साहित्य तथा कलाको क्षेत्रमा रचिएका कृतिहरूको निम्ति रूसका राष्ट्रपतिको पुरस्कार प्राप्तिको उद्देश्यले नाम प्रस्तुति । 'वर्षको उत्कृष्ट साहित्यकार" र 'वर्षको उत्कृष्ट कवि" पुरस्कारका लागि नियमित रूपमा नाम प्रस्तुति। साहित्यमा प्रगतिका लागि कतिपय पदकहरूकी विजेता।

लारिन भ्लादिस्लाभ इभानोभिच (जन्मः ११.०९.१९६०, मस्को) – मस्को साहित्यकार सङ्घका सदस्य (२००६ देखि), मस्को पत्रकार सङ्घ तथा रूस भौगोलिक समाजका सदस्य। मस्कोस्थित लेनिन राजकीय शिक्षक शिक्षण संस्थानबाट

'भूगोल र जीवशास्त्र' विषयमा स्नातकोत्तर (१९८३) का साथै पर्यावरणविज्ञान र नीतिसम्बन्धी स्नातकोत्तर, संयुक्त अधिराज्यस्थित मैनचेस्टर विश्वविद्यालय र हङ्गेरीस्थित केन्द्रीय युरोपीय विश्वविद्यालयबाट डिप्लोमा प्राप्त (१९९८)। सन् १०७९ मा पहिलो कथा प्रकाशित र त्यसै वर्ष सोभियत सङ्घ भौगोलिक समाजको सदस्यता प्राप्ति। एन्टार्कटिडा (दक्षिणी ध्रुव) तटमा महासागरीय वैज्ञानिक अनुसन्धान र रूसको उत्तरी क्षेत्रमा अन्तर्राष्ट्रिय अभियानका सहभागी, रूसमा प्रकृति संरक्षणसित सम्बन्धित प्रश्नमा ग्रेटब्रिटेन र नर्वेका सरकारहरूलाई परामर्श प्रदान। पर्यावरण एवं विकासका लागि नेतृत्व (Leadership for Environment and Development) कार्यक्रमका सहभागी। केन्द्रीय युरोपीय विश्वविद्यालय, पर्यावरणविज्ञान र नीति सङ्काय (बुदापेस्ट, हङ्गेरी) मा सहभागिता। पूर्व सोभियत सङ्घ र वर्तमान रूसको भूभागमा पर्यावरणको स्थितिबारे अनुसन्धानात्मक र विश्लेषणात्मक लेखहरूको प्रकाशन। डेन्मार्कस्थित नवीकरणीय ऊर्जाका लागि नोर्डिक फोल्केसेन्टर (Nordic Folkecenter for Renewable Energy) मा कार्य सम्पादन, डेन्मार्कको नवीकरणीय ऊर्जासम्बन्धी सामग्री प्रकाशनको तैयारी र यसै विषयवस्तुबारे शैक्षिक वृत्तचित्र निर्माण। आणविक क्षेत्रका वैज्ञानिकहरूको बुलेटिन (The Bulletin of the Atomic Scientists) पत्रिकामा कार्य, युरोपीय संसदमा रूसको ध्रुवप्रदेशमा समुद्री तटवर्ती जलमग्न क्षेत्रमा खनिजतेल र ग्यास उत्खननका लागि सामरिक उद्देश्यमूलक आणविक प्रविधिको उपयोगबारे प्रतिवेदन प्रस्तुति। रूस विज्ञान प्रज्ञाप्रतिष्ठानको अध्यक्षमण्डलको एक मात्र सुबोध वैज्ञानिक पत्रिका 'ऊर्जाशक्तिः अर्थतन्त्र, प्रविधि, पर्यावरण' का वैज्ञानिक सम्पादक र पर्यावरण विभागका पर्यवेक्षकको हैसियतले तेत्तिस वर्ष कार्यरत। कविता, कथा, निबन्ध, मुख्यतः गैरललित साहित्य (non-fiction) र सुबोध वैज्ञानिक लेख, प्रतिवेदन तथा पुस्तकहरूको प्रकाशन। रूसी र अङ्ग्रेजी भाषामा खास गरी विध्वङ्सात्मक प्रविधि (मुख्यतया सामरिक तथा ऊर्जाशक्ति) सम्बन्धी दशौं सुबोध वैज्ञानिक पुस्तकहरूको लेखन र प्रकाशन। पर्यावरणका समस्यासित सम्बन्धित कतिपय अन्तर्राष्ट्रिय प्रतिवेदन अङ्ग्रेजीबाट रूसी भाषामा अनुवाद गरेर WWF रूसको निमित्त प्रकाशनार्थ तैयारी। रूस, फ्रान्स, जर्मनी, बेल्जियम, संयुक्त राज्य अमेरिका, बेलायत, स्विडेन, इजरायल र अन्य देशहरूमा पर्यावरण, अर्थतन्त्र, इतिहास, नैतिक तथा सामाजको विकासविषयक ५०० भन्दा बढी लेखहरू प्रकाशित। हालसालै पर्यावरणीय परिवेशको निम्ति प्रकृतिकै सन्निकट रहेको डिजाइन र प्रकृतिकै परिवेशमा जीवनप्रति समर्पित नयाँ परियोजना आरम्भ गरिएको छ। लारिन यु-ट्युबमा 'Native Home Design' तथा 'Vladislav Larin. Live' च्यानलका अभियन्ता र नेतृत्वकर्ता पनि रहेका छन्।

लोजोभोइ अलेक्सान्द्र निकोलाएभिच (जन्मः १९४९, सुखुमी, आब्खाजिया) – गद्यकार, चित्रकार, शिक्षणकलामा विद्यावारिधि, मस्को साहित्यकार सङ्घका सदस्य (२०१५ देखि)। कृति-प्रकाशनः 'भार्भारा बुब्नोभा', 'महान् चित्रकारहरूको गल्ती' आदि चित्रकलासम्बन्धी ग्रन्थहरू र पाठ्यपुस्तकहरूका साथै हास्यव्यङ्ग्यमय उपन्यास 'बाल्कानको कोल्लाज' (२०१५) र टेलिभिजन चलचित्रहरू 'एकल चित्रकार ठेटर', 'जापानी र रूसी आभान्गार्ड' आदि। नियमित रूपमा साहित्यक सङ्कलन 'क्लब एन' मा प्रकाशन (२०१४ देखि) । लोजोभोइका चित्रपटहरू राजकीय रूसी सङ्ग्रहालय (सेन्ट-पिटर्सबुर्ग), पुश्किन चित्रकला सङ्ग्रहालय (मस्को), 'आधुनिक कला सङ्ग्रहालय' (मस्को) लगायत विभिन्न सङ्ग्रहालयका सङ्कलनहरूमा राखिएका छन्।

मिखाइलोभ्स्काया ताच्याना गेओर्गिएभ्ना (जन्मः ०३.१२.१९४३, बाकु, अजेरबैजानको राजधानी) – कवयित्री, गद्यकार, साहित्यक समालोचक, सम्पादक, प्रकाशक। रूस महासङ्घकी प्रतिष्ठित सांस्कृतिक कर्मी, मस्को साहित्यकार सङ्घकी सदस्य (१९८३ देखि), रसियाली पेशागत साहित्यकार सङ्घकी अध्यक्ष (२००४-२०२०)। मस्को राजकीय विश्वविद्यालय साहित्यशास्त्र संकायबाट स्नातकोत्तर डिग्री र सञ्चारविधि तथा उपयोगी भाषाशास्त्रसम्बन्धी राजकीय कोर्सको डिप्लोमा प्राप्त। भाषा अनुसन्धानको सञ्चार पद्धति निर्माणको क्षेत्रमा वैज्ञानिक कार्य सम्पन्न र हाल (सन् १९७१ देखि) पूर्णतं साहित्य सिर्जनामा संलग्न। 'सोभियत लेखक' र 'लेख्य सामग्री' प्रकाशनालयमा र 'साहित्यक पर्यवेक्षण', 'अक्टोबर', 'नवीन साहित्यक पर्यवेक्षण', 'दातव्य र संसार', 'पल्ला' आदि पत्रिकाहरूमा सम्पादिकाको रूपमा कार्यसम्पादन। कुनै समयमा पुस्तकहरूसम्बन्धी उत्कृष्ट पत्रिका 'बिब्लिओ-ग्लोबुस' की संस्थापिका र नेतृ, आ.सेर्गेएभ, ग.साप्गिरा, इ.खोलिन, द.प्रिगोभ, द.आभालिआनी, ग.बाल्ल प्रभृति बिसौं शताब्दीका प्रसिद्ध लेखकहरूका पुस्तकहरूकी सम्पादिका। प्रकाशनः ५ कविता सङ्ग्रह, लघुकथा सङ्ग्रह 'एरुन्दोपेल' (२०१२) र उपन्यास 'झ्यालनेरकी महिला" (२०१७) का साथै 'आरोन', 'क्रेश्यातिक', 'दातव्य र संसार' पत्रिकाहरू तथा 'रूसी शब्द' (पेरिस) र 'संस्कृति' समाचारपत्रहरूमा समालोचनात्मक लेखहरू । बुलात ओकुजाभ, निकोलाइ पेन्चेन्को र आधुनिक कविहरूको सहभागितामा निर्मित वृत्तचित्रका लागि प्रसिद्ध साहित्यक सँगालो 'तारुसाका पृष्ठहरू' मा आधारित पटलेखन (१९९०)। यो वृत्तचित्र 'संस्कृति' र अन्य कतिपय टेलिभिजन प्रसारणमा कैयौंपल्ट प्रदर्शित गरिएको थियो। मस्कोमा आयोजित प्रथम अन्तर्राष्ट्रिय पुस्तक मेला (१९७७) मा 'सोभियत लेखक' प्रकाशनालयको तर्फबाट पुस्तक प्रदर्शनको आयोजना र तत्पश्चात् पनि अखिल रसियाली जनअर्थतन्त्र विकास प्रदर्शनी (भदएनखा) तथा लाल मैदानमा सम्पन्न विशाल पुस्तक मेलाहरूमा पनि यसै कार्यको निरन्तरता। भ्लादिमिर

मायाकोभ्स्की सङ्ग्रहालयमा 'पोष्टकार्डमा कविता' (२००१) र उपयोगी शिल्पकला सङ्ग्रहालयमा 'कविताहरूको घर' (२००४) परियोजनाको प्रस्तुति। 'रूसी फुटुरिज्मका जनक डेभिड बुर्ल्युक स्मृति' पुरस्कार तथा 'रजत रणपोत' पुरस्कार विजेता।

त्सुकानोभ आन्द्रेइ ल्भोभिच (जन्मः ३०.०८.१९६६, मस्को) – कवि, गद्यकार, निबन्धकार, अनुवादक । मस्को राजकीय विश्वविद्यालयबाट स्नाकतोत्तर र विद्यावारिधिका लागि शोधकार्यमा संलग्न । रसियाली पेशागत साहित्यकार संघका अध्यक्ष। प्रकाशनः 'कार्य" (१९९२), 'तेत्तिस' (१९९६), 'गणचिन्हहरू' (२०१८) का अतिरिक्त स्कुलका छात्रछात्राहरूका लागि दर्शनशास्त्रको इतिहासविषयक पाठ्यपुस्तक (१९९९ र २०१७)। समाचारपत्र 'НГ-Ex Libris' का साथै 'आरोन', 'नजीन साहित्यक पर्यवेक्षण', 'ध्वजा', 'परिवेश', 'क्लब एन', 'काव्य' पत्रिकाहरू र 'आधुनिक रूसी मुक्त शैली' (२०१९) सङ्कलन आदिमा कविता, कथा र निबन्ध प्रकाशित छन्। अङ्ग्रेजी भाषाबाट रिचार्ड पाइप्सलिखित 'पिटर स्ट्रुवे' को जीवनीको प्रथम भागलगायत अमेरिकी लेखकहरूका केही पुस्तकहरूको अनुवाद गर्नुका साथै रेडियो रूसबाट दिमित्री भोदेन्निकोभको 'आफ्नै डम्फु' प्रसारणमार्फत् प्रसारित आधुनिक साहित्यबारे संयुक्त वक्तव्यहरू (ल्युदमिला भ्यज्मितिनोभाको समेत सहभागितामा) 'Tempus deliberandi चिन्तनका क्षणहरू' (१९९८) शीर्षकमा प्रकाशित छ।

चेर्काशिना लारिसा आन्द्रेएभ्ना (जन्मः २०.०८.१९४९, भोल्कोभ्स्क, बेलोरूस) – लेखिका, रूस लेखक सङ्घ र मस्को साहित्यकार संघकी सदस्य (१९८७ देखि)। विभिन्न पत्रपत्रिकाहरूमा कला र लोकसाहित्यसम्बन्धी लेख प्रकाशन (१९७० देखि)। रूसी विभूति अलेक्सान्द्र सेर्गेएभिच पुश्किनको कृतित्वविषयक अनुसन्धानमा संलग्न (१९८५ देखि) र पुश्किन, उनका पूर्वज र सन्ततिबारे तथा मान्छेका चारखुट्टे मित्रहरूको विषयमा 'सम्राट् एवं राष्ट्रपतिहरूका प्रियपात्रः पिटर प्रथमदेखि भ्लादिमिर पुटिनसम्म' लगायत १५ पुस्तकहरूकी लेखिका। यसका साथै विभिन्न पत्रपत्रिकाहरूमा पुश्किन वंशको इतिहास, महाकविका सन्ततिहरूको नियति, पुश्किनको कुलसित सम्बन्धित विरल वस्तुहरू तथा बसोबास गरिरहेका पारिवारिक किस्साकहानीबारे लेखहरू प्रकाशित छन्। विभिन्न देशहरूमा पुश्किनका वंशजहरूको प्रारब्धको विषयवस्तुमा आधारित सात चलचित्र तथा वृत्तचित्रको पटकथा लेखन (अखिल रसियाली राजकीय टेलिभिजन तथा रेडियो प्रसारण कम्पनी – 'भगतएरका', 'संस्कृति' टेलिभिजनबाट प्रसारित)। सन् २०१४ को मार्चमा किस्लोभोद्स्क नगरस्थित 'ब्लागोदात' ठेटरमा रूसी महाकविकी अर्धाङ्गिनीको प्रारब्धबारे लारिसा चेर्किशिनालिखित 'मेरी आराध्यदेवी' नाटकको प्रथम मञ्चन भएको थियो। लारिसा चेर्काशिनाका लागि

पुश्किनायण आनुवंसिकी विषय हो। आफ्ना पिता प्रसिद्ध वंशविद् आन्द्रेइ चेर्काशिनको सहभागितामा उनले रूसमा मात्र नभई संसारभरि नै ख्यातिप्राप्त 'अलेक्सान्द्र पुश्किनको सहस्त्राब्दीय वंशवृक्षः जरा र हाँगाहरू' पुस्तक लेखेकी थिइन् (लेखकद्वय नै 'सन्त अलेक्सान्द्र नेभ्स्की ऐतिहासिक-साहित्यक पुरस्कार, २०१०' विजेता)। 'पुश्किन वंशवृक्षको रहस्य' ('लाजुर' प्रकाशनामय) पुस्तकको लागि 'वर्षको उत्कृष्ट पुस्तक र प्रकाशनालय – २००७' पुरस्कार तथा 'पुश्किन र रोमानोभः युगको ऐनामा दुई महान् वंशहरू' ('भेचे' प्रकाशनालय) पुस्तकका लागि '२०११-२०१३ को उत्कृष्ट कृति' साहित्यक-सामाजिक पुरस्कार प्रदान गरिएको थियो। ग्रीसमा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय स्रष्टा महोत्सवको 'होमर पुरस्कार – २०१७' विजेता। रूस, जापान, डेन्मार्क, चेर्निगिरिया, क्युबा, फ्रान्स, माल्टा, आफिन, क्रिटमा आयोजित पुश्किन जयन्ती महोत्सव र सम्मेलनहरूका साथै मिखाइलोभ्स्की (पश्कोभ अञ्चल) मा सम्पन्न पुश्किन काव्य महोत्सव र सन् २००९ को जूनमा आयोजित अलेक्सान्द्र पुश्किनका वंशजहरूको प्रथम विश्व अधिवेशनमा सहभागिता। महाकविकी पत्नी र आराध्यदेवी नातालिया गोन्चारोभाको स्मृतिका साथै उनकै दैवी संरक्षिका स्वामिनी नातालियाको स्मृतिमा 'नातालिया दिवस' भनिने अखिल रसियाली उत्सवको आयोजना गर्नका लागि प्रेरणादातृ। रूसी महाकविको द्विशतवार्षिक जन्मजयन्ती समारोह-वर्ष सन् १९९९ मा 'रुसी संस्कृतिमा योगदानवापत्' पुश्किन स्वर्ण पदकबाट र सन् २००२ मा रूस दहास,घका राष्ट्रपति भ्लादिमिर पुटिनको आदेशानुसार राजकीय आभुषण 'पुश्किन पदक' बाट विभूषित। सन् २०१२ मा रूस महासंघको संस्कृतिमन्त्रीबाट उनले 'रूसी साहित्यको विकासमा योगदानका लागि र कैयौं वर्षदेखिको फलदायी क्रियाकलापका लागि कृतज्ञतापत्र' प्राप्त गरिन्।

हनुमानढोका दरबार
सङ्ग्रहालय

СОДЕРЖАНИЕ

В. Галечьян
Проект «Две столицы»
4

К. П. Шрестха
Две столицы в одной шкатулке
9

Часть первая

Кришна Пракаш ШРЕСТХА
МОНОЛОГ КАТМАНДУ
28

Динеш АДХИКАРИ
КАТМАНДУ:
СОВЕТЫ ИЗ ПОЧТОВОГО КОНВЕРТА
41

Чандра Кант АЧАРЬЯ
ОДИН ДЕНЬ В КАТМАНДУ
50

Прабха АЧАРЬЯ
ТОГДА ОНИ ИСПОЛЬЗОВАЛИ ТИШИНУ,
А СЕЙЧАС – ШУМ И ГАМ
62

विषयसूची

भालेरी गालेच्यान
परियोजना “दुई राजधानी”
५

कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ
एउटै बट्टामा दुई राजधानी
८

खण्ड एक

१ *कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ*
काठमाडौंको आत्मकथा
२०

२ *दिनेश अधिकारी*
काठमाडौः खामभित्रको प्रतिक्रिया
४०

३ *चन्द्रकान्त आचार्य*
काठमाडौंमा एक दिन
४६

४ *प्रभा आचार्य पहिले*
सुनसानको फाइदा, अहिले भिडको आड
५९

Банира ГИРИ
ДХАРАХАРА: ОКУТАН
ПЛОТНЫМ ПОКРЫВАЛОМ ТУМАНА
71

Ашеш МАЛЛА
КАТМАНДУ
77

Джиба ЛАМИЧХАНЕ
ДВА ЛИКА КАТМАНДУ
83

Бикрам СУББА
ДВА БЕРЕГА
91

Бал Гопал ШРЕСТХА
ЭТО КАТМАНДУ
93

Тедж Пракаш ШРЕСТХА
ИЗУМЛЕНИЕ ЖИВОЙ БОГИНИ
105

Часть вторая

Людмила ВЯЗМИТИНОВА
ДОРОГАЯ МОЯ СТОЛИЦА
112

Валерий ГАЛЕЧЬЯН
МИСТИКА ИСТОРИИ
122

५ *वानीरा गिरी*
धरहरा – बाक्लो कुहिरोको खास्टोभित्र
७०

६ *अशेष मल्ल*
काठमाडौं
७६

७ *जीवा लामिछाने*
त्यो काठमाडौं : यो काठमाडौं
७८

८ *विक्रम सुब्बा*
दुई किनारा
९०

९ *बालगोपाल श्रेष्ठ*
यो काठमाडौं
९२

१० *तेजप्रकाश श्रेष्ठ*
छक्क परिरहिन् द्यःमैजु
१०२

खण्ड दुई

१ *ल्युदमिला भ्याज्मितिनोभा*
मेरो राजधानी अति प्यारो
११७

२ *भासिली गालेच्यान*
इतिहासको रहस्य
१२३

Татьяна ВИНОГРАДОВА
СНЫ О СТАРОМ ДОМЕ
132

Умут КЕМЕЛЬБЕКОВА
ПОСЛЕДНИЙ ЧАС ПЕРЕД ЗАКАТОМ
150

Нелли КОПЕЙКИНА
ДЕЖАВЮ
166

Владислав ЛАРИН
ДВА ГОГОЛЯ
174

Александр ЛОЗОВОЙ
ПАЦИЕНТЫ
180

Татьяна МИХАЙЛОВСКАЯ
МОСКВА СНЕЖНАЯ
190

Андрей ЦУКАНОВ
НА МОСКВЕ
198

Лариса ЧЕРКАШИНА
ПЛАЧ ПО ПУШКИНСКОЙ МОСКВЕ
208

Об авторах
222, 230

३ *ताच्याना भिनोग्रादोभा*
पुरानो घरको सपना
१४१

४ *उमुत केमेल्बेकोभा*
सूर्यास्तपूर्वको अन्तिम घडी
१५८

५ *नेल्ली कोपेइकिना*
झझल्को
१६७

६ *भ्लादिस्लाभ लारिन*
दुईजना गोगोल
१७७

७ *अलेक्सान्द्र लोजोभोइ*
बिरामीहरू
१८५

८ *ताच्याना मिखाइलोभ्स्काया*
हिमाच्छादित मस्को
१९१

९ *आन्द्रेइ त्सुकानोभ*
मस्कोमा
१९९

१० *लरिसा चेर्काशिना*
पुश्किनेली मस्कोको सम्झना
२०८

स्रष्टा-परिचय
काठमाडौं मस्को
२१६. २४०

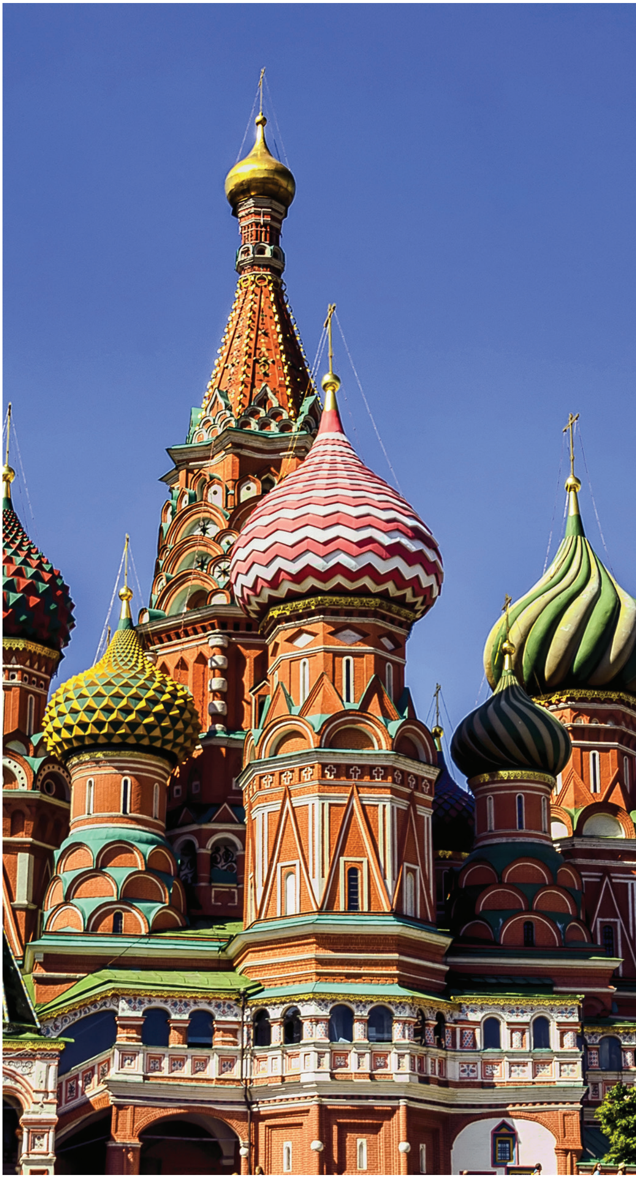

Литературно-художественное издание

Московский союз литераторов

ДВЕ СТОЛИЦЫ:
МОСКВА —КАТМАНДУ

Составители
Валерий Галечьян, Кришна Пракаш Шрестха,

Редактор Валерий Галечьян

Редактор перевода с русского языка
Тедж Пракаш Шрестха

Редакторы перевода с языка непали
Татьяна Виноградова, Людмила Вязмитинова,
Татьяна Михайловская

Дизайн, верстка Татьяна Виноградова

सङ्कलनकर्ताहरू
भालेरी गालेच्यान, कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ
सम्पादकहरू
भालेरी गालेच्यान, कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ
अनुवादक
कृष्णप्रकाश श्रेष्ठ
रूसी भाषाबाट अनुवादको सम्पादक
तेजप्रकाश श्रेष्ठ
नेपाली भाषाबाट अनुवादका सम्पादकहरू
ताच्याना भिनोग्रादोभा, ल्युदमिला भ्याज्मितिनोभा, ताच्याना मिखाइलोभ्स्काया
प्राविधिक सल्लाहकार
समन श्रेष्ठ
डिजाइन, कम्प्युटर-विन्यास
ताच्याना भिनोग्रादोभा

Московский союз литераторов, 125009, Москва,
ул. Б. Дмитровка, 5/6, стр. 8
+7 (495) 692-06-03
dmitrovka5@yandex.ru

подписано в печать 30.10.2020
Формат 84x108 1/32 гарнитура *Georgia*

Отпечатано в ПАО «Т8 Издательские Технологии»
109316, Москва, Волгоградский проспект, д. 42, корп. 5 к. 6
www.t8group.ru contact@t8group.ru тел.: +7 (495) 221 89 80

ISBN 978-5-6043226-3-5

9 785604 322635